CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पु. नं. ५५४६
सर्वसुलभ

वाल्मीकि कलाम्पस
पुस्तकालय

वक्तव्य

माध्यमिक स्तर के 'छात्र-छात्राओं' को हिन्दी कहानी के विकास-क्रम का परिचय रुचिपूर्वक प्राप्त हो सके, इसके लिए यह आवश्यक है कि उन्हें एक ऐसा संकलन उपलब्ध हो जो हिन्दी-कहानी के आरम्भिक, [illegible] और वर्तमानकाल का प्रतिनिधित्व करता हो। जिसमें प्रसिद्ध लेखकों की कृतियों के माध्यम से कहानी कला के विकासशील चरण-चिन्हे का प्रतिबिम्ब हो। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये 'कथा-भारती' एक विनम्र प्रयास है।

हिन्दी ने गत दो शताब्दियों में समृद्धि के जिन नए कीर्तिस्तम्भा का स्पर्श किया है, वे उसके अपने इतिहास के स्वर्णांकित अध्याय बन गए हैं। इस उल्लेखनीय विस्तार में अनेक प्रतिभाशाली लेखकों ने हिन्दी-कहानी के भण्डार को अक्षय साहित्य-श्रृंगार से आकर्षक बनाया है। पर, उस समस्त रूप-राशि का परिचय एक लघु संकलन से ही तो प्राप्त नहीं किया जा सकता, उसके लिए चाहिए एक बृहद् ग्रन्थ। फिर भी कथा-भारती' का महत्त्व इसी में है कि प्रवर सम्पादक ने जो स्वयं हिन्दी के सुविख्यात कथा-लेखक और उपन्यासकार हैं, ऐसे लेखकों और उनकी कृतियों को चुना है, जिनसे कहानी-कला के सर्वांगीण विकास-क्रम का कोई भी पहलू छूटा नहीं है। नई कहानी' को भी इसमें मान्यता प्राप्त हुई है—और इसीलिए यह संकलन अपने आप में संपूर्ण अद्यतन और अद्वितीय है।

कहानियों के [illegible] में जहां एक ओर कला-पक्ष और उ[illegible] के प्रतिनिधि होकर [illegible] का गान गा[illegible] [illegible] इस दायित्व का भी निवाह हुआ है [illegible] प्रभाव पड़े, वे [illegible]हित्य व समाज के [illegible] अपनी एक दिशा

—प्रकाश

---

†Quanb le present ne nous oftre p/
crions parl'oenvre d'art.

*शुधु अकारण पुलके
क्षणिकेर गारे आजि प्राण
क्षणिक दिनेर आलोके

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कथानुक्रम

कथा-रहस्य		पृष्ठ-संख्या क-द
१. बड़े घर की बेटी	श्री प्रेमचन्द	१
२. छोटा जादूगर	श्री जयशंकर प्रसाद	१३
३. उसने कहा था	पं० चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी'	२०
४. आशीर्वाद	श्री सुदर्शन	३६
५. आत्म-शिक्षण	श्री जैनेन्द्रकुमार जैन	५०
६. मेरा वतन	श्री विष्णु प्रभाकर	६३
७. मास्टर साहब	श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार	७६
८. लछमा	श्रीमती महादेवी वर्मा	८८
९. प्रायश्चित्त	श्री भगवतीचरण वर्मा	१०२
१०. समर्पण	श्री भगवतीप्रसाद वाजपेयी	१११
११. मूर्ख क्रोध	श्री यशपाल	१२१
१२. गूंगे	श्री रांगेय राघव	१२७
१३. गीली मिट्टी	श्री अमृतराय	१३६
१४. जना	श्री राजेन्द्र शर्मा	१४३
१५. कस्बे का आदमी	श्री कमलेश्वर	१५३

Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पुस्तक नम्बर ५५४६

कथा-रहस्य

०१.

कला का उद्देश्य

भारतीय भाषाओं में सर्वाधिक पुरातन वेद-भाषा है। बहुत ध्यान से खोजने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि ज्ञान का प्रकाश सर्व-प्रथम वैदिक युग में ही फैला और तभी मनुष्य अपने आपको लेकर इस जगत् और इसके स्रष्टा को समझने और उसकी चर्चा करने में समर्थ हुआ।

कला के प्रयोजन को लेकर कलाविद् लोग, समय-समय पर, बहुतेरे विवाद उठाते रहे हैं। भविष्य में भी वे सदा उठाते रहेंगे। पर इस बात में सभी एकमत दिखाई पड़ते हैं कि जीवन में जो महत्त्वाकांक्षाएं और वृहत्तर प्रेरणाएं अविकसित रह जाती हैं, उनको उभार कर मूर्त रूप देना ही कला का उद्देश्य है। अर्थात् जब वर्तमान हमको कुछ नहीं दे पाता, तब हम कला के द्वारा उसकी सृष्टि किंवा पूर्ति कर लेते हैं।†—वैग्नर।

ध्यान से देखा जाय तो प्रतीत होगा कि युग का क्षण-क्षण यद्यपि अनिश्चित और अकल्पित है, किन्तु यह कितनी विचित्र बात है कि वह अपने आप में निश्चित, स्थिर और परिपूर्ण है। प्रत्येक पल यद्यपि पल-भर में ही समाप्त हो रहा है, फिर भी वह अपने आपमें सर्वथा परिपूर्ण होता है। तभी तो क्षण के महत्त्व पर मुग्ध होकर कवि ठाकुर ने कह दिया—ओ रे प्राण, तू दिन के इस क्षणिक प्रकाश में अकारण पुलकित होकर क्षणिक का गान गा। *

---

†Quanb le present ne nous oftre plus rien, nous crions parl'oenvre d'art.

*शुधु अकारण पुलके
क्षणिकेर गारे आजि प्राण
क्षणिक दिनेर आलोके

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इस प्रकार हमारे इस जीवन का क्षण-क्षण अपने आप में पूर्ण होकर अपना जो एक इतिहास छोड़ जाता है, उसकी भी एक कहानी होती है। यहां कुछ ऐसा प्रतीत होता है मानो वस्तु-स्थिति की पूर्णता ही कहानी की सृष्टि करती है। नीरवता जब भंग होती है, तब रव का भान होता है। यहां रव सृष्टि है। हम बात तभी करते हैं, जब उस बात की पूर्वा निष्पन्न हो जाती है। यहां भी बात सृष्टि की स्थिति में है। जीवन का एक व्यापार सम्पन्न होकर अपना एक इतिहास छोड़ जाता है। जो स्थितियां, व्यापार और कार्य-कलाप अपना कुछ छोड़ नहीं जाते, वे प्रायः निष्प्राण होते हैं। तभी तो जीवन जहां समाप्त होता है, कला वहीं प्रारम्भ होती है।†

2 कथा के मूलतत्त्व

हम प्रायः अनुभव करते हैं कि जीवन सदा एकरस नहीं रहता। कभी-न-कभी उसमें अस्थिरता आ ही जाती है; क्योंकि एकरसता उसे जड़ बना देती है। स्थिरता न गति का चिन्ह है, न विकास का। जहां चेतनता होगी, वहां अस्थिरता भी समय-समय पर आती रहेगी। हम यह भी अनुभव करते हैं कि जीवन सदा शान्त नहीं रहता। उल्लास, आवेग, क्षोभ, उन्माद और विस्फूर्जन आदि असामान्य वृत्तियों में वह अपना रूप बदलता रहता है। इसीलिए उसके जो व्यापार हमें प्रायः अस्वीकार्य होते हैं, वे ही कथनीय हुआ करते हैं। जो स्थितियां हमें शान्त और मूक बनाये रखती हैं, वे साधारणतः शब्दों का रूप नहीं ग्रहण कर पातीं। प्रायः हम उन्हें अपनी चेष्टाओं से ही व्यक्त कर देते हैं। पर जो मनोभाव हमारी चेष्टाओं से भी व्यक्त नहीं हो पाते, अथवा जिन्हें चेष्टाओं से व्यक्त करने में हमें सन्तोष नहीं होता, उन्हीं को हम शब्दों में व्यक्त करते हैं। इस प्रकार ध्यान से देखें, तो हम इस परिणाम पर पहुंचते हैं कि शब्द-सृष्टि एक प्रकार के असंतोष से होती है। कला की सृष्टि में भी हम यही बात पाते हैं।

---

† L'art commence o'ula vie cesse.

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कहानी की सृष्टि भी इसी प्रकार होती है। वेद, उपनिषद् और ब्राह्मण-ग्रन्थों में जो आख्यान मिलते हैं, वे मूल रूप में ऐसे उदाहरण हैं, जो दृष्टान्त के रूप में प्रस्तुत किये गए हैं। इस जगत, सृष्टि और समाज की मंगलकामना का हेतु लेकर, वे हमारे समक्ष रखे जाते हैं—वे हमारे असंतोष और विद्रोह के लिए प्रकारान्तर से एक समाधान ही उपस्थित करते हैं। कला और साहित्य को यदि हम उपयोगिता की दृष्टि से देखें, तो यही समाधान व्यक्ति और समाज के लिए शान्ति और मंगल की सृष्टि करता रहता है।

यहां प्रश्न उठ सकता है कि कला को हम समाधान में कैसे बांध सकते हैं; क्योंकि उसका एक रूप विध्वंसात्मक भी तो होता है। माना कि होता है। पर जब कला विध्वंसात्मक हो जाती है; तब भी उसकी अन्तिम प्रयोजन लय न होकर सृष्टि रहता है। इसके सिवा लय और सृष्टि दोनों बहुत निकटवर्ती स्थितियां हैं, इतनी कि कभी-कभी तो वे परस्पर सम्बद्ध-सी जान पड़ती हैं। कवि और विचारक उमरख़य्याम का कथन है कि जीवन का लक्ष्य अगर इष्ट की प्राप्ति है तो प्राप्ति का अन्तिम लक्ष्य है इष्ट को भी आत्मसात् करके खो देना।

कथा की उत्पत्ति

आपने अभी देखा कि सृष्टि के मूल में लय और लय के मूल में सृष्टि का चक्र चलता रहता है। आपने अनुभव किया कि मनुष्य आशा पर जीवित रहता है और आशा एक काल्पनिक वृत्ति है। जो कल्पना प्रतीक्षा-मयी होती है, वही सुखद और प्रीतिकर होती है; किन्तु जीवन का सत्य कल्पना से दूर दूरतर रहता है। एक प्रकार से वह निराशा है और निराशा में दुःख होता है। मानव इसी सुख-दुःख, आशा-निराशा, सत्य और कल्पना के बीच उलझा रहता है। रात और दिन का अन्तर जैसा निश्चित और प्रत्यक्ष है, सत्य और कल्पना के बीच में मनुष्य का उलझा रहना भी वैसा ही सत्य और प्रत्यक्ष है। जीवन और जगत् की यह सृष्टि अपने निवारण और समाधान रूप में यद्यपि हमारे सामने रहती है तथापि आशा और कल्पना, भावी सौख्य और विलास की लोल लिप्सा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

में हम सदा भटकते रहते हैं। ज्ञान और विवेक को अस्थिर भाव से धारण करते हुए भी हम चिन्तन और विवशता से जड़ीभूत हो-होकर नित्य भूलें करते रहते हैं। माना कि हमारा सारा प्रयत्न भ्रम से परे बनने और रहने की दिशा में ही संलग्न रहता है, किन्तु जगत् और सृष्टि की अमिट और अकल्पित सत्ता के समक्ष हम सदा विवश और असहाय ही बने रहते हैं। सब से अधिक दयनीय स्थिति तब होती है, जब लाख प्रयत्न करने पर भी अन्त में हम असफल हो जाते हैं। ध्यान से देखें, तो कहानी मनुष्य की इसी असफलता का इतिहास होती है।

यहां हमसे कोई यह भी कह सकता है कि यह तो एकांगी दृष्टि है। तब हमें विवश होकर कहना पड़ेगा कि आप अपने आपको ही ध्यान से देखें, तो प्रतीत होगा कि यदि आपको कोई अभाव न हो, कहीं से भी कोई अपूर्णता आपके जीवन में न रहे, जगत् और समाज के प्रति आपको कहीं कोई उपालम्भ न रह जाय, तो आपके जीवन में क्या विशेषता होगी ? जीवन का अस्तित्व तो तभी तक रहता है, जब तक वह अपूर्ण होता है, क्योंकि पूर्ण हो जाने पर तो मनुष्य जीवन से परे हो जाता है। जीवन का अर्थ ही है ऐसा जीव, जिसमें 'न' संयुक्त है। और 'न' अभाववाचक शब्द है। यदि मनुष्य के जीवन में कोई अभाव न रहे, तो कहने के लिए उसके पास क्या रह जायेगा ? अर्थात् जब तक मनुष्य को कुछ कहना न होगा, तब तक कथा की उत्पत्ति भी न होगी। हमारे जीवन में जब कोई अभाव शेष रह जाता है, तभी हम कुछ कहते हैं। अभाव और उपालम्भ न हो, तो मनुष्य कहेगा क्या ? बौद्ध दर्शन का मत है कि दुःख अनिवार्य है। इस प्रकार कहानी की सृष्टि का मूल आधार अभाव और दुःख है। तभी तो विश्व-साहित्य की अमर कहानियां दुःखान्त अभिव्यक्तियों से ओत-प्रोत हैं।

यहां सहज ही यह प्रश्न उठ सकता है कि जिन कथाओं में जीवन का दुःखमय इतिहास नहीं है, क्या वे यथार्थ से दूर हैं ? ऐसी बात नहीं है। वास्तव में सुख और दुःख एक ओर से यदि सापेक्ष हैं, तो दूसरी ओर वे अन्योन्याश्रित भी हैं। कला में भावना और विवेक का समन्वय देखकर हम जिस अप्रतिम सौन्दर्य से अभिभूत हो उठते हैं, वह वास्तव में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

समस्त सुख और दुःख को प्रकारान्तर से एक ही रूप में देखता है। तभी तो करुण भी एक रस माना गया। जैसे दुःख में आंसू रोके नहीं रुकते वैसे ही सौख्य तथा हास के अतिरेक में। कहानी में हम इसी विभेद और रहस्य का उद्घाटन पाते हैं।

इसके सिवा एक अन्य दृष्टिकोण भी है। जीवन का दुःख वास्तव में तभी तक प्रतीत होता है, जब तक वह जीवन में घुला-मिला रहता है। वर्तमान का जो दुःख परिपूर्ण बनकर अतीत बन जाता है, उसका विवरण ही एक दिन कथा का रूप धारण कर लेता है। फिर कथा का दुःख कोरा दुःख ही नहीं होता। जब तक वह जीवन का दुःख था, तब तक व्यक्ति-मात्र का था। कथा का रूप प्राप्त कर वह समष्टि में आकर इतना बंट जाता है कि सब का बन जाता है। साधारणीकरण के माध्यम से मनुष्य-मात्र उसमें अपना प्रतिबिम्ब देखता है।

इस प्रकार कथा में वर्णित दुःख पाठकों के लिए एक समाधान ही नहीं, संतोष और सान्त्वना-गर्भित शान्ति की एक सांस भी होता है। हमारे जीवन में वह एक समन्वय स्थापित करता और उसे गतिमय, आनन्दमय बनाने में सहायक होता है। इसीलिए तो हम कला में सदा एक मनोरंजन पाते हैं।

५ कथा की पृष्ठभूमि

अतः कहानी उस प्रकार की बात है, जिसमें दुःख ही नहीं, जीवन-सौख्य की अभिव्यंजना का एक संकेत भी रहता है। सामाजिक प्राणी होने के कारण मनुष्य अपनी बात दूसरे से कहे बिना रह नहीं सकता। वह दूसरे से अपने मन की ग्रन्थियां खोलता और भेदाभेद की बातें भी बतलाता रहता है। जो लोग बतला नहीं पाते, वे उसे अपने आचार-व्यवहार में व्यक्त करते हैं। कथन के रूप में व्यक्त करने की विधा का एक नाम संवाद है। दूसरा व्यक्ति जब उन्हीं बातों को संवाद के रूप में अन्य व्यक्तियों से कह देता है, तभी वह कथा का रूप धारण कर लेती है। साहित्य में आकर वही बातें, वही वस्तु लोकोत्तर आनन्ददायिनी बन जाती हैं। उनमें अनेक शैलियों, भेदों और रूपों की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रतिष्ठा कर ली जाती है—यहां तक कि हम उनमें कला और सौन्दर्य की अद्भुत झलक देख-देखकर चकित-विस्मित हो उठते हैं।

आदि कहानी

आदि कहानी कौन सी थी, निश्चित रूप से यह कहना कठिन है। इस सम्बन्ध में हम इतना ही कह सकते हैं कि उसका प्रथम रूप एक संवाद ही रहा होगा। आज भी हम देखते हैं कि कहानी अपनी मूल रूपरेखा में एक प्रकार से संवाद ही बनी हुई है। साधारण वार्तालाप में जब कोई किसी घटना की बात बतलाता है, तो वह उसकी पूर्वा प्रायः फिर से दुहराया नहीं करता। क्या हुआ, बस इतना बतला देता है। तात्पर्य यह है कि जिससे बात कही जाती है उसे पहले से उस व्यक्ति के विषय में सम्यक् ज्ञान बना रहता है, जिससे उस घटना का सम्बन्ध रहता है। तभी तो केवल एक वाक्य कहकर वह उपस्थित व्यक्ति और समाज को बात की बात में, अभिभूत कर देता है। इस प्रकार संवाद का रूप केवल उस बात को दिया जाता है जो केवल एक-दो वाक्यों में कह दी जाती है। स्पष्ट है कि व्यक्ति का इतिहास पहले से निर्मित रहता है। अन्त की घटना मात्र उस समस्त इतिहास पर अपनी छाप डालकर उसे आत्मसात् कर लेती है। कहानी की पृष्ठभूमि में प्रकारान्तर से व्यक्ति और समाज का इतिहास ही रहता है। अन्तिम घटना जो संवाद के रूप में आती है, वही चरम परिणति बन जाती है। इस प्रकार कथानक व्यक्ति का इतिहास होता है, घटना का संवाद उसकी चरम परिणति।

कहानी और घटना

पहले कहानी घटना तक ही सीमित मानी जाती थी, बाद में वह स्थूल जगत् की घटना-मात्र न रह कर आत्मलोक की घटना बन गयी। तभी तो मनोविश्लेषणात्मक कहानी में केवल उन स्थितियों, प्रवृत्तियों और उलझनों का चित्रण रहता है, जो मनुष्य के अन्तर्पट पर केवल कल्पना-लोक में दृष्टिगत होती हैं।

आदिम कहानी का इस कल्पना-लोक से कोई सम्बन्ध नहीं था। उस

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

समय कहानी में सच्ची घटनाओं का ही वर्णन किया जाता था। मनुष्य के विकास के साथ-ही-साथ जैसे-जैसे समाज और उसका इतिहास बनता गया, वैसे-वैसे सच्ची घटनाओं की रूप-रेखा, चेष्टा, लक्ष्य तथा भावना के आधारों पर काल्पनिक कथाओं की भी सृष्टि होने लगी। उत्तरोत्तर विकास होते-होते हम आज इस स्थिति में आ पहुंचे हैं कि कहानी सत्य घटना का वर्णन न रहकर उसकी कल्पना बन गयी है।

कहानी बहुत व्यापक शब्द है। अंग्रेजी में उसे 'स्टोरी' मात्र न कह कर शार्ट स्टोरी कहते हैं। इसी के अनुकरण में मराठी भाषा में 'लघु-कथा' कहा जाता है। बंगभाषा में कहानी के लिये 'गल्प' शब्द आता है। पहले हिन्दी में भी कहानी के स्थान पर गल्प शब्द ही प्रचलित था। यह 'गल्प' शब्द संस्कृत भाषा के 'जल्प' शब्द का रूपान्तर है। और जल्प शब्द का अर्थ है....कुछ-न-कुछ कहना, बकना, वार्तालाप करना।

कहानी और उपन्यास

कहानी में आख्यान का जो भाव है, वह तो हो गया उपन्यास, संक्षिप्त रूप में वह कहानी कहलायी। किन्तु यह भेद केवल रूप का है। कहानी और उपन्यास का मुख्य भेद कुछ और है। उपन्यास में जीवन का सम्पूर्ण चित्रण रहता है। कहानी में उसके अंग-विशेष का। उपन्यास यदि पूरा कुटुम्ब है, तो कहानी उसका एक व्यक्ति। व्यक्ति का इतिहास उपन्यास है, तो कहानी उस इतिहास की एक घटना। दोनों प्रकार के इतिहासों में व्यक्ति ही प्रधान रहता है। उसी को लेकर कहानी जन्म लेती है, उसी के कुटुम्ब को लेकर उपन्यास। जब उपन्यास केवल व्यक्ति को लेकर तैयार होता है, तब उसमें उसके जीवन की एक पूर्ण झांकी होती है। कहानी में उसका अंश विशेष रहता है, यद्यपि वह भी अपने आप में पूर्ण होता है।

कहानी के अंग

कहानी को साधारणतया निम्नांकित सात भागों में बांटा जा सकता है:—

१. प्रस्तावना

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

२. मूल विचार (थीम)
३. वस्तु (प्लाट)
४. चरित्र-सृष्टि
५. वार्तालाप
६. वातावरण
७. चरम परिणति (क्लाइमेक्स)

'प्रस्तावना' कथा का वह भाग है, जिसकी भूमि पर घटना, दृश्य और वस्तु का भवन खड़ा किया जाता है। 'मूल विचार' उस मन्तव्य को कहते हैं, जो सम्पूर्ण कथा में प्राणरूप में विद्यमान रहता है। 'प्लाट' उन अवयवों के मिश्रित रूप का नाम है, जिस पर कथा का ढांचा खड़ा होता है। 'चरित्र-सृष्टि' का अभिप्राय है कथा के भीतर एक ऐसे चरित्र की सृष्टि जिस पर सारी कथा आधारित होती है। 'वार्तालाप' कथा के पात्रों को साकार तथा सजीव बनाने के लिए रखा जाता है। 'वातावरण' कथा के चतुर्दिक् छाये हुए स्थान, काल और कार्य-कलाप के मिश्रित रूप को कहते हैं। 'चरम परिणति' कथा के उस रहस्योद्घाटन, मर्मस्पर्श अथवा आघात की सृष्टि का नाम है, जो उसमें एक विस्मय, भावनात्मक सौन्दर्य और चमत्कार उपस्थित करके उसे सम्पूर्ण करती है।

हिन्दी-कहानी के आदिकाल में प्रस्तावना कथा के पूर्व भाग में रहा करती थी। अब वह कभी वार्तालाप में आती है, कभी कथा-नायक के आत्मचिन्तन में। पहले वह प्रत्यक्ष रूप में रहती थी, अब उसका अप्रत्यक्ष रहना ही एक गुण माना जाता है। मूल विचार को कुछ लोग उद्देश्य भी कहते हैं। चरित्र-सृष्टि से उसका घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। प्रायः वार्तालाप में उसका स्पष्टीकरण भी होता है। ऐसा भी हो सकता है कि वह चरम परिणति के द्वारा प्रकट हो! वस्तु एक सूत्र है, जो कथा के सारे अंगों और उपांगों को बांध कर रखता है। चरित्र-सृष्टि और मूल विचार का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। मूल विचार की सफलता चरित्र-सृष्टि पर निर्भर करती है और चरित्र-सृष्टि की मूल विचार पर। वार्तालाप चरित्र को सप्राण और स्वाभाविक बनाता है। वह समय, स्थल और घटना के वर्णन से प्रस्तावना की रक्षा करता

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

है। वातावरण चरम परिणति को बांधता है, उसका एक अंग स्थानीय रंग (लोकल कलर) भी होता है। कथा को भावनात्मक बनाने में वह विशेष सहायक होता है। चरम परिणति में कथा के केन्द्रीय भाव, गठन और उसकी संक्षिप्तता का अन्तिम क्षण, उद्देश्य और प्राण होता है।

प्रणालियाँ

कहानी प्रायः निम्नलिखित प्रणालियों में लिखी जाती है—

१. **ऐतिहासिक प्रणाली**—इसमें वर्णन की प्रधानता रहती है। आदि से अन्त तक वह ऐसी प्रतीत होती है, मानो किसी के जीवन का इतिहास हो।

२. **मनोविश्लेषणात्मक प्रणाली**—इसमें जीवन और उसकी गति-विधि का सूक्ष्म अध्ययन उपस्थित किया जाता है। घटनाएं इसमें स्थूल जगत् में न होकर अन्तर्द्वन्द्व के रूप में आती हैं। हिन्दी कहानी के घनञ्जय श्री प्रेमचन्द का मत है :—

"कहानी अब केवल एक प्रसंग का, आत्मा की एक झलक का सजीव और स्पष्ट चित्रण है। अब उसमें व्याख्या का अंश कम ; संवेदना का अधिक रहता है। उसकी शैली भी अब अधिक प्रवाहमयी हो गयी है। अब कहानी का मूल उसके घटना-विन्यास से नहीं लगाते। हम चाहते हैं, पात्रों की मनोगति स्वयं घटनाओं की सृष्टि करे। खुलासा यह कि आधुनिक गल्प का आधार अब घटना नहीं, मनोवैज्ञानिक अनुभूति है।"

३. **कथोपकथन प्रणाली**—इसमें कहानी के सारे लक्षण केवल वार्तालाप में ही लक्षित होते हैं। पत्र-प्रणाली वास्तव में उस प्रणाली का रूपान्तर है। कथोपकथन में दो पात्र वार्तालाप करते हैं, पत्र-प्रणाली में वे बात न करके पत्र लिखते हैं।

४. **डायरी प्रणाली**—लेखक इसे नायक की स्मृतियों के रूप में लिखता है। कुछ दिनों की बातें, प्रभावात्मक टिप्पणियां अथवा घटन मिलकर एक कहानी बन जाती हैं। कुछ लोग इसे आत्मकथा-प्रणा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भी कहते हैं। कथोपकथन प्रणाली से इसमें भेद केवल इतना रहता है कि वह कथन-उपकथन दोनों प्रस्तुत करती है, पर इसमें केवल कथन रहता है। वैसे यह भी एक तरह से ऐतिहासिक प्रणाली का ही रूपान्तर है।

५. संलाप प्रणाली—इसमें कहानी केवल एक कथन में आ जाती है। सब मिलकर यह एक भावनात्मक प्रलाप होता है। उद्वेलित मन के छाया-चित्रों से कहानी की सृष्टि होती है।

ध्यान दे देखें तो यह प्रणाली भी वास्तव में डायरी प्रणाली का रूपान्तर प्रतीत होती है। डायरी को कथा-नायक लिखता है, इसमें उसका आत्म-चिन्तन या स्वगत भाषण रहता है।

अब इस स्थल पर यह भी जान लेना आवश्यक है कि कहानी में केन्द्रीय भाव (कंसेंट्रेशन), एकता (यूनिटी) और संक्षिप्तता (ब्रेविटी) क्या है।

प्लाट एक फैली बिखरी हुई चौरस चीज है। लघु-कथा के लिए उसे चारों ओर से समेटना पड़ता है। यहां तक कि वह एक स्थल पर पहुंच कर केन्द्रित हो जाती है। इसी गुण को केन्द्रीय भाव कहते हैं।

कथा में कुछ बातें बिखरी हुई भी होती हैं। कहीं वे परस्पर ऐसी विरोधिनी भी हो सकती हैं कि मिलाये बिना न मिलें। तब उन्हें शृंखलित करना होता है। इसी मेल, लय, गठन अथवा 'हार्मनी' को एकता कहते हैं। कथा में यह एकता समय, स्थल और घटना से सम्बद्ध मानी जाती है।

संक्षिप्तता आज की लघु-कथा का सब से बड़ा गुण है। अगर कहानी इतनी ढीली है कि उससे एक आध पैराग्राफ अथवा कुछ वाक्य निकाल दिये जाएं, तो भी उसका अन्तिम प्रवाह ज्यों-का-त्यों रहे, तो समझना चाहिये कि इस कहानी में संक्षिप्तता का गुण नहीं है। इसलिये पश्चिम में संक्षिप्तता पर अत्यधिक ध्यान रक्खा जाता है। इस विषय में प्रतियोगिता भी चलती है। देखा जाता है कि पढ़ने में कम-से-कम समय लेने वाली कहानी कितने महत्त्व की है। ऐसी भी कहानियां लखी जाती हैं, जो पांच मिनट में पढी जा सकती हैं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

किन्तु ये समस्त प्रणालियां धीरे-धीरे विकसित हुई हैं। ज्यों-ज्यों नवीन प्रतिभाएं क्षेत्र में आती गयीं, त्यों-त्यों उन प्रणालियों की उत्पत्ति होती गयी। अभिप्राय यह कि कहानी पहले लिखी गयी, कालान्तर में जब उसका अनुकरण होने लगा, तब समीक्षकों ने उसमें एक प्रणाली का आभास देखकर, अनुसंधान के आधार पर, उसे एक प्रणाली की मान्यता दे दी।

कल्पना के चरण कभी स्थिर नहीं रहते। प्रतिभा की नवः-नव ज्योति के उदय की सम्भावना सदा बनी रहती है। ऐसा भी दिन आ सकता है कि कोई नया कलाकार इन प्रणालियों का अवलम्बन किंवा अनुसरण किये बिना ही कोई ऐसी अद्भुत रचना प्रस्तुत कर दे कि लाख विरोध और किन्तु-परन्तु के बावजूद अन्त में साहित्य-जगत् की मान्यता उसे मिल ही जाय। अवसर आने पर जो मुसकराता हुआ कह दे—मैं किसी विशेष प्रणाली का दास नहीं। मेरी रचना स्वतः एक नयी प्रणाली को जन्म देने की सामर्थ्य रखती है। जीवन में कभी-कभी ऐसा भी देखने में आता है कि हम जहां से चलते हैं, अन्त में घूम-फिर कर वहीं जा पहुंचते हैं। अतः ऐसा भी हो सकता है कि कहानी का अन्त पहले बता दिया जाय। फिर उसका रहस्य धीरे-धीरे खोला जाय। ऐसी भी कहानी हो सकती है, जिसके अन्त की कल्पनाएं अनेक हों। इसी प्रकार और भी कल्पनाएं की जा सकती हैं।

हिन्दी कहानी की जन्म-कथा

पुरातन काल में सब से पहले भारतीय साहित्य में ही कहानी का जन्म हुआ। ऋग्वेद, उपनिषद्, सांख्य, पंचतन्त्र, नन्दीसूत्र तथा जातकों में कथा-साहित्य भरा पड़ा है। नैतिक तथा धार्मिक सिद्धान्तों का प्रचार करने के लिए कथा के रूप में जो उदाहरण काम में लाये जाते हैं, वे दृष्टान्त कहलाते थे। उनमें मुख्यतया सत्य का आधार रहता था। तदनन्तर कुछ उदाहरण कल्पना के आधार पर बनाये जाने लगे; वे उपाख्यान कहलाये।

ग्यारहवीं शताब्दी से पहले 'बृहत्कथा मञ्जरी' प्रकाशित हो चुकी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

थी। तदनन्तर 'कथा-सरित्सागर' की रचना हुई। चौदहवीं शताब्दी से पूर्व 'हितोपदेश' की रचना हुई। 'सिंहासन द्वात्रिंशत्पुत्तलिका' और 'दश-कुमार चरित' संस्कृत-साहित्य के प्रामाणिक कथा-ग्रन्थ हैं। फारस की 'सिन्दबाद जहाजी' की कथा हमारी 'विन्दक जातक कथा' पर आधारित है। 'सहस्र रजनी चरित्र' का आधार 'वृहत्कथा' है।

चौदहवीं शताब्दी के बाद हमारे यहां कथा-साहित्य की प्रगति रुक गई। हिन्दी में जो कहानियां आईं, वे पहले पहल संस्कृत से आईं। हिन्दी की पहली कहानी इंशा अल्ला खां लिखित 'रानी केतकी की कहानी' है। इसके बाद उन्नीसवीं सदी के तृतीय चरण में राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द ने 'राजा भोज का सपना' लिखा। चतुर्थ चरण में भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने एक कहानी 'कुछ आप बीती कुछ जग बीती' लिखी। पर उनकी यह कहानी अधूरी ही रह गई।

उन्नीसवीं शताब्दी में फ्रेंच भाषा में कथा-साहित्य का अच्छा विकास हुआ। वोल्तेयर, अलैक्जेंदर द्यूमा, बालजक, एमिल जोला, तथा गी-द-मोपासां उस युग के प्रमुख कथाकार थे। रूसी कथा साहित्य का विकास कुछ बाद में हुआ। तुर्गनेव, एण्टन चेख़व तथा मेक्सिम गोर्की ने रूसी साहित्य में अमर कथाओं की सृष्टि की। टाल्स्टाय तथा डोस्टोवस्की ने उपन्यास लेखन में अतुलनीय यश प्राप्त किया। कहानियां यद्यपि थोड़ी-सी टाल्स्टाय ने भी लिखी हैं, पर कला की अपेक्षा उनमें लोकहित का प्रचार-भाग प्रमुख है। डोस्टोवस्की मनोवैज्ञानिक उपन्यास-लेखकों में आज भी अग्रणी हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी में जब योरोप में कहानी का पूर्ण विकास हो रहा था, हिन्दी में आधुनिक कहानी अभी जन्म भी नहीं ले पाई थी। बीसवीं सदी के प्रारम्भ में आधुनिक कहानी का परिचय बंग भाषा और योरोपियन भाषाओं की कहानियों के अंग्रेजी अनुवाद द्वारा प्राप्त हुआ। पंडित किशोरीलाल गोस्वामी तथा बाबू गिरिजाकुमार घोष ने कुछ अच्छी कहानियां लिखीं। परन्तु अब भी आधुनिक कहानी हमारे यहां मौलिक रूप में नहीं आ सकी थी। पर उन दिनों उर्दू में स्व० प्रेमचन्दजी नवाबराय के नाम से कलात्मक कहानियां लिख रहे थे।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सन् १९१० तक यही दशा चली। इसके थोड़े ही अन्तर से 'कौशिक' जी और 'प्रसाद' जी मौलिक कथाकार के रूप में प्रतिष्ठित हुए। तदनन्तर श्री प्रेमचन्द, पण्डित ज्वालादत्त शर्मा तथा श्री सुदर्शन जी ने भी हिन्दी-कहानी क्षेत्र में पदार्पण किया।

जन्म-काल के आदर्श

जिन आदर्शों से प्रेरित होकर हिन्दी-कहानी की सृष्टि हुई, वे आदर्श थे, बुराइयों के लिए दण्ड और सत्कर्मों के लिए पुरस्कार। इस तरह आदि-काल के हमारे कहानीकार कलाकार का नहीं, वरन् एक प्रचारक का कार्य करते रहे। समाज का सुधार उनका एकमात्र लक्ष्य रहा। वे प्रायः एक श्रेणी का चित्रण करते रहे, जीवनव्यापी व्यक्तित्व का नहीं। चरित्र-सृष्टि की ओर उन्होंने नहीं देखा। अनेक लेखकों ने प्रायः एक ही प्रकार का समाज लिया, एक ही प्रकार की अनुभूतियाँ उन्होंने साहित्य को दीं। प्रायः एक ही तरह के चरित्र वे ग्रहण करते रहे। इसका फल यह हुआ कि अपने कलाकार के व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा सर्वथा पृथक् रूप से, वे नहीं कर सके। न तो वे सर्वथा मौलिक चरित्र-सृष्टि कर सके, न सजीवता के सौन्दर्य का निर्माण। मानव प्रकृति को न देखकर देखा उन्होंने समाज के वर्ग-विशेष के हित को। जीवन के अक्षय तत्त्व की व्याख्या न करके उन्होंने रूढ़िवाद-गर्भित जीवन का चित्रण किया।

आज की कहानी उस युग को स्पष्ट रूप से पार करती हुई जान पड़ती है। आज का यथार्थवादी कलाकार प्रकृति को कठोर और निर्मम देखता है। सत्कर्मों के लिये हमको सदा पुरस्कार ही नहीं मिलता, न दुष्कर्मों के लिए सदा दण्ड ही; वह जीवन के इस कठोर सत्य की व्याख्या करता है। जीवन में जो नग्न तथा मूर्त सत्य है, वह उसका तत्त्वदर्शी है। पुण्य तथा सत्कर्म के लिए उसकी कला में कोई भावुकतापूर्ण प्रेम नहीं है। वह मानवात्मा का अध्ययन करता है। मनोवैज्ञानिक विश्लेषण उसकी विशेषता है।

आदर्शवाद तथा यथार्थवाद

हमारे पूर्ववर्ती कलाकारों का यह विश्वास रहा है कि यथार्थवाद में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हमारी दुर्बलताओं, विषमताओं और क्रूरताओं का नग्न चित्रण होता है। यथार्थवादी हमको निराशावादी बना देता है। मानव-चरित्र में उसका विश्वास उठ जाता है। उसको चारों ओर बुराई ही बुराई नजर आने लगती है। मनुष्य की दुर्बलताओं का चित्रण करने में शिष्टता की सीमाओं से वह आगे बढ़ जाता है।

पर यथार्थवादी का विश्वास इसके विरुद्ध है। जो कला जीवन की यथार्थ व्याख्या नहीं करती, जो हमें इस जगत् का प्राणी न मानकर हमें केवल स्वप्नों के हिंडोलों में झुलाना जानती है, उसके लिए (कहानी के लिए) वह सर्वथा अग्राह्य और असंगत है। कहानी को वह जीवन के अधिक निकट—बल्कि पूर्ण जीवनमय—मानता है। उसका कथन है, मनुष्य जहाँ दुर्बल है, कहानी में उसे वहाँ दुर्बल ही रहना उचित है। वही स्वाभाविक है, यथार्थ है, हमारे ही जीवन का है। वह अगर उठता है, तो हम समझ लेंगे, हम उठ रहे हैं। परन्तु यदि वह इतना ऊँचा है कि उसको छूने के लिए हमें काल्पनिक उड़न-खटोले की आवश्यकता हो, तो वह हमारा नहीं है, हमारे जगत् का नहीं है।

रह गई बात यथार्थवाद में निराशावाद की। सो वह इस पर भी विश्वास नहीं करता। उसकी धारणा है कि आदर्शवादी का आधार एक ऐसी छाया है, जिसको मनुष्य कभी उपलब्ध कर नहीं पाता—छू नहीं सकता। वह सदा आगे ही आगे जो रहती है। वह सोचता है कि आदर्शवाद हमें थोड़े में सन्तोष और अधिक के प्रति विरक्ति सिखलाता है, उसने हमें अकर्मण्य बनाया है। उसने हमें सात्विकता के मिथ्याभिमान की ओर घसीट-घसीट कर मिट्टी में मिलाया है। वह हमें भाग्यवादी बनाता है। सच पूछो तो संघर्ष और जीवन-युद्ध में वह हमें पराजित बनाने का कारण हुआ है। जीवन के भीतर जो पौरुष है, दानव है, उसने उसको जगाया नहीं—सोते ही रहने दिया है। पर यथार्थवाद से सम्पूर्ण मानवता की शक्ति हमें प्राप्त होती है।

यथार्थवादी दृष्टि है कि हमारे पूर्ववर्ती कलाकारों ने मनुष्य की भावुकता के नाम पर सदाचार की ऐसी कठोर और अव्यावहारिक व्याख्या

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

की है कि जीवन का यथार्थ स्वरूप हमारे साहित्य से दूर-ही-दूर बना रहा है। देहात के किसी किसान में भी वही दुर्बलताएँ हो सकती हैं, जो हमारे नागरिकों में हुआ करती हैं। परन्तु हिन्दी-कहानी के शैशव काल में हमने सदा यही पढ़ा है कि किसानों का चरित्र देवोपम होता है और नागरिकों का सर्वदा पैशाचिक। हिन्दी कहानी के आदर्शवाद में भारतीय नारी-हृदय के अत्याचार-त्रस्त जीर्ण-जर्जर स्वरूप की ओर ध्यान ही नहीं दिया गया। उसके अधिकार को लेकर हमारे आदर्शवादी लेखक आँखें रखते हुए भी नेत्रहीन रहे हैं। हिन्दी के कथा-साहित्य में भारतीय नारी का व्यक्तिगत अस्तित्व सच पूछिये तो स्वीकार ही नहीं किया गया।

हिन्दी कहानी में यथार्थवाद की किरणमाला मुख्य रूप से बंग देश से आई है और उसका सर्वाधिक श्रेय महान् कलाकार शरच्चन्द्र को है। मनुष्य के भीतर तृष्णा और निराशा का जो ज्वालामुखी है, दैन्य और दुर्बलताओं का जो विषधर है, गरीबी और परवशता की जो महानाशकारी बुभुक्षा है, कुटिलता और कपटाचार की जो दानवता है और इन सारी परिस्थितियों में महामानव का जो अहंकार और दर्प है, त्याग और उत्सर्ग है, शरच्चन्द्र उसका चित्रकार है। नारी और हिन्दू नारी की सम्पूर्ण और सर्वव्यापक अनुभूति शरच्चन्द्र के साहित्य की अमर देन है।

क्रम-भंग

पर आज की कहानी पुरातन को पार कर आई है। जीवन के काल्पनिक सत्यों, स्वप्नों के धूमिल भावना-चित्रों और जीवन को नाश की ओर ले जाने वाली विरक्ति के जर्जर आदर्शों से ओत-प्रोत कहानियाँ हमारी आज की प्रेरणा नहीं हो सकतीं। सत्य आज इतना सस्ता नहीं है कि सहज ही हमारी कल्पनाएँ साकार हो जाती हैं। नियति के व्यंग्य का अट्टहास मानवात्मा की छाती पर कितने निर्मम पद-प्रहार कर रहा है, नित्य हम आँखों से देखते हैं; तो भी हम सोच लेते हैं कि हम सुखी हैं। आशा की पावन गोद कौन कह सकता है कि प्यारी नहीं होती? किन्तु सीमाओं में घिर-घिर कर सफलता यदि जन-जन के लिये चिर सम्भव भी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हो जाय, तो भी प्रश्न यह है कि नियति के व्यंग्य से क्या हम इंकार कर सकते हैं ?

महाकवि गेटे का कथन है—

"कला वही है जो परम सत्य के रहस्य को आकार प्रदान कर सके। सौन्दर्य, चाहे वह प्रकृति का हो, चाहे शरीर, चरित्र अथवा आत्मा का, मूल में एक ही है। वेदना कभी संकीर्ण-पथगामिनी नहीं बनी। यदि परिष्कृत मन से हम उसके विस्फोट के आदि सत्य को देख सकें, तो हमें पता चलेगा कि कलाकार के लिए सदा एक ही ऋतु रहती है। और वह ऋतु है अनन्त पीड़ा की।"*

अस्तु, कथा में यदि दुःख अथवा निराशा की झलक मिले, तो वह सर्वथा स्वाभाविक है।

मोहन के पिता डिप्टी कलक्टर थे। जिस समय उनका देहावसान हुआ, उस समय तीस हजार की सम्पत्ति मोहन के उत्तराधिकार में थी। परिवार में थीं दूसरी माता और उससे उत्पन्न दो भाई। बी० ए० की पढ़ाई के दिन चल रहे थे और मोहन सोचता था कि वह आई० ए० एस० बनेगा। किन्तु पिता के स्वर्गवास के कारण परीक्षा में फेल हो जाने के बाद अगले वर्षों में उसको एक हाई स्कूल में पचास रुपये मासिक की अध्यापकी करनी पड़ी, जो पाँच वर्ष के बाद छुट भी गयी। आज मोहन के लिए चालीस रुपये मासिक की आय भी दुर्लभ है। यहाँ प्रश्न उठता है, अपराध किसका है ?

प्रगतिवाद

लेकिन क्या इसका अभिप्राय है कि मनष्य परिस्थितियों के सामने

---

* For an artist there is only one season, the season of sorrow.

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

राजेन्द्र के घर से उसका एक सखा अनिल चुपचाप सौ रुपये का नोट उड़ा ले जाता है। राजेन्द्र समझता है कि अनिल ऐसा नहीं कर सकता, क्योंकि वह सभ्य है। इसके लिए वह उससे पूछना भी अनुचित समझता है। और राजेन्द्र का नौकर जगन्नाथ अपनी मरणासन्न मां की दवाई लेने के लिए उसका पुराना फाउण्टेन पेन उठा ले जाता और उसे ढाई तीन रुपये में बेचकर किसी प्रकार काम चला लेता है, तो उसे चोर समझ कर पुलिस के हवाले कर दिया जाता है। क्या इसका यह अभिप्राय नहीं कि गरीब और दुर्बल व्यक्ति के लिए यह जगत् बड़ा निर्दय होता है। और क्या इसका यह अर्थ नहीं कि नैतिकता के हमारे बहुतेरे मान और स्तर बड़े ही विवादग्रस्त और चिन्त्य बन गये हैं?

राजा बहादुर का कुत्ता दूध पीता है; किन्तु उनकी कोठी की बगल में रहने वाले मजदूर गयादीन का बच्चा समुचित चिकित्सा और पथ्य के अभाव में काल का कौर बन जाता है। राजा बहादुर के कुत्ते और गयादीन के नवजात शिशु में दूध पाने का वास्तविक अधिकारी कौन है, समाज की आधुनिक व्यवस्था इस विषय में मौन है। कह लीजिए कि सब भाग्य का खेल है। किन्तु, मनुष्य के स्वाभाविक और जन्मजात अधिकारों की उपेक्षा करके जो समाज इसे भाग्य का खेल मान कर चल रहा है, आज का लेखक उसे बदलना चाहता है।

नयी आशा

आज मानवता की पुकार है कि जीवन में परिपूर्णता लाने की सतत चेष्टा की जाय। पर यह तभी सम्भव है, जब कथा-साहित्य में आज के जीवन का यथार्थ चित्रण ही न किया जाय, वरन् भूले-भटके प्राणियों और पाठकों को एक प्रशस्त मार्ग भी सुझाया जाय। संतोष की बात है कि हिन्दी-कथाकारों की नयी पौध का ध्यान इधर जा रहा है। जाग्रति और विकास की नव-नव किरणें फूट रही हैं। जीवन में आशा, भविष्य-पथ में उज्ज्वलता, उदीयमान कथाकारों में नव-नव स्फूर्ति और प्रेरणा हमें स्पष्ट दिखाई दे रही है।

—भगवतीप्रसाद वाजपेयी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हार स्वीकार करके रो दे ? नहीं; यह कायरता है। परेशानियां अगर जीवन में न हों, तो जीवन का कोई महत्त्व नहीं है। अयाचित और अप्रत्याशित रूप से ट्रैजिडी अगर जीवन पर लद ही बैठे तो मनुष्य क्यों न इतना निर्मम बन जाय कि उस पर एक बार विद्रूप हास्य कर उठे। कटुता से भरे सत्य और असफलतापूर्ण, जीवन पर, और न सही तो, मनुष्य अपने विवेक का एक ध्वंसक प्रयोग तो कर ही सकता है !

किन्तु वस्तुवादी और विद्रोही कलाकार की स्थिति दूसरी है। वह सोचता है कि नियति के अनुशासन और कुटिल विधान को मनुष्य ने अपनी ही दुर्बुद्धि और दुर्बलताओं से अपने ऊपर लाद रक्खा है सच पूछो तो आज का समाज ही इसका दोषी है। इसे समूल नष्ट कर डालो और इसके स्थान पर दूसरा नवीन भवन खड़ा कर दो। परवाह नहीं; उस महाध्वंस के बाद हमारा निवास पहले पर्णकुटीर में ही हो। आज विश्व का जाग्रत कलाकार इन्हीं प्रवृत्तियों के साथ बह रहा है। परिणति कहां है, यह कोई नहीं जानता। मानो भविष्य के हाथ में अपने आपको सौंप देना भर उसने स्वीकार कर लिया है। उसे विरोध है तो केवल वर्तमान से। कल का निराशावादी कहता था—हमारे सामने तो अन्धकार है, किन्तु आज का प्रगतिवादी ऐसा नहीं मानता। वह रोता भी है तो खारे पानी के साधारण आंसुओं से नहीं, रक्त के आंसुओं से। जो मूर्ति बनने से पहले ही रो देना चाहती है वह उसके सामने श्रद्धा से झुकना पसन्द नहीं करता। वह उसे तोड़ डालना चाहता है। वे प्रयत्न जो मरण से पहले अधूरे हैं, असफल भले ही कहलाएं, किन्तु जीवन की अन्तिम सांस के साथ, आशा और भविष्य के अनिश्चित पथ में भी वे उसके लिए सम्बल तो हैं ही।

रागिनी सत्रह वर्ष की लघुवय में विधवा हो गई थी। उसके पिता ने चालीस वर्ष की परिपूर्ण प्रौढ़ावस्था में विधुर हो जाने पर दूसरा विवाह कर लिया। आज का समाज यदि आंखों पर पट्टी बांध कर इस पिशाच वृत्ति को भाग्य का खेल कहेगा, तो आज का जागरूक कलाकार इसको कैसे मानेगा ! तत्काल वह बोल न उठेगा 'इसे भाग्य का खेल बनाया किसने ?'

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री प्रेमचन्द

(१८८०-१९३६)

मुंशी प्रेमचन्द का प्रारम्भिक नाम धनपतराय था। एक साधारण परिवार में जन्म लेने के कारण तथा प्रारम्भ से ही दुःखप्रद परिस्थितिया उपस्थित होने से आपको समय झंझटों और दीनता में व्यतीत करना पड़ा। अपने परिश्रम के बल पर आजीविका अर्जित करते हुए आपने देश-भक्ति से युक्त रचनाएँ लिखीं। तत्कालीन सरकार उनके इस कार्य से असन्तुष्ट थी। फलस्वरूप १९२१ ई० के असहयोग आन्दोलन के कारण आपने सरकारी नौकरी से त्यागपत्र दे दिया। उसके बाद आपने अपना जीवन एक स्वतन्त्र साहित्य-सेवी का-सा व्यतीत किया।

प्रेमचन्दजी हिन्दी के सुप्रसिद्ध कहानीकार हैं। आपने २५० के लगभग कहानियाँ लिखी हैं। हिन्दी साहित्य में इनके जैसा कहानीकार आज तक नहीं हुआ। आपने अपनी कहानियों में भारतीय ग्रामीण जीवन का यथार्थ और मार्मिक चित्रण किया है। आप मानव स्वभाव के सूक्ष्म भावों को चित्रित करने में सिद्धहस्त थे। सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र में आपके विचार प्रगतिशील थे। आप देश की स्वाधीनता के समर्थक और पक्षपाती थे तथा गांधीवादी विचारों से आपका हृदय परिपूर्ण था। हिन्दी कहानी साहित्य में आपने युगान्तर उपस्थित किया है। यही कारण है कि आपकी कहानियों का अनुवाद संसार की कई भाषाओं में हो चुका है। प्रेमचन्द जन-जन के लेखक थे। साधारण जनता के प्रति उनके हृदय में अपार ममता थी। उनका प्रधान उद्देश्य साहित्य द्वारा जीवन का सच्चा एवं यथार्थ चित्रण करके जनता में जागरण का सन्देश पहुँचाना था। इसलिए युगों तक इस साहित्यकार की साधना भारतवासियों के लिए प्रेरणादायक बनी रहेगी।

'बड़े घर की बेटी' प्रेमचन्द जी की सर्वोत्तम कहानियों में से एक है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सामाजिक जीवन के सूक्ष्म चितेरे मुंशी प्रेमचन्द ने इस कहानी में मध्यम-श्रेणी के गृहस्थ जीवन की एक ऐसी घटना का चित्र उपस्थित किया है जो हमारे घरों में आये दिन घटती रहती है। आनन्दी बड़

कहानी संकेत

घर की बेटी है। सम्पन्न घर की सुविधाओं को अभ्यस्त होने पर भी उसने अपने आपको श्रीकण्ठ के रूढ़िग्रस्त तथा अभावों से पूर्ण घर के अनुकूल बना लिया। एक दिन श्री-कण्ठ के लघु भ्राता लालबिहारीसिंह के अभद्र व्यवहार के कारण आनन्दी को क्रोध आ गया, झगड़ा यहाँ तक बढ़ गया कि दोनों भाइयों के अटूट प्रेम की कड़ियाँ शिथिल हो गईं और लालबिहारी घर छोड़कर जाने लगा। घर को बिखरता देख आनन्दी की सात्त्विक वृत्तियाँ जाग उठीं उसने लालबिहारी को रोक लिया, बिगड़ता हुआ काम बना लिया। उच्च कुल की आदर्श महिलाएँ कष्ट सह कर भी, अपमानित होकर भी मर्यादा नष्ट नहीं होने देतीं। यही इस कहानी का पवित्र सन्देश है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बड़े घर की बेटी

बेनीमाधवसिंह गौरीपुर गाँव के जमींदार और नम्बरदार थे। उनके पितामह किसी समय बड़े धनधान्य-सम्पन्न थे। गाँव का पक्का तालाब और मन्दिर, जिनकी अब मरम्मत भी मुश्किल थी, उन्हीं के कीर्तिस्तम्भ थे। कहते हैं, इस दरवाज़े पर हाथी झूमता था, अब उसकी जगह एक बूढ़ी भैंस थी, जिसके शरीर में पंजर के सिवा और कुछ शेष न रहा था, पर दूध शायद बहुत देती थी क्योंकि एक न एक आदमी हाँडी लिए उसके सिर पर सवार ही रहता था। बेनीमाधवसिंह अपनी आधी से अधिक सम्पत्ति वकीलों की भेंट कर चुके थे। उनकी वर्तमान वार्षिक आय एक हज़ार से अधिक न थी। ठाकुर-साहब के दो बेटे थे। बड़े का नाम श्रीकण्ठसिंह था। उन्होंने बहुत दिनों के परिश्रम और उद्योग के बाद बी० ए० की डिग्री प्राप्त की थी। अब एक दफ्तर में नौकर थे। छोटा लड़का लालबिहारीसिंह दोहरे बदन का सजीला जवान था। मुखड़ा भरा हुआ, चौड़ी छाती, भैंस का दो सेर ताज़ा दूध वह सबेरे पी जाता था। श्रीकण्ठसिंह की दशा उनके बिल्कुल विपरीत थी। इन नेत्रप्रिय गुणों को उन्होंने इन्हीं दो अक्षरों पर न्यौछावर कर दिया था। इन दो अक्षरों ने उनके शरीर को निर्बल और चेहरे को कान्तिहीन बना दिया था। इसी से वैद्यक ग्रन्थों पर उनका विशेष प्रेम था। आयुर्वेदिक औषधियों पर उनका अधिक विश्वास था। साँझ-सवेरे उनके कमरे से प्रायः खरल की कर्णमधुर ध्वनि सुनाई दिया करती थी। लाहौर और कलकत्ते के वैद्यों से बड़ी लिखी-पढ़ी रहती थी।

श्रीकण्ठ इस अंग्रेजी डिग्री के अधिपति होने पर भी अंग्रेजी सामाजिक प्रथाओं के विशेष प्रेमी न थे; बल्कि वह बहुधा बड़े ज़ोर से उनकी निन्दा और तिरस्कार किया करते थे। इसी से गाँव में उनका सम्मान था। दशहरे के दिनों में वह बड़े उत्साह से रामलीला में सम्मिलित होते

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

और स्वयं किसी न किसी पात्र का पार्ट लेते। गौरीपुर में रामलीला के वही जन्मदाता थे। प्राचीन हिन्दू-सभ्यता का गुणगान उनकी धार्मिकता का प्रधान अंग था। आजकल स्त्रियों में कुटुम्ब से मिल-जुल कर रहने की ओर जो अरुचि होती है, उसे वह जाति और देश के लिए बहुत ही हानिकारक समझते थे। यही कारण था कि गाँव की ललनाएं उनकी निन्दक थीं। कोई कोई तो उन्हें अपना शत्रु समझने में भी संकोच न करती थीं। स्वयं उनकी पत्नी का ही इस विषय में उनसे विरोध था। वह इसलिए नहीं कि उसे अपने सास, ससुर, देवर, जेठ से घृणा थी, बल्कि उसका विचार था कि यदि बहुत-कुछ सहन करने और तरह देने पर भी परिवार के साथ निर्वाह न हो सके, तो आये दिन की कलह से जीवन को नष्ट करने की अपेक्षा उत्तम है कि अपनी खिचड़ी अलग पकाई जाय।

आनन्दी एक बड़े उच्च-कुल की लड़की थी। उसके बाप एक छोटी-सी रियासत के ताल्लुकेदार थे। विशाल भवन, एक हाथी, तीन कुत्ते, बाज, बहरी, झिकरे, झाड़-फानूस, आनरेरी मजिस्ट्रेटी और ऋण, जो एक प्रतिष्ठित ताल्लुकेदार के योग्य पदार्थ हैं, वे सभी उनके यहां विद्यमान थे। भूपसिंह नाम था। बड़े उदारचित्त प्रतिभाशाली पुरुष थे; पर दुर्भाग्य, लड़का एक भी न था। सात लड़कियाँ हुईं और दैवयोग से सब की सब जीवित रहीं। पहली उमंग में तो उन्होंने तीन ब्याह दिल खोलकर किये; पर जब पन्द्रह-बीस हज़ार का कर्ज़ सिर पर हो गया, तो आँखें खुलीं, हाथ समेट लिया। आनन्दी चौथी लड़की थी। वह अपनी सब बहनों से अधिक रूपवती और गुणशीला थी। इसी से ठाकुर भूपसिंह उसे बहुत प्यार करते थे। सुन्दर सन्तान को कदाचित् उसके माता-पिता भी बहुत चाहते हैं। ठाकुर साहब बड़े धर्म-संकट में थे कि इसका विवाह कहाँ करें। न तो यही चाहते थे कि ऋण का बोझ बढ़े और न ही यह स्वीकार था कि इसे अपने को भाग्यहीन समझना पड़े। एक दिन श्रीकण्ठ उनके पास किसी चन्दे का रुपया माँगने आये। शायद नागरी-प्रचार का चन्दा था। भूपसिंह उसके स्वभाव पर रीझ गये और धूम-धाम से श्रीकण्ठसिंह का आनन्दी के साथ विवाह हो गया।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आनन्दी अपने नये घर में आई, तो यहाँ रंग-ढंग कुछ और ही देखा। जिस टीम-टाम की उसे बचपन से ही आदत पड़ी हुई थी, यहाँ वह नाम मात्र को भी न थी। हाथी घोड़ों का तो कहना ही क्या, कोई सुन्दर सजी बहली तक न थी। रेशमी स्लीपर साथ लाई थी, पर यहां बाग कहाँ। मकान में खिड़कियाँ तक न थीं, न ज़मीन का फर्श, न दीवार पर तस्वीरें। वह एक सीधा-सादा देहाती गृहस्थ का मकान था; किन्तु आनन्दी ने थोड़े ही दिनों में अपने को इस नई अवस्था के ऐसे अनुकूल बना लिया, मानो उसने विलास के सामान कभी देखे ही न थे।

[२]

एक दिन दोपहर के समय लालबिहारीसिंह दो चिड़ियाँ लिए हुए आया और भावज से बोला—'जल्दी से पका दो, मुझे भूख लगी है।' आनन्दी भोजन बनाकर उसकी राह देख रही थी। अब वह नया व्यंजन बनाने बैठी। हाँडी में देखा तो घी पाव-भर से अधिक न था। बड़े घर की बेटी किफायत क्या जाने। उसने सब घी मांस में डाल दिया। लालबिहारी खाने बैठा, तो दाल में घी न था, बोला—'दाल में घी क्यों नहीं छोड़ा?'

आनन्दी ने कहा—'घी सब मांस में पड़ गया।'

लालबिहारी जोर से बोला—'अभी परसों घी आया है, इतनी जल्दी उठ गया?'

आनन्दी ने उत्तर दिया—'आज तो कुल पाव भर रहा होगा। सब मैंने मांस में डाल दिया।'

जिस तरह सूखी लकड़ी जल्दी से जल उठती है, उसी तरह क्षुधा से बावला मनुष्य ज़रा-ज़रा सी बात पर तुनक जाता है। लालबिहारी को भावज की यह ढिठाई बहुत बुरी मालूम हुई। तुनक कर बोला—'मैके में तो जैसे घी की नदी बहती हो?'

स्त्रियां गालियाँ सह लेती हैं, मार भी सह लेती हैं, पर मैके की निन्दा उनसे नहीं सुनी जाती। आनन्दी मुंह फेर कर बोली—'हाथी मरा भी तो नौ लाख का। वहाँ इतना घी नित्य नाई कहार खा जाते हैं।'

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लालविहारी जल गया, थाली उठाकर पटक दी और बोला—'जी चाहता है, जीभ पकड़ कर खींच लूं।'

आनन्दी को भी क्रोध आया। मुह लाल हो गया, बोली—'वह होते तो आज इसका मज़ा चखा देते।'

अब अपढ़, उजड्ड ठाकुर से न रहा गया। उसकी स्त्री एक साधारण जमादार की बेटी थी। जब जी चाहता, उस पर हाथ साफ कर लिया करता था। उसने खड़ाऊँ उठाकर आनन्दी की ओर जोर से फेंकी और बोला—'जिसके गुमान पर भूली हुई हो उसे भी देखूंगा और तुम्हें भी।'

आनन्दी ने हाथ से खड़ाऊँ रोकी, सिर बच गया, पर अंगुली में कड़ी चोट आई। क्रोध के मारे हवा में हिलते हुए पत्ते की भाँति कांपती हुई अपने कमरे में आकर खड़ी हो गई। स्त्री का बल और साहस, मान और मर्यादा पति तक है। उसे अपने पति के ही बल और पुरुषत्व का घमंड होता है। आनन्दी लहू का घूंट पीकर रह गई।

[३]

श्रीकण्ठसिंह शनिवार का घर आया करते थे। वृहस्पतिवार को यह घटना हुई थी। दो दिन तक आनन्दी कोपभवन में रही। न कुछ खाया, न पिया, उनकी बाट देखती रही। अन्त में शनिवार को वह नियमानुकूल सन्ध्या समय घर आये और बाहर बैठकर कुछ इधर-उधर की बातें, कुछ देश और काल सम्बन्धी समाचारों तथा कुछ नये मुकद्दमों आदि की चर्चा करने लगे। यह वार्तालाप दस बजे रात तक होता रहा। गांव के भद्र पुरुषों को इन बातों में ऐसा आनन्द मिलता था कि खाने-पीने की भी सुधि न रहती थी। श्रीकण्ठ को पिंड छुड़ाना मुश्किल हो जाता था। दो-तीन घण्टे आनन्दी ने बड़े कष्ट से काटे। किसी तरह भोजन का समय आया। पंचायत उठी। जब एकांत हुआ, तब लालबिहारी ने कहा—'भैया, आप ज़रा घर में समझा दीजियेगा कि मुह सँभाल कर बात-चीत किया करें; नहीं तो एक दिन अनर्थ हो जायगा।'

बेनीमाधव ने बेटे की ओर से साक्षी दी—'हाँ, बहू-बेटियों का यह स्वभाव अच्छा नहीं कि पुरुषों के मुँह लगें।'

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लालबिहारी—'वह बड़े घर की बेटी है तो हम लोग भी कोई कुर्मी कहार नहीं हैं।'

श्रीकण्ठ ने चिन्तित स्वर से पूछा—'आखिर बात क्या हुई ?

लालबिहारी ने कहा—'कुछ भी नहीं; यों ही आप ही आप उलझ पड़ी। मैंके के सामने हम लोगों को कुछ समझती ही नहीं।'

श्रीकण्ठ खा-पीकर आनन्दी के पास गये। वह भरी बैठी थी। यह हज़रत भी कुछ तीखे थे। आनन्दी ने पूछा—'चित्त तो प्रसन्न है ?'

श्रीकण्ठ बोले—'बहुत प्रसन्न है; पर तुमने आज-कल घर में यह क्या उपद्रव मचा रखा है ?'

आनन्दी की तेवरियों पर बल पड़ गये और झुंझलाहट के मारे बदन में ज्वाला-सी दहक उठी। बोली—'जिसने तुमसे यह आग लगाई है, उसे पाऊँ तो उसका मुंह झुलस दूं।'

श्रीकण्ठ—'इतनी गरम क्यों होती हो ? बात तो कहो।'

आनन्दी—'क्या कहूँ, यह मेरे भाग्य का फेर है। नहीं तो एक गँवार छोकरा, जिसको चपरासगिरी करने का भी ढंग नहीं, मुझे खड़ाऊँ से मार कर यों न अकड़ता।'

श्रीकण्ठ—'सब साफ-साफ हाल कहो तो मालूम हो। मुझे तो कुछ पता नहीं।'

आनन्दी—'परसों तुम्हारे लाड़ले भाई ने मुझ से मांस पकाने को कहा। घी हाँडी में पाव भर से अधिक न था। वह मैंने सब मांस में डाल दिया। जब खाने बैठा तो कहने लगा, दाल में घी क्यों नहीं है ? बस, इसी पर मेरे मैंके को भला-बुरा कहने लगा। मुझ से न रहा गया। मैंने कहा कि वहाँ इतना घी नाई-कहार खा जाते हैं और किसी को जान भी नहीं पड़ता। बस, इतनी सी बात पर इस अन्यायी ने मुझ पर खड़ाऊँ फेंक मारी। यदि हाथ से न रोक लेती तो सिर फट जाता। उसी से पूछो कि मैंने जो कुछ कहा है, वह सच है या झूठ ?'

श्रीकण्ठ की आँखें लाल हो गईं। बोले—'यहाँ तक हो गया। इस छोकरे का यह साहस !'

आनन्दी स्त्रियों के स्वभावानुसार रोने लगी; क्योंकि आँसू उनकी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पलकों पर रहते हैं। श्रीकण्ठ धैर्यवान् और शांत पुरुष थे। उन्हें कदाचित् ही क्रोध आता था। परं स्त्रियों के आंसू पुरुष की क्रोधाग्नि भड़काने में तेल का काम देते हैं। रात-भर करवटें बदलते रहे। उद्विग्नता के कारण पलक तक नहीं झपकी। प्रातःकाल अपने बाप के पास जाकर बोले—'दादा, अब इस घर में मेरा निर्वाह न होगा।'

इस तरह की विद्रोह-पूर्ण बातें करने पर श्रीकण्ठ ने कितनी ही बार अपने कई मित्रों को आड़े हाथों लिया था; परन्तु दुर्भाग्य से आज उन्हें स्वयं वही बात अपने मुंह से कहनी पड़ी! दूसरों को उपदेश देना भी कितना सहज है!

बेनीमाधवसिंह घबरा उठे और बोले—'क्यों?'

श्रीकण्ठ—'इसलिए कि मुझे भी अपनी मान-प्रतिष्ठा का कुछ विचार है। आपके घर में अब अन्याय और हठ का प्रकोप हो रहा है। जिनको बड़ों का आदर-सम्मान करना चाहिए, वह उनके सिर चढ़ते हैं। मैं दूसरे का चाकर ठहरा, घर पर रहता नहीं, यहाँ मेरे पीछे स्त्रियों पर खड़ाऊं और जूतों की बौछारें होती हैं। कड़ी बात तक चिन्ता नहीं, कोई एक-दो कह ले, यहाँ तक मैं सह सकता हूँ, किन्तु यह कदापि नहीं हो सकता कि मेरे ऊपर लात-घूंसे पड़ें और मैं दम न मारूँ।'

बेनीमाधवसिंह कुछ जवाब न दे सके। श्रीकण्ठ सदैव उनका आदर करते थे। उनके ऐसे तेवर देखकर बूढ़े ठाकुर अवाक् रह गये। केवल इतना ही बोले—'बेटा, तुम बुद्धिमान् होकर ऐसी बातें करते हो? स्त्रियाँ इस तरह घर का नाश कर देती हैं। उनको बहुत सिर चढ़ाना अच्छा नही।'

श्रीकण्ठ—'इतना मैं जानता हूँ, आपके आशीर्वाद से ऐसा मूर्ख नहीं हूँ। आप स्वयं जानते हैं कि मेरे ही समझाने-बुझाने से इसी गाँव में कई घर सम्भल गये, पर जिस स्त्री की मान-प्रतिष्ठा का मैं ईश्वर के दरबार में उत्तरदायी हूँ, उसके साथ ऐसा घोर अन्याय और पशुवत् व्यवहार मुझे असह्य है। आप सच मानिये, मेरे लिए यही कुछ कम नहीं है कि लाल-बिहारी को दण्ड नहीं दिया।'

अब बेनीमाधवसिंह भी गरमाये। ऐसी बात और न सुन सके, बोले—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

'लालबिहारी तुम्हारा भाई है, उससे जब कभी भूल-चूक हो उसके कान पकड़ो। लेकिन...'

श्रीकण्ठ—'लालबिहारी को मैं अब अपना भाई नहीं समझता।'

बेनीमाधवसिंह—'स्त्री के पीछे ?'

श्रीकण्ठ—'जी नहीं, उसकी क्रूरता और अविवेक के कारण।'

दोनों कुछ देर चुप रहे। ठाकुर साहब लड़के का क्रोध शान्त करना चाहते थे, लेकिन यह नहीं स्वीकार करना चाहते थे कि लालबिहारी ने कोई अनुचित काम किया है। इस बीच गाँव के और कई सज्जन हुक्के-चिलम के बहाने से वहाँ आ बैठे। कई स्त्रियों ने जब यह सुना कि श्रीकण्ठ पत्नी के पीछे पिता से लड़ने पर तैयार है, तो उन्हें बड़ा हर्ष हुआ। दोनों पक्षों की मधुर वाणियां सुनने के लिए उनकी आत्माएं तिलमिलाने लगीं। गाँव में ऐसे कुटिल मनुष्य भी थे, जो इस कुल की नीतिपूर्ण गति पर मन-ही-मन जलते थे। वे कहा करते थे, श्रीकण्ठ अपने बाप से दबता है, इसलिए वह दब्बू है। उसने इतनी विद्या पढ़ी, इसलिए वह किताबों का कीड़ा है। बेनीमाधवसिंह उसकी सलाह के बिना कोई काम नहीं करते, यह उनकी मूर्खता है। इन महानुभावों की शुभ कामनाएँ आज पूरी होती दिखाई दीं। कोई हुक्का पीने के बहाने और कोई लगान की रसीद दिखाने, आ-आ कर बैठ गए। बेनीमाधवसिंह पुराने आदमी थे, इन भावों को ताड़ गए। उन्होंने निश्चय किया कि चाहे कुछ भी क्यों न हो, इन द्रोहियों को ताली बजाने का अवसर न दूंगा। तुरन्त कोमल शब्दों में बोले—'बेटा! मैं तुम से बाहर नहीं हूँ। तुम्हारा जो जी चाहे करो, अब तो लड़के से अपराध हो गया।'

इलाहाबाद का अनुभव-रहित झल्लाया हुआ ग्रेजुएट इस बात को न समझ सका। उसे डिबेटिंग क्लब में अपनी बात पर अड़ने की आदत थी, इन हथकंडों की उसे क्या खबर! बाप ने जिस मतलब से बात पलटी थी, वह उसकी समझ में न आया। बोला—'मैं लालबिहारी के साथ अब घर में नहीं रह सकता।'

बेनीमाधव—'बेटा, बुद्धिमान् लोग मूर्खों की बात पर ध्यान नहीं देते। वह बेसमझ लड़का है। उससे जो कुछ भूल हुई है, उसे तुम बड़े होकर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

क्षमा करो।'

श्रीकण्ठ—'उसकी इस दुष्टता को मैं कदापि नहीं सह सकता। या तो वही घर में रहेगा, या मैं ही रहूँगा। आपको यदि वह अधिक प्यारा है, तो मुझे विदा कीजिए, मैं अपना भार आप सम्भाल लूंगा। यदि मुझे रखना चाहते हैं तो उससे कहिए, जहाँ चाहे चला जाए। यह मेरा अन्तिम निश्चय है।'

लालविहारीसिंह दरवाज़े की चौखट पर चुपचाप खड़ा बड़े भाई की बात सुन रहा था। वह उनका बहुत आदर करता था। उसे कभी इतना साहस न हुआ था कि श्रीकण्ठ के सामने चारपाई पर बैठ जाय, हुक्का पी ले या पान खाले। बाप का भी वह इतना मान न करता था। श्रीकण्ठ का भी उस पर हार्दिक स्नेह था। अपने होश में उन्होंने कभी उसे घुड़का भी न था। जब इलाहाबाद से आते, तो उसके लिए कोई-न-कोई वस्तु अवश्य लाते। मुग्दर की जोड़ी उन्होंने बनवा दी थी। पिछले साल जब उसने अपने से ड्योढ़े जवान को नागपंचमी के दिन दंगल में पछाड़ दिया, तो उन्होंने पुलकित होकर अखाड़े में ही जाकर उसे गले लगा लिया था। पांच रुपए के पैसे लुटाए थे। ऐसे भाई के मुंह से आज ऐसी हृदय-विदारक बात सुनकर लालबिहारी को बड़ी ग्लानि हुई। वह फूट-फूटकर रोने लगा। इसमें सन्देह नहीं कि वह अपने किए पर आप पछता रहा था।

भाई के आने से एक दिन पहले से ही उसकी छाती धड़क रही थी कि देखूं भैया क्या कहते हैं? मैं उनके सम्मुख कैसे जाऊँगा? उनसे कैसे बोलूंगा? मेरी आँखें उनके सामने कैसे उठेंगी? उसने समझा था कि भैया मुझे बुलाकर समझा देंगे। इस आशा के विपरीत आज उसने उन्हें निर्दयता की मूर्ति बने हुए पाया। वह मूर्ख था; परन्तु उसका मन कहता था कि भैया मेरे साथ अन्याय कर रहे हैं। यदि श्रीकण्ठ उसे अकेले में बुलाकर दो-चार कड़ी बातें कह देते, इतना ही नहीं, दो-चार तमाचे भी लगा देते, तो कदाचित् उसे इतना दुःख न होता। पर भाई का यह कहना कि अब मैं इसकी सूरत नहीं देखना चाहता, लालविहारी से न सहा गया। वह रोता हुआ घर में आया, कोठरी में आकर कपड़े पहने, आँखें पोंछीं; जिससे कोई यह न समझे कि रोया था। तब आनन्दी के द्वार पर आकर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बोला—'भाभी, भैया ने निश्चय किया है कि वह मेरे साथ इस घर में न रहेंगे। वह अब मेरा मुंह नहीं देखना चाहते। इसलिए अब मैं जाता हूँ, उन्हें मुंह न दिखाऊंगा। मुझ से जो कुछ अपराध हुआ, उसे क्षमा करना।'

यह कहते-कहते लालबिहारी का गला भर आया।

[४]

जिस समय लालबिहारीसिंह सिर झुकाए आनन्दी के द्वार पर खड़ा था, उसी समय श्रीकण्ठसिंह आंखें लाल किए बाहर से आए। भाई को खड़ा देखा, तो घृणा से आँखें फेर लीं और कतराकर निकल गए। मानो उसकी परछाईं से भी दूर भागते हैं।

आनन्दी ने लालबिहारी की शिकायत तो की थी; लेकिन अब मन में पछता रही थी। वह स्वभाव से ही दयावती थी। उसे इसका तनिक भी ध्यान न था कि बात इतनी बढ़ जायगी। वह मन में अपने पति पर झुंझला रही थी कि वह इतने गरम क्यों होते जी रहे हैं। उस पर यह भय भी लगा हुआ था कि कहीं मुझ से इलाहाबाद चलने को कहें, तो कैसे क्या करूंगी? इसी बीच में जब उसने लालबिहारी को दरवाज़े पर खड़ा यह कहते सुना कि अब मैं जाता हूँ, मुझ से जो कुछ अपराध हुआ है, उसे क्षमा करना, तो उसका रहा-सहा क्रोध भी पानी हो गया। वह रोने लगी। मन का मैल धोने के लिए नयन-जल से उपयुक्त और कोई वस्तु नहीं है।

श्रीकण्ठ को देखकर आनन्दी ने कहा—"लाला बाहर खड़े बहुत रो रहे हैं।'

श्रीकण्ठ—'तो मैं क्या करूँ?'

आनन्दी—'भीतर बुला लो। मेरी जीभ में आग लगे, मैंने कहाँ से यह झगड़ा उठाया।'

श्रीकण्ठ—'मैं नहीं बुलाऊँगा।'

आनन्दी—'पछताओगे। उन्हें बहुत ग्लानि हो गई है। ऐसा न हो, कहीं चल दें।'

श्रीकण्ठ न उठे। इतने में लालबिहारी ने फिर कहा—'भाभी! भैया

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

से मेरा प्रणाम कह दो। वह मेरा मुंह नहीं देखना चाहते, इसलिए मैं भी अपना मुंह उन्हें न दिखाऊंगा।'

लालबिहारी इतना कहकर लौट पड़ा, और शीघ्रता से दरवाजे की ओर बढ़ा। अन्त में आनन्दी कमरे से निकली और उसका हाथ पकड़ लिया। लालबिहारी ने पीछे फिर कर देखा और आँखों में आँसू भरे बोला—'मुझे जाने दो।'

आनन्दी—'कहाँ जाते हो ?'

लालबिहारी—'जहाँ कोई मेरा मुंह न देखे।'

आनन्दी—'मैं न जाने दूंगी।'

लालबिहारी—'मैं तुम लोगों के साथ रहने योग्य नहीं हूँ।'

आनन्दी—'तुम्हें मेरी सौगन्व, अब एक पग भी आगे न बढ़ाना।'

लालबिहारी—'जब तक मुझे यह न मालूम हो जाए कि भैया का मन मेरी तरफ से साफ हो गया, तब तक मैं इस घर में कदापि न रहूँगा।'

आनन्दी—'मैं ईश्वर की साक्षी देकर कहती हूं कि तुम्हारी ओर से मेरे मन में तनिक भी मैल नहीं है।'

अब श्रीकण्ठ का हृदय पिघला। उन्होंने बाहर आकर लालबिहारी को गले लगा लिया। दोनों भाई खूब फूट-फूटकर रोये। लालबिहारी ने सिसकते हुए कहा—'भैया ! अब कभी मत कहियेगा कि तुम्हारा मुंह न देखूंगा। इसके सिवा आप जो दण्ड देंगे, वह मैं सहर्ष स्वीकार करूंगा।'

श्रीकण्ठ ने काँपते हुए स्वर से कहा—'लल्लू ! इन बातों को बिल्कुल भूल जाओ। ईश्वर चाहेगा, तो अब फिर ऐसा अवसर न आएगा।'

बेनीमाधवसिंह बाहर से आ रहे थे। दोनों भाइयों को गले मिलते देखकर आनन्द से पुलकित हो गये। बोल उठे—'बड़े घर की बेटियाँ ऐसी ही होती हैं, बिगड़ा हुआ काम बना लेती हैं।'

गांव में जिसने यह वृत्तान्त सुना, उसी ने इन शब्दों में आनन्दी की उदारता को सराहा—'बड़े घर की बेटियाँ ऐसी ही होती हैं।'

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री जयशंकर प्रसाद

(१८८९-१९३७)

प्रसादजी का जन्म काशी के प्रसिद्ध सुंघनीसाहू वैश्य परिवार में हुआ था। इनकी बचपन से ही साहित्य के क्षेत्र में रुचि थी। वर्तमान युग में यदि हिन्दी साहित्य को किसी ने प्रभावित किया तो प्रसादजी ने। उनका झुकाव विशेष रूप से प्राचीन भारतीय संस्कृति, दर्शन, इतिहास और पुरातत्त्व की ओर रहा, जिसकी छाया उनके समस्त साहित्य में मिलती है। अपने अध्ययन और मनन के बल पर उन्होंने ऐसी प्रतिभा प्राप्त की, जिसकी तुलना नहीं की जा सकती। वे एकान्तप्रिय और भीड़भाड़ से दूर रहने वाले अमर कलाकार थे। कहानीकार होने के अतिरिक्त वे महाकवि और नाटक-सम्राट् भी हैं। उनके तीन उपन्यास भी उपलब्ध हैं। हिन्दी के कहानी क्षेत्र में उन्होंने सर्वप्रथम 'ग्राम' नामक मौलिक कहानी प्रस्तुत की। कवि होने के कारण उनकी कहानियों में भी कवित्व की झलक है। भाषा की दृष्टि से प्रसादजी अपनी मौलिक विशेषता रखते हैं। उन्होंने अपनी सभी कहानियाँ नाटकीय शैली में लिखी हैं। यद्यपि कहानी कला की दृष्टि से उनकी कहानियाँ अन्य किसी भी कहानीकार की रचनाओं के समकक्ष नहीं हैं, क्योंकि प्रसादजी एक भावुक साहित्यकार थे, कल्पना और अनुभूति से उन्होंने प्राचीन कथानकों को लेकर एक स्वस्थ आदर्श की स्थापना की है।

प्रसादजी की यह कहानी भावना-प्रधान है। इसमें एक ऐसे किशोर बालक की करुण कहानी है जिसका देशभक्त पिता बन्दीगृह में पड़ा हुआ है। इस कारण बालक को अल्पायु में ही अपनी जीविका उपार्जन करने के लिये विवश होना पड़ा था। देशभक्त पिता का पुत्र अपनी गरीबी की हालत में भी किसी से याचना करना उचित नहीं समझता, और अपने स्वाभिमान की रक्षा करते

कहानी संकेत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हुए छोटा जादूगर बन जाता है। इस प्रकार एक संयमी और साहसी बालक के उत्साह का सुन्दर चित्र इसमें प्रस्तुत किया गया है। लेखक ने इस कहानी के द्वारा अपने हृदय के मानव-प्रेम और करुणा को प्रकट किया है। कहानी वातावरण, विषय और भाषा शैली की दृष्टि से अत्यन्त रोचक बन पड़ी है। सरल-सा विषय लेकर प्रसादजी ने उसे ऐसा कलात्मक रूप दिया है, जिससे उनकी भावुकता स्पष्ट झलकती है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

छोटा जादूगर

कार्निवल के मैदान में बिजली जगमगा रही थी। हँसी और विनोद का कलनाद गूँज रहा था। मैं खड़ा था उस छोटे फुहारे के पास, जहाँ एक लड़का चुपचाप शरबत पीने वालों को देख रहा था। उसके गले में फटे कुरते के ऊपर से एक मोटी-सी सूत की रस्सी पड़ी थी और जेब में कुछ ताश के पत्ते थे। उसके मुंह पर गम्भीर विषाद के साथ धैर्य की रेखा थी। मैं उसकी ओर न जाने क्यों आकर्षित हुआ। उसके अभाव में भी सम्पूर्णता थी। मैंने पूछा—क्यों जी तुमने इसमें क्या देखा ?

'मैंने सब देखा है। यहाँ चूड़ी फेंकते हैं। खिलौनों पर निशाना लगाते हैं। तीर से नम्बर छेदते हैं। मुझे तो खिलौनों पर निशाना लगाना अच्छा मालूम हुआ। जादूगर तो बिलकुल निकम्मा है। उससे अच्छा तो ताश का खेल मैं ही दिखा सकता हूँ।'—उसने बड़े जोश से कहा। उसकी वाणी में कहीं रुकावट न थी।

मैंने पूछा—और उस परदे में क्या है ? वहां तुम गए थे ?

'नहीं, वहाँ मैं नहीं जा सका। टिकट लगता है।'

मैंने कहा—तो चलो मैं वहाँ पर तुमको लिवा चलूँ। मैंने मन-ही-मन कहा—'भाई ! आज के तुम्हीं मित्र रहे।'

उसने कहा—वहां जाकर क्या कीजियेगा ? चलिए निशाना लगाया जाय।

मैंने उससे सहमत होकर कहा—तो फिर चलो पहले शरबत पी लिया जाय। उसने हाँ के बहाने सिर हिला दिया।

मनुष्यों की भीड़ से जाड़े की संध्या भी वहाँ गर्म हो रही थी। हम दोनों शरबत पीकर निशाना लगाने चले। राह में ही उससे पूछा—तुम्हारे और कौन है ?

'माँ और बाबूजी।'

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

'उन्होंने तुमको यहाँ आने के लिए मना नहीं किया ?'

'बाबूजी जेल में हैं।'

'क्यों ?'

'देश के लिए।'—वह गर्व से बोला।

'और तुम्हारी माँ ?'

'वह बीमार है।'

'और तुम तमाशा देख रहे हो ?'

उसके मुँह पर तिरस्कार की हँसी फूट पड़ी। उसने कहा—तमाशा देखने नहीं, दिखाने निकला हूँ। कुछ पैसे ले जाऊँगा, तो माँ को पथ्य दूँगा। मुझे शरबत न पिला कर आपने मेरा खेल देखकर मुझे कुछ दे दिया होता, तो मुझे अधिक तसल्ली होती !

मैं आश्चर्य से उस तेरह-चौदह वर्ष के लड़के को देखने लगा।

'हाँ, मैं सच कहता हूँ बाबू जी ! माँ जी बीमार हैं; इसलिए मैं नहीं गया।'

'कहाँ ?'

'जेल में ! जब कुछ लोग खेल-तमाशा देखते ही हैं, तो मैं क्यों न दिखाकर माँ की दवा करूँ और अपना भी पेट भरूँ।'

मैंने दीर्घ निःश्वास लिया। चारों ओर बिजली के लट्टू नाच रहे थे। मन व्यग्र हो उठा। मैंने उससे कहा—अच्छा चलो, निशाना लगाया जाय।

हम दोनों उस जगह पर पहुँचे, जहाँ खिलौनों को गेंद से गिराया जाता था। मैंने बारह टिकट खरीदकर उस लड़के को दिये।

वह निकला पक्का निशानेबाज। उसका गेंद कोई खाली नहीं गया। देखने वाले दंग रह गये। उसने बारह खिलौनों को बटोर लिया ; लेकिन उठाता कैसे ? कुछ मेरे रूमाल में बँधे, कुछ जेब में रख लिये गये।

लड़के ने कहा—बाबूजी, आपको तमाशा दिखाऊँगा। बाहर आइए। मैं चलता हूँ। वह नौ-दो ग्यारह हो गया। मैंने मन-ही-मन कहा—'इतनी जल्द आँख बदल गई।'

मैं घूमकर पान की दूकान पर आ गया। पान खाकर बड़ी देर तक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इधर-उधर टहलता देखता रहा। झूले के पास लोगों का ऊपर-नीचे आना देखने लगा। अकस्मात् किसी ने ऊपर के हिंडोले से पुकारा—बाबूजी !

मैंने पूछा—कौन ?

'मैं हूँ छोटा जादूगर।'

[२]

कलकत्ता के सुन्दर बोटानिकल-उद्यान में लाल कमलिनी से भरी हुई एक छोटी-सी झील के किनारे घने वृक्षों की छाया में अपनी मंडली के साथ बैठा हुआ मैं जलपान कर रहा था। बातें हो रही थीं। इतने में वही छोटा जादूगर दिखाई पड़ा। हाथ में चारखाने की खादी का झोला, साफ जाँघिया और आधी बाहों का कुरता। सिर पर मेरा रूमाल सूत की रस्सी से बँधा हुआ था। मस्तानी चाल से झूमता हुआ आकर कहने लगा :—

'बाबूजी नमस्ते ! आज कहिए तो खेल दिखाऊँ।'

'नहीं जी, अभी हम लोग जलपान कर रहे हैं।'

'फिर इसके बाद क्या गाना-बजाना होगा, बाबूजी ?'

'नहीं जी—तुमको···' मैं क्रोध से कुछ और कहने जा रहा था, श्रीमतीजी ने कहा—दिखलाओ जी, तुम तो अच्छे आये। भला कुछ मन तो बहले। मैं चुप हो गया; क्योंकि श्रीमतीजी की बोली में वह माँ की-सी मिठास थी, जिसके सामने किसी भी लड़के को रोका नहीं जा सकता। उसने खेल आरम्भ किया।

उस दिन कार्निवल के सब खिलौने उसके खेलने में अपना अभिनय करने लगे। भालू मनाने लगा। बिल्ली रूठने लगी। बन्दर घुड़कने लगा।

गुड़िया का ब्याह हुआ। गुड्डा वर काना निकला। लड़के की बातों से ही खेल हो रहा था। सब हँसते-हँसते लोट-पोट हो गये।

मैं सोच रहा था। बालक को जरूरतों ने कितना शीघ्र चतुर बना दिया। यही तो संसार है।

ताश के सब पत्ते लाल हो गये। फिर सब काले हो गये। गले की सूत की डोरी टुकड़े-टुकड़े होकर जुड़ गई। लट्टू अपने से नाच रहे थे। मैंने कहा—अब हो चुका। अपना खेल बटोर लो, हम लोग भी अब जायेंगे।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्रीमती जी ने धीरे से उसे एक रुपया दे दिया। वह उछल उठा।

मैंने कहा—लड़के !

'छोटा जादूगर कहिए। यही मेरा नाम है। इसी से मेरी जीविका है।'

मैं कुछ बोलना ही चाहता था कि श्रीमती जी ने कहा—अच्छा तुम इस रुपये से क्या करोगे ?

'पहले भरपेट पकौड़ी खाऊंगा। फिर एक सूती कम्बल लूंगा।' मेरा क्रोध अब लौट आया। मैं अपने पर बहुत क्रुद्ध होकर सोचने लगा—ओह ! कितना स्वार्थी हूँ मैं। उसके एक रुपया पाने पर मैं ईर्ष्या करने लगा था न।

वह नमस्कार करके चला गया। हम लोग लता-कुंज देखने के लिए चले।

उस छोटे से वनावटी जंगल में संध्या साँय-साँय करने लगी थी। डबते हुए सूर्य की अन्तिम किरण पेड़ों की पत्तियों से विदाई ले रही थी। चारों ओर सुनसान था। हम लोग धीरे-धीरे मोटर से हावड़ा की ओर आ रहे थे।

रह-रहकर छोटा जादूगर स्मरण हो आता था। सचमुच वह एक झोंपड़ी के पास कम्बल कन्धे पर डाले खड़ा था। मैंने मोटर रोककर उससे पूछा—तुम यहाँ कहाँ ?

'मेरी माँ यहीं है न। अब उसे अस्पताल वालों ने निकाल दिया है।' मैं उतर गया। उस झोंपड़ी में देखा, तो एक स्त्री चिथड़ों से लदी हुई काँप रही थी।

छोटे जादूगर ने कम्बल ऊपर डालकर उसके शरीर से चिमटते हुए कहा—माँ !

मेरी आँखों से आँसू निकल पड़े।

[३]

बड़े दिन की छुट्टी बीत चली थी। मुझ अपने आफिस में समय से पहुँचना था। कलकत्ता से मन ऊब गया था। फिर भी चलते-चलते एक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बार उस बाग़ को देखने की इच्छा हुई। साथ-ही-साथ जादूगर भी दिखाई पड़ जाता, तो और भी...मैं उस दिन अकेले ही चल पड़ा। जल्द लौट आना था।

दस बज चुके थे। मैंने देखा कि उस साफ धूप में सड़क के किनारे एक कपड़े पर छोटे जादूगर का रंगमञ्च सजा था। मोटर रोककर उतर पड़ा। वहाँ बिल्ली रूठ रही थी। भालू मनाने चला था, ब्याह की तैयारी थी; पर यह सब होते हुए भी जादूगर की वाणी में वह प्रसन्नता की तरी नहीं थी। जब वह औरों को हँसाने की चेष्टा कर रहा था, तब जैसे स्वयं काँप जाता था। मानो उसके रोएँ रो रहे थे। मैं आश्चर्य से देख रहा था। खेल हो जाने पर पैसा बटोरकर उसने भीड़ में मुझे देखा। वह जैसे क्षण-भर के लिए स्फूर्तिमान हो गया। मैंने उसकी पीठ थपथपाते हुए पूछा—आज तुम्हारा खेल जमा क्यों नहीं ?

'माँ ने कहा है कि आज तुरन्त चले आना। मेरी घड़ी समीप है।' अविचल भाव से उसने कहा।

तब भी तुम खेल दिखलाने चले आये !' मैंने कुछ क्रोध से कहा। मनुष्य के सुख-दुःख का माप अपना ही साधन तो है। उसी के हिसाब से वह तुलना करता है।

उसने कहा—न क्यों आता !

और कुछ अधिक कहने में जैसे वह अपमान का अनुभव कर रहा था।

क्षण भर में मुझे अपनी भूल मालूम हो गई। उसके झोले को गाडी में फेंककर उसे भी बैठाते हुए मैंने कहा—'जल्दी चलो।' मोटर वाला मेरे बताये हुए पथ पर चल पड़ा।

कुछ ही मिनटों में मैं झोंपड़े के पास पहुँचा। जादूगर दौड़ कर झोंपड़े में "माँ-माँ" पुकारते हुए घुसा। मैं भी पीछे था; किन्तु स्त्री के मुँह से बे...निकलकर रह गया। उसके दुर्बल हाथ उठकर गिर पड़े। जादूगर उससे लिपटा रो रहा था, मैं भौचक्का खड़ा था। उस साफ धूप में सारा संसार जैसे जादू-सा मेरे चारों ओर नाच रहा था।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पं० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी

(१८८३-१९२२)

श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरी का जन्म जयपुर में हुआ था। प्रयाग विश्व-विद्यालय से उन्होंने प्रथम श्रेणी में बी० ए० पास किया था। कुछ दिन मेयो कालेज अजमेर में अध्यापन कार्य करके आप काशी विश्वविद्यालय में संस्कृत के अध्यापक होकर चले गए, वहीं कार्य करते हुए आपका देहान्त हो गया। गुलेरीजी बहुमुखी प्रतिभा के विद्वान् थे उन्होंने जीवन भर साहित्य सेवा की। यद्यपि वे कहानीकार के रूप में प्रसिद्ध हैं, किन्तु उन्होंने निबन्ध और आलोचना के रूप में भी रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। गुलेरीजी ने कई पत्रों का सम्पादन किया था, तथा भाषा-विज्ञान और पुरातत्त्व विषयों में अच्छी प्रतिभा प्राप्त की थी।

गुलेरीजी की तीन कहानियों में "उसने कहा था" कहानी अमर है। इस एक कहानी ने हिन्दी साहित्य में उनका नाम अमर कर दिया। आज इस कहानी की गणना विश्व की सर्वश्रेष्ठ कहानियों में की जाती है। संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित होते हुए भी उन्होंने सदैव जन-सुलभ, सरल और सरस भाषा का प्रयोग किया है। उनकी भाषा भावानुकूल और पूर्ण व्यावहारिक है। शैली की दृष्टि से आप एक अद्वितीय लेखक हैं। भाषा की सरसता के कारण उनकी रचना-शैली सजीव और रोचक बन गई है। गुलेरीजी की शैली में व्यंग्य और विनोद की मात्रा अधिक है।

प्रस्तुत कहानी गुलेरीजी की सर्वोत्कृष्ट कहानी है। इस कहानी में कहानी कला की दृष्टि से सभी तत्त्वों को समुचित स्थान मिला है। कहानी का आधार एक बालक और बालिका की साधारण घटना है। किन्तु बाल्यावस्था का प्रेम आगे चलकर पवित्र कर्त्तव्य के रूप में परिणत हो जाता है। इस कहानी से निश्छल प्रेम, प्रबल विश्वास और पवित्र प्रीति को कलात्मक दृष्टि से देखा

कहानी संकेत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जा सकता है। एक भारतीय नारी पर-पुरुष की कितनी पवित्रता से श्रद्धा-पात्र बनती है, और एक भारतीय सिपाही किस प्रकार हँसते-हँसते कर्त्तव्य-पालन के लिये प्राणों का उत्सर्ग कर देता है, इस बात को गुलेरी जी ने बहुत अच्छ ढंग से सामने रखा है। यही कारण है कि इस कहानी को बार-बार पढ़ा जाता है। भाषा और शैली की दृष्टि से इसमें वे सब गुण हैं जो एक श्रेष्ठ कहानी में होने चाहिएँ ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उसने कहा था

बड़े-बड़े शहरों के इक्के-गाड़ीवालों की ज़बान के कोड़ों से जिनकी पीठ छिल गई है और कान पक गए हैं, उनसे हमारी प्रार्थना है कि अमृतसर के बम्बूकार्टवालों की बोली का मरहम लगावें। जब बड़े-बड़े शहरों की चौड़ी सड़कों पर घोड़े की पीठ को चाबुक से धुनते हुए, इक्केवाले कभी घोड़े की नानी से अपना निकट-सम्बन्ध स्थिर करते हैं, कभी राह चलते पैदलों की आँखों के न होने पर तरस खाते हैं, कभी उनके पैरों की अँगुलियों के पोरों को चीथकर अपने-ही को सताया हुआ बताते हैं, और संसार भर की ग्लानि, निराशा और क्षोभ के अवतार बने, नाक की सीध चले जाते हैं, तब अमृतसर में उनकी बिरादरी वाले तंग चक्करदार गलियों में, हर-एक लड्ढीवाले के लिए ठहरकर, सब्र का समुद्र उमड़ाकर 'बचो खालसा जी!' 'हटो भाई जी!' 'ठहरना भाई!' 'आने दो लाला जी!' 'हटो बाछा!'* कहते हुए सफेद फेटों, खच्चरों और बतकों, और गन्ने, खोमचे और भारेवालों के जंगल में से राह खेते हैं। क्या मजाल है, कि 'जी' और 'साहब' बिना सुने किसी को हटना पड़े। यह बात नहीं कि उनकी जीभ चलती ही नहीं है, वह चलती है—मीठी छुरी की तरह महीन मार करती हुई। यदि कोई बुढ़िया बार-बार चितौनी देने पर भी लीक से नहीं हटती, तो उनकी वचनावली के ये नमूने हैं—हट जा जीणे जोगिए; हट जा करमाँ वालिए; हट जा पुत्ताँ प्यारिए; बच जा लम्बी उमराँ वालिए। समष्टि में इनके अर्थ हैं, कि तू जीने योग्य है, तू भाग्यों वाली है, पुत्रों को प्यारी है, लम्बी उमर तेरे सामने है, तू क्यों मेरे पहिये के नीचे आना चाहती है?—बच जा।

ऐसे बम्बूकार्टवालों के बीच में होकर एक लड़का और एक लड़की चौक

*बादशाह

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

की एक दूकान पर आ मिले। उसके बालों और इसके ढीले सुथने से जान पड़ता था कि दोनों सिक्ख हैं। वह अपने मामा के केश धोने के लिए दही लेने आया था और यह रसोई के लिए बड़ियाँ। दूकानदार एक परदेसी से गुथ रहा था, जो सेर भर गीले पापड़ों की गड्डी को गिने बिना हटता न था।

'तेरे घर कहाँ हैं?'

'मगरे में;—और तेरे?'

'माँझे में;—यहाँ कहाँ रहती है?'

'अतरसिंह की बैठक में, वे मेरे मामा हैं।

'मैं भी मामा के यहाँ आया हूँ, उनका घर गुरु बाजार में है।'

इतने में दूकानदार निबटा और इनको सौदा देने लगा। सौदा लेकर दोनों साथ-साथ चले। कुछ दूर जाकर लड़के ने मुस्करा कर पूछा—'तेरी कुड़माई* हो गई?'

इस पर लड़की कुछ आँखें चढ़ाकर 'धत्' कहकर दौड़ गई, लड़का मुँह देखता रह गया।

दूसरे-तीसरे दिन सब्जीवाले के यहाँ, दूधवाले के यहाँ अकस्मात् दोनों मिल जाते। महीना भर यही हाल रहा। दो-तीन बार लड़के ने फिर पूछा—'तेरी कुड़माई हो गई?' और उत्तर में वही 'धत्' मिला। एक दिन जब फिर लड़के ने वैसे ही हँसी में चिढ़ाने के लिए पूछा तो लड़की, लड़के की सम्भावना के विरुद्ध, बोली—'हाँ हो गई।'

'कब?'

'कल; देखते नहीं, यह रेशम से कढ़ा हुआ सालू†।'

लड़की भाग गई। लड़के ने घर की राह ली। रास्ते में एक लड़के को मोरी में ढकेल दिया, एक छाबड़ीवाले की दिन भर की कमाई खोई, एक कुत्ते पर पत्थर मारा और एक गोभीवाले के ठेले में दूध उँड़ेल दिया। सामने नहाकर आती हुई किसी वैष्णवी से टकराकर अंधे की उपाधि पाई, तब कहीं घर पहुँचा।

---

*मंगनी †ओढ़नी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

[२]

'राम-राम, यह भी कोई लड़ाई है ! दिन-रात खन्दकों में बैठे हड्डियाँ अकड़ गई। लुधियाना से दस-गुना जाड़ा और मेह और बरफ ऊपर से। पिंडलियों तक कीचड़ में धँसे हुए हैं, ग़नीम कहीं दिखता नहीं;—घंटे-दो घंटे में कान के परदे फाड़ने वाले धमाके के साथ सारी खन्दक हिल जाती है और सौ-सौ गज धरती उछल पड़ती है। इस गैबी गोले से बचे तो कोई लड़े। नगरकोट का ज़लज़ला सुना था, यहाँ दिन में पचीस ज़लज़ले होते हैं। जो कहीं खन्दक से बाहर साफा या कुहनी निकल गई तो चटाक से गोली लगती है। न मालूम बेईमान मिट्टी में लेटे हुए हैं या घास की पत्तियों में छिपे रहते हैं।'

'लहनासिंह, और तीन दिन हैं। चार तो खन्दक में बिता ही दिये। परसों 'रिलीफ' आ जायगी, और फिर सात दिन की छुट्टी। अपने हाथों झटका* करेंगे और पेट भर खाकर सो रहेंगे। उसी फिरंगी† मेम के बाग में—मखमल की-सी हरी घास है। फल और दूध की वर्षा कर देती है। लाख कहते हैं, दाम नहीं लेती। कहती है, तुम राजा हो, मेरे मुल्क को बचाने आये हो।'

'चार दिन तक पलक नहीं झँपी। बिना फेरे घोड़ा बिगड़ता है और बिना लड़े सिपाही। मुझे तो संगीन चढ़ाकर मार्च का हुक्म मिल जाय। फिर सात जर्मनों को अकेला मारकर न लौटूँ, तो मुझे दरबार साहब की देहली पर मत्था टेकना नसीब न हो। पाजी कहीं के, कलों के घोड़े—संगीन देखते ही मुँह फाड़ देते हैं, और पैर पकड़ने लगते हैं। यों अँधेरे में तीस-तीस मन का गोला फेंकते हैं। उस दिन धावा किया था—चार मील तक एक जर्मन नहीं छोड़ा था। पीछे जनरल साहब ने हट आने का कमान दिया, नहीं तो—'

'नहीं तो सीधे बर्लिन पहुँच जाते। क्यों ?'—सूबेदार हजारासिंह ने मुस्करा कर कहा—'लड़ाई के मामले जमादार या नायक के चलाये

---

*बकरा मारना †फ्रेंच

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नहीं चलते। बड़े अफसर दूर की सोचते हैं। तीन सौ मील का सामना है। एक तरफ बढ़ गये तो क्या होगा ?'

'सूबेदार जी, सच है'—लहनासिंह बोला—'पर करें क्या ? हड्डियों-हड्डियों में तो जाड़ा धँस गया है। सूर्य निकलता नहीं, और खाई में दोनों तरफ से चम्बे की बावलियों के-से सोते झर रहे हैं। एक धावा हो जाय, तो गरमी आ जाय।'

'उदमी उठ, सिगड़ी में कोयले डाल; वजीरा, तुम चार जने बाल-टियाँ लेकर खाई का पानी बाहर फेंको। महासिंह, शाम हो गई है, खाई के दरवाजे का पहरा बदला दे।'—यह कहते हुए सूबेदार सारी खन्दक में चक्कर लगाने लगे।

वजीरासिंह पलटन का विदूषक था। बाल्टी में गँदला पानी भरकर खाई से बाहर फेंकता हुआ बोला—'मैं पाधा बन गया हूँ। करो जर्मनी के बादशाह का तर्पण !'—इस पर सब खिलखिला पड़े, और उदासी के बादल फट गये।

लहनासिंह ने दूसरी बाल्टी भर उसके हाथ में देकर कहा—'अपनी बाड़ी के खरबूजों में पानी दो। ऐसा खाद का पानी पंजाब भर में नहीं मिलेगा।'

'हाँ देश क्या है, स्वर्ग है। मैं तो लड़ाई के बाद सरकार से दस घुमा* जमीन यहाँ माँग लूँगा और फलों के बूटे† लगाऊँगा।'

'लाड़ी होराँ‡ को भी यहाँ बुला लोगे ? या वही दूध पिलाने वाली फिरंगी मेम—'

'चुप कर, यहाँ वालों को शरम नहीं।'

'देश-देश की चाल है। आज तक मैं उसे समझा न सका कि सिक्ख तम्बाखू नहीं पीते। वह सिगरेट देने में हठ करती है, ओठों में लगाना चाहती है और पीछे हटता हूँ, तो समझती है, कि राजा बुरा मान गया, अब मेरे मुलक के लिए लड़ेगा नहीं।'

'अच्छा, अब बोधासिंह कैसा है ?'

---

*जमीन की एक नाप †पेड़ ‡स्त्री का आदरसूचक शब्द

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

'अच्छा है।'

'जैसे मैं जानता ही न होऊँ ! रात भर तुम अपने दोनों कम्बल उसे उढ़ाते हो और आप सिगड़ी के सहारे गुज़र करते हो। उसके पहरे पर आप पहरा दे आते हो। अपने सूखे लकड़ी के तख्तों पर उसे सुलाते हो, आप कीचड़ में पड़े रहते हो। कहीं तुम न माँदे पड़ जाना। जाड़ा क्या है मौत है, और 'निमोनिया' में मरने वालों को मुरब्बे* नहीं मिला करते।'

'मेरा डर मत करो। मैं तो बुलेल की खड्ड के किनारे मरूँगा। भाई कीरतसिंह की गोदी पर मेरा सिर होगा और मेरे हाथ के लगाए हुए आँगन के पेड़ की छाया होगी।'

वजीरासिंह ने त्यौरी चढ़ाकर कहा—'क्या मरने-मारने की बात लगाई है ? मरें जर्मनी और तुरक ! हाँ भाइयो, कैसे—'

और फिर मस्त होकर सबने एक गीत गाया।

कौन जानता था कि दाढ़ियोंवाले, घरबारी सिक्ख ऐसा लुच्चों का गीत गायेंगे, पर सारी खन्दक इस गीत से गूँज उठी और सिपाही फिर ताजे हो गये मानो चार दिन से सोते और मौज ही करते रहे हों ?

[३]

दो पहर रात गई है। अन्धेरा है। सन्नाटा छाया हुआ है। बोधासिंह खाली बिस्कुटों के तीन टिनों पर, अपने दोनों कम्बल बिछाकर और लहनासिंह के दो कम्बल और बरानकोट† ओढ़कर सो रहा है। लहनासिंह पहरे पर खड़ा हुआ है। एक आँख खाई के मुँह पर है और एक बोधासिंह के दुबले शरीर पर। बोधासिंह कराहा।

'क्यों बोधा भाई, क्या है ?'

'पानी पिला दो।'

लहनासिंह ने कटोरा उसके मुँह से लगाकर पूछा—'कहो कैसे हो ?' पानी पीकर बोधा बोला—'कँपनी छुट रही है। रोम-रोम में तार दौड़ रहे हैं। दाँत बज रहे हैं।'

---

*नई नहरों के पास वर्गभूमि †ओवरकोट

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

'अच्छा, मेरी जरसी पहन लो।'

'और तुम ?'

'मेरे पास सिगड़ी है और मुझे गर्मी लगती है। पसीना आ रहा है।'

'ना, मैं नहीं पहनता; चार दिन से तुम मेरे लिए—'

'हाँ याद आई। मेरे पास दूसरी गरम जरसी है। आज सबेरे ही आई है। विलायत से मेमें बुन-बुनकर भेज रही हैं। गुरु उनका भला करे।' यों कहकर लहना अपना कोट उतार कर जरसी उतारने लगा।

'सच कहते हो ?'

'और नहीं झूठ ?'—यों कहकर नाहीं करते बोधा को उसने जबरदस्ती जरसी पहना दी और आप खाकी कोट और जीन का कुरता भर पहनकर पहरे पर आ खड़ा हुआ। मेम की जरसी की कथा केवल कथा थी।

आधा घंटा बीता। इतने में खाई के मुँह से आवाज आई—'सूबेदार हजारासिंह !'

'कौन लपटन साहब ? हुकुम हुजूर'—कहकर सूबेदार तनकर फौजी सलाम करके सामने हुआ।

'देखो, इसी समय धावा करना होगा। मील भर की दूरी पर पूरब के कोने में एक जर्मन खाई है। उसमें पचास से जियादह जर्मन नहीं हैं। इन पेड़ों के नीचे-नीचे दो खेत काटकर रास्ता है। तीन-चार घुमाव हैं। जहाँ मोड़ है वहाँ पन्द्रह जवान खड़े कर आया हूँ। तुम यहाँ दस आदमी छोड़कर सबको साथ ले उनसे जा मिलो। खन्दक छीन कर वहीं, जब तक दूसरा हुक्म न मिले, डटे रहो। हम यहाँ रहेगा।'

'जो हुक्म।'

चुपचाप सब तैयार हो गये। बोधा भी कम्बल उतारकर चलने लगा। तब लहनासिंह ने उसे रोका। लहनासिंह आगे हुआ तो बोधा के बाप सूबेदार ने उँगली से बोधा की ओर इशारा किया। लहनासिंह समझकर चुप हो गया। पीछे दस आदमी कौन रहें, इस पर बड़ी हुज्जत हुई। कोई रहना न चाहता था। समझा-बुझाकर सूबेदार ने मार्च किया। लपटन साहब लहना की सिगड़ी के पास मुँह फेरकर खड़े हो गये और जेब से सिगरेट

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

निकाल कर सुलगाने लगे। दस मिनट बाद उन्होंने लहना की ओर हाथ बढ़ाकर कहा—'लो तुम भी पियो।'

आँख मारते-मारते लहनासिंह सब समझ गया। मुँह का भाव छिपाकर बोला—'लाओ साहब'—हाथ आगे करते ही उसने सिगरेट के उजाले में साहब का मुँह देखा। बाल देखे। तब उसका माथा ठनका। लपटन साहब के पट्टियों वाले बाल एक दिन में कहाँ उड़ गये और उनकी जगह कैदियों-से कटे हुए बाल कहाँ से आ गये ?

शायद साहब शराब पिये हुए हैं और उन्हें बाल कटवाने का मौका मिल गया है ? लहनासिंह ने जाँचना चाहा। लपटन साहब पाँच वर्ष से उसकी रेजिमेंट में थे।

'क्यों साहब हम लोग हिन्दुस्तान कब जायेंगे ?'

'लड़ाई खत्म होने पर। क्यों, क्या यह देश पसन्द नहीं ?'

'नहीं साहब, शिकार के वे मज़े यहाँ कहाँ ? याद है, पारसाल नकली लड़ाई के पीछे हम आप जगाधरी जिले में शिकार करने गये थे—'हाँ हाँ'—वहीं जब आप खोते* पर सवार थे और आपका खानसामा अब्दुल्ला रास्ते के एक मन्दिर में जल चढ़ाने को रह गया था। 'बेशक पाजी कहीं का'—सामने से वह नीलगाय निकली कि ऐसी बड़ी मैंने कभी न देखी थी और आपकी एक गोली कन्धे में लगी और पुट्ठे में निकली। ऐसे अफसर के साथ शिकार खेलने में मजा है। क्यों साहब, शिमले से तैयार होकर उस नीलगाय का सिर आ गया था न ? आपने कहा था कि 'रेजिमेंट की मेस में लगायेंगे।'—'हो, पर मैंने वह विलायत भेज दिया।'

'ऐसे बड़े-बड़े सींग ! दो-दो फुट के तो होंगे !'

'हाँ लहनासिंह, दो फुट चार इंच के थे। तुमने सिगरेट नहीं पिया ?'

'पीता हूँ साहब, दियासलाई ले आता हूँ'—कहकर लहनासिंह खन्दक में घुसा। अब उसे सन्देह नहीं रहा था। उसने झटपट निश्चय कर लिया कि क्या करना चाहिए।

अँधेरे में किसी सोनेवाले से वह टकराया।

---

*गधा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

'कौन ? वजीरासिंह ?'

'हाँ, क्यों लहनासिंह ? क्या कयामत आ गई ? जरा तो आँख लगने दी होती ?'

[४]

'होश में आओ। कयामत आई है और लपटन साहब की वर्दी पहन कर आई है।'

'क्या ?'

'लपटन साहब या तो मारे गये हैं या कैद हो गये हैं। उनकी वर्दी पहनकर यह कोई जर्मन आया है। सूबेदार ने इसका मुँह नहीं देखा। मैंने देखा और बातें की हैं। सौहरा* साफ उर्दू बोलता है, पर किताबी उर्दू और मुझे पीने को सिगरेट दिया।'

'तो अब ?'

'अब मारे गये। धोखा है। सूबेदार होराँ कीचड़ में चक्कर काटते फिरेंगे और यहाँ खाई पर धावा होगा। इधर उन पर खुले में धावा होगा। उठो, एक काम करो। पल्टन के पैरों के निशान देखते-देखते दौड़ जाओ। अभी बहुत दूर न गये होंगे। सूबेदार से कहो कि एकदम लौट आवें। खन्दक की बात झूठ है। चले जाओ, खन्दक के पीछे से निकल जाओ। पत्ता तक न खड़के। देर मत करो।'

'हुकुम तो यह है कि यहीं—'

'ऐसी-तैसी हुकुम की ! मेरा हुकुम—जमादार लहनासिंह, जो इस वक्त यहाँ सबसे बड़ा अफसर है उसका हुकुम है। मैं लपटन साहब की खबर लेता हूँ।'

'पर यहाँ तो तुम आठ ही हो।'

'आठ नहीं, दस लाख। एक-एक अकालिया सिक्ख सवा लाख के बराबर होता है। चले जाओ।'

लौटकर खाई के मुहाने पर लहनासिंह दीवार से चिपक गया। उसने

---

*सुसरा (गाली)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

देखा कि लपटन साहब ने जेब से बेल के बराबर तीन गोले निकाले, तीनों को जगह-जगह खन्दक की दीवारों में घुसेड़ दिया और तीनों में एक तार-सा बाँध दिया। तार के आगे सूत की एक गुत्थी थी, जिसे सिगड़ी के पास रखा। बाहर की तरफ कर एक दियासलाई जलाकर गुत्थी पर रखने—

बिजली की तरह दोनों हाथों से उल्टी बन्दूक उठाकर लहनासिंह ने साहब की कुहनी पर तान कर दे मारा। धमाके के साथ साहब के हाथ से दियासलाई गिर पड़ी। लहनासिंह ने एक कुन्दा साहब की गर्दन पर मारा और साहब 'आँख ! मीन गौट्ट' कहते हुए चित्त हो गये। लहनासिंह ने तीनों गोले बीनकर खन्दक से बाहर फेंके और साहब को घसीटकर सिगड़ी के पास लिटाया। जेबों की तलाशी ली। तीन-चार लिफाफे और एक डायरी निकाल कर उन्हें अपनी जेब के हवाले किया।

साहब की मूर्च्छा हटी। लहनासिंह हँसकर बोला—'क्यों लपटन साहब ! मिज़ाज कसा है ? आज मैंने बहुत बातें सीखीं। यह सीखा कि सिक्ख सिगरेट पीते हैं। यह सीखा कि जगाधरी के जिले में नीलगायें होती हैं और उनके दो फुट चार इंच के सींग होते हैं। यह सीखा कि मुसलमान खानसामा मूर्तियों पर जल चढ़ाते हैं और लपटन साहब खोते पर चढ़ते हैं। पर यह तो कहो, ऐसी साफ उर्दू कहाँ से सीख आये ! हमारे लपटन साहब तो बिना 'डैम' के पाँच लफ्ज भी नहीं बोला करते।'

लहना ने पतलून के जेबों की तलाशी नहीं ली थी। साहब ने मानो जाड़े से बचने के लिए, दोनों हाथ जेब में डाले।

लहनासिंह कहता गया—'चालाक तो बड़े हो, पर माँझे का लहना इतने बरस लपटन साहब के साथ रहा है। उसे चकमा देने के लिए चार आँखें चाहिएँ। तीन महीने हुए एक तुरकी मौलवी मेरे गांव में आया था। औरतों को बच्चे होने की तावीज़ बाँटता था और बच्चों को दवाई देता था। चौधरी के बड़ के नीचे मंजा बिछाकर हुक्का पीता रहता था और कहता था जर्मनीवाले बड़े पण्डित हैं। वेद पढ़-पढ़ कर उसमें से विमान चलाने की विद्या जान गये हैं। गौ को नहीं मारते। हिन्दुस्तान में आ जायेंगे तो हत्या बन्द कर देंगे। मण्डी के बनियों को बहकाता था कि डाकखाने से रुपया निकाल लो; सरकार का राज्य जाने वाला है। डाक-बाबू पोल्हूराम

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भी डर गया था। मैंने मुल्ला जी की दाढ़ी मूँड़ दी थी और गाँव से बाहर निकाल कर कहा था कि मेरे गाँव में अब पैर रक्खा तो—'

साहब की जेब में से पिस्तौल चली और लहना की जाँघ में गोली लगी; इधर लहना की हैनरीमार्टिनी के दो फायरों ने साहब की कपाल-क्रिया कर दी। धड़ाका सुनकर सब दौड़ आये।

बोधा चिल्लाया—'क्या है ?'

लहनासिंह ने उसे यह कहकर सुला दिया कि 'एक हड़का हुआ कुत्ता आया था, मार दिया' और औरों से सब हाल कह दिया। सब बन्दूकें लेकर तैयार हो गये। लहना ने साफा फाड़कर घाव के दोनों तरफ पट्टियाँ कसकर बाँधीं। घाव मांस में ही था। पट्टियों के कसने से लहू निकलना बन्द हो गया।

इतने में सत्तर जर्मन चिल्लाकर खाई में घुस पड़े। सिक्खों की बन्दूकों की बाढ़ ने पहले धावे को रोका। दूसरे को रोका। पर यहाँ थे आठ (लहनासिंह तक-तक कर मार रहा था—वह खड़ा था, और लेटे हुए थे) और वे सत्तर। अपने मुर्दा भाइयों के शरीर पर चढ़ कर जर्मन आगे घुसे आते थे। थोड़े-से मिनटों में वे.....

अचानक आवाज़ आई 'वाह गुरुजी दी फतह! वाह गुरुजी दा खालसा !!' और धड़ाधड़ बन्दूकों के फायर जर्मनों के ऊपर पड़ने लगे। ऐन मौके पर जर्मन दो चक्की के पाटों के बीच में आ गये। पीछे से सूबेदार हजारासिंह के जवान आग बरसाते थे और सामने लहनासिंह के साथियों के संगीन चल रहे थे। पास आने पर पीछे वालों ने भी संगीन पिरोना शुरू कर दिया।

एक किलकारी और—'अकाल सिक्खाँ दी फौज आई ! वाह गुरुजी दी फतह ! वाह गुरुजी दा खालसा !! सत श्री अकाल पुरुख !!!'—और लड़ाई खतम हो गई। तिरसठ जर्मन या तो खेत रहे थे या कराह रहे थे ? सिक्खों में पन्द्रह के प्राण गये। सूबेदार के दाहिने कन्धे में से गोली आर-पार निकल गई। लहनासिंह की पसली में एक गोली लगी। उसने घाव को खन्दक की गीली मिट्टी से पूर लिया और बाकी साफा कसकर कमरबन्द की तरह लपेट लिया। किसी को खबर न हुई कि लहना को दूसरा घाव—भारी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

घाव—लगा है।

लड़ाई के समय चाँद निकल आया था, ऐसा चाँद, जिसके प्रकाश से संस्कृत-कवियों का दिया हुआ 'क्षयी' नाम सार्थक होता है और हवा ऐसी चल रही थी जैसी कि वाणभट्ट की भाषा में 'दन्तवीणोपदेशाचार्य' कहलाती। वजीरासिंह कह रहा था कि कैसे मन-मन भर फ्राँस की भूमि मेरे बूटों से चिपक रही थी जब मैं दौड़ा-दौड़ा सूबेदार के पीछे गया था। सूबेदार ने लहनासिंह से सारा हाल सुना और कागजात पाकर वे उसकी तुरन्त बुद्धि को सराह रहे थे और कह रहे थे कि तू न होता तो आज सब मारे जाते।

इस लड़ाई की आवाज तीन मील दाहिनी ओर की खाई वालों ने सुन ली थी। उन्होंने पीछे टेलीफोन कर दिया था। वहाँ से झटपट दो बीमार ढोने की गाड़ियाँ चलीं, जो कोई डेढ़ घंटे के अन्दर-अन्दर आ पहुँचीं। फील्ड अस्पताल नजदीक था। सुबह होते-होते वहाँ पहुँच जायेंगे, इसीलिए मामूली पट्टी बांधकर एक गाड़ी में घायल लिटाये गये और दूसरी में लाशें रक्खी गईं। सूबेदार ने लहनासिंह को जाँघ में पट्टी बँधवानी चाही। पर उसने यह कहकर टाल दिया कि थोड़ा घाव है सवेरे देखा जायगा। बोधासिंह ज्वर में बर्रा रहा था। वह गाड़ी में लिटाया गया। लहना को छोड़कर सूबेदार जाते नहीं थे। यह देख लहना ने कहा—'तुम्हें बोधा की कसम है, और सूबेदारनी जी की सौगन्ध है जो इस गाड़ी में न चले जाओ।'

'और तुम ?'

'मेरे लिए वहाँ पहुँच कर गाड़ी भेज देना और जर्मन मुरदों के लिए भी तो गाड़ियाँ आती होंगी। मेरा हाल बुरा नहीं है। देखते नहीं, मैं खड़ा हूँ ? वजीरासिंह मेरे पास है ही।'

'अच्छा, पर—'

'बोधा गाड़ी पर लेट गया ? भला। आप भी चढ़ जाओ। सुनिये तो, सूबेदारनी होराँ को चिट्ठी लिखो तो मेरा मत्था टेकना लिख देना। और जब घर जाओ तो कह देना कि मुझसे जो उसने कहा था वह मैंने कर दिया।'

गाड़ियाँ चल पड़ी थीं। सूबेदार ने चढ़ते-चढ़ते लहना का हाथ पकड़

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कर कहा—'तैंने मेरे और बोधा के प्राण बचाये हैं। लिखना कैसा ? साथ ही घर चलेंगे। अपनी सूबेदारनी को तू ही कह देना। उसने क्या कहा था ?'

'अब आप गाड़ी पर चढ़ जाओ। मैंने जो कहा, वह लिख देना, और कह भी देना।'

गाड़ी के जाते ही लहना लेट गया।—'वजीरा, पानी पिला दे, और मेरा कमरबन्द खोल दे। तर हो रहा है।'

[५]

मत्यु के कुछ समय पहले स्मृति बहुत साफ हो जाती है। जन्म भर की घटनाएँ एक-एक करके सामने आती हैं। सारे दृश्यों के रंग साफ होते हैं, समय की धुन्ध बिल्कुल उन पर से हट जाती है।

लहनासिंह बारह वर्ष का है। अमृतसर में मामा के यहां आया हुआ है। दहीवाले के यहाँ, सब्जीवाले के यहाँ, हर कहीं उसे एक आठ वर्ष की लड़की मिल जाती है। जब यह पूछता है 'तेरी कुड़माई हो गई है ?' तब 'धत्' कहकर वह भाग जाती है। एक दिन उसने वैसे ही पूछा, तो उसने कहा—'हाँ, कल हो गई, देखते नहीं यह रेशम के फूलोंवाला सालू ?' —सुनते ही लहनासिंह को दुःख हुआ। क्रोध हुआ। क्यों हुआ ?

'वजीरासिंह, पानी पिला दे।'

× × ×

पचीस वर्ष बीत गये। अब लहनासिंह नं० ७७ राइफल्स में जमादार हो गया है। उस आठ वर्ष की कन्या का ध्यान ही न रहा। न मालूम वह कभी मिली थी, या नहीं। सात दिन की छुट्टी लेकर जमीन के मुकदमे की पैरवी करने वह अपने घर गया। वहाँ रेजीमेंट के अफसर की चिट्ठी मिली कि फौज लाम पर जाती है, फौरन चले आओ। साथ ही सूबेदार हजारासिंह की चिट्ठी मिली कि मैं और बोधासिंह भी लाम पर जाते हैं। लौटते हुए हमारे घर होते जाना। साथ ही चलेंगे। सूबेदार का गाँव रास्ते में पड़ता था, और सूबेदार उसे बहुत चाहता था। लहनासिंह सूबेदार के

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यहां पहुँचा।

जब चलने लगे, तब सूबेदार बेड़े* में से निकल कर आया। बोला—'लहना, सूबेदारनी तुझको जानती हैं, बुलाती हैं। जा मिल आ।'—लहनासिंह भीतर पहुँचा। सूबेदारनी मुझे जानती हैं? कब से? रेजिमेंट के क्वार्टरों में तो कभी सूबेदार के घर के लोग रहे नहीं। दरवाजे पर जाकर 'मत्था टेकना!' कहा। असीस सुनी। लहनासिंह चुप।

'मुझे पहचाना?'

'नहीं।'

'तेरी कुड़माई हो गई—धत्—कल हो गई—देखते नहीं रेशमी बूटोंवाला सालू—अमृतसर में—'

भावों की टकराहट से मूर्च्छा खुली। करवट बदली। पसली का घाव बह निकला।

'वजीरा, पानी पिला'—उसने कहा था।

× × ×

स्वप्न चल रहा है। सूबेदारनी कह रही है—'मैंने तेरे को आते ही पहचान लिया। एक काम कहती हूँ। मेरे तो भाग फूट गये। सरकार ने बहादुरी का खिताब दिया है, लायलपुर में जमीन दी है, आज नमकहलाली का मौका आया है। पर सरकार ने हम तीमियों† की एक घघरिया पल्टन क्यों न बना दी, जो मैं भी सूबेदार के साथ चली जाती? एक बेटा है। फौज में भर्ती हुए उसे एक ही बरस हुआ। उसके पीछे चार और हुए, पर एक भी नहीं जिया।'—सूबेदारनी रोने लगी।—'अब दोनों जाते हैं। मेरे भाग! तुम्हें याद है, एक दिन टाँगेवाले का घोड़ा दहीवाले की दूकान के पास बिगड़ गया था। तुमने उस दिन मेरे प्राण बचाये थे। आप घोड़े की लातों में चले गये थे, और मुझे उठाकर दूकानदार के तख्ते पर खड़ा कर दिया था। ऐसे ही इन दोनों को बचाना। यह मेरी भिक्षा है। तुम्हारे आगे मैं आँचल पसारती हूँ।

---

*जनाने †स्त्रियों

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रोती-रोती सूबेदारनी ओबरी में चली गई। लहना भी आँसू पोंछता बाहर आया।

× × ×

लहना का सिर अपनी गोद में रक्खे वजीरासिंह बैठा है। जब माँगता है तब पानी पिला देता है। आध घण्टे तक लहना चुप रहा, फिर बोला—'कौन! कीरतसिंह?'

वजीरा ने कुछ समझ कर कहा—'हाँ।'

'भइया, मुझे और ऊँचा कर ले। अपने पट्ट* पर मेरा सिर रख ले।'

वजीरा ने वैसा ही किया।

'हाँ, अब ठीक है। पानी पिला दे। बस, अब के हाड़† में यह आम खूब फलेगा। चाचा-भतीजा दोनों यहीं बैठकर आम खाना। जितना बड़ा तेरा भतीजा है, उतना ही यह आम है। जिस महीने उसका जन्म हुआ था, उसी महीने में मैंने इसे लगाया था।'

वजीरासिंह के आँसू टप-टप टपक रहे थे।

कुछ दिन पीछे लोगों ने अख़बारों में पढ़ा—फ्रांस और बेलजियम—६८वीं सूची—मैदान में घावों से मरा—नं० ७७ सिक्ख राइफल्स जमादार लहनासिंह।

---

*जाँघ †आषाढ़

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यहां पहुँचा।

जब चलने लगे, तब सूबेदार बेड़े* में से निकल कर आया। बोला—'लहना, सूबेदारनी तुझको जानती हैं, बुलाती हैं। जा मिल आ।'—लहनासिंह भीतर पहुँचा। सूबेदारनी मुझे जानती हैं? कब से? रेजिमेंट के क्वार्टरों में तो कभी सूबेदार के घर के लोग रहे नहीं। दरवाजे पर जाकर 'मत्था टेकना!' कहा। असीस सुनी। लहनासिंह चुप।

'मुझे पहचाना?'

'नहीं।'

'तेरी कुड़माई हो गई—धत्—कल हो गई—देखते नहीं रेशमी बूटोंवाला सालू—अमृतसर में—'

भावों की टकराहट से मूर्च्छा खुली। करवट बदली। पसली का घाव बह निकला।

'वजीरा, पानी पिला'—उसने कहा था।

× × ×

स्वप्न चल रहा है। सूबेदारनी कह रही है—'मैंने तेरे को आते ही पहचान लिया। एक काम कहती हूँ। मेरे तो भाग फूट गये। सरकार ने बहादुरी का खिताब दिया है, लायलपुर में जमीन दी है, आज नमकहलाली का मौका आया है। पर सरकार ने हम तीमियों† की एक घघरिया पल्टन क्यों न बना दी, जो मैं भी सूबेदार के साथ चली जाती? एक बेटा है। फौज में भर्ती हुए उसे एक ही बरस हुआ। उसके पीछे चार और हुए, पर एक भी नहीं जिया।'—सूबेदारनी रोने लगी।—'अब दोनों जाते हैं। मेरे भाग! तुम्हें याद है, एक दिन टाँगेवाले का घोड़ा दहीवाले की दूकान के पास बिगड़ गया था। तुमने उस दिन मेरे प्राण बचाये थे। आप घोड़े की लातों में चले गये थे, और मुझे उठाकर दूकानदार के तख्ते पर खड़ा कर दिया था। ऐसे ही इन दोनों को बचाना। यह मेरी भिक्षा है। तुम्हारे आगे मैं आँचल पसारती हूँ।

---

*जनाने †स्त्रियों

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रोती-रोती सूबेदारनी ओबरी में चली गई। लहना भी आँसू पोंछता बाहर आया।

× × ×

लहना का सिर अपनी गोद में रक्खे वजीरासिंह बैठा है। जब माँगता है तब पानी पिला देता है। आध घण्टे तक लहना चुप रहा, फिर बोला—'कौन! कीरतसिंह?'

वजीरा ने कुछ समझ कर कहा—'हाँ।'

'भइया, मुझे और ऊँचा कर ले। अपने पट्ट* पर मेरा सिर रख ले।' वजीरा ने वैसा ही किया।

'हाँ, अब ठीक है। पानी पिला दे। बस, अब के हाड़† में यह आम खूब फलेगा। चाचा-भतीजा दोनों यहीं बैठकर आम खाना। जितना बड़ा तेरा भतीजा है, उतना ही यह आम है। जिस महीने उसका जन्म हुआ था, उसी महीने में मैंने इसे लगाया था।'

वजीरासिंह के आँसू टप-टप टपक रहे थे।

कुछ दिन पीछे लोगों ने अख़बारों में पढ़ा—फ्रांस और बेलजियम—६८वीं सूची—मैदान में घावों से मरा—नं० ७७ सिक्ख राइफल्स जमादार लहनासिंह।

---

*जाँघ †आषाढ़

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री सुदर्शन

(जन्म : १८९६ ई०)

श्री सुदर्शन का वास्तविक नाम बदरीनाथ है। आपका जन्म स्यालकोट नामक नगर में पश्चिमी पंजाब में हुआ। आपने बी० ए० तक शिक्षा प्राप्त करके साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण किया। प्रसिद्ध उपन्यास-लेखक मुंशी प्रेमचन्द की तरह आप भी उर्दू में कहानियाँ लिखा करते थे। उर्दू में भी आपने पर्याप्त ख्याति प्राप्त की। आपकी कहानियाँ 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित हुआ करती थीं। आजकल आप बम्बई में रहकर सिनेमा के लिए कहानियाँ लिखते हैं। आपके अतिरिक्त और कोई ऐसा कहानीकार नहीं है जो सफलतापूर्वक इतने समय तक निरन्तर कहानियां लिखकर सिनेमा जगत् में रुका हो।

सुदर्शनजी ने हिन्दी में बहुत-सी कहानियाँ लिखी हैं, जोकि सुदर्शन सुधा, सुदर्शन सुमन, तीर्थ-यात्रा, पुष्पलता, गल्प मंजरी, सुप्रभात, परिवर्तन आदि संग्रहों में प्रकाशित हुई हैं। कहानी के क्षेत्र में सुदर्शनजी प्रेमचन्द जी के समान लोकप्रिय लेखक सिद्ध हुए हैं। आप वस्तुतः कहानी साहित्य में प्रेमचन्दजी के उत्तराधिकारी हैं। आप आदर्शोन्मुख यथार्थवादी लेखक हैं। सूक्ष्म मनोविश्लेषण आपकी विशेषता है। मानव मनोविकारों के उद्घाटन में आप पूर्ण सफल हुए हैं। एक विद्वान् के कथनानुसार सुदर्शनजी की कहानियों में जीवन की व्याख्या मिलेगी, सुदर्शन की दृष्टि में कहानी हमारे जीवन की तथा समस्याओं की मीमांसा है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि इनकी कहानियाँ मानव की कहानियाँ हैं जिनको कहानी कला की दृष्टि से पूर्ण सफल कहा जा सकता है। आपकी भाषा सरस, सरल और स्वाभाविक है तथा शैली में वही चमत्कार है, जो प्रेमचन्द की शैली में है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

'आशीर्वाद' कहानी सुदर्शनजी की कलात्मक और विशिष्ट कहानियों में से एक है। इसमें मध्यम श्रेणी के घर की एक मार्मिक घटना का वर्णन किया गया है। लाजवन्ती को परमात्मा ने अनेक सन्तानें दीं किन्तु केवल एक सन्तान जीवित रह सकी। वही उसकी आशा का एकमात्र सहारा थी। पुत्र-प्राप्ति की प्रसन्नता में एक बार तीर्थयात्रा की तैयारी होने लगी। किन्तु रात्रि के समय हरो नामक विधवा ब्राह्मणी के रुदन की आवाज़ सुनकर उसने जाना कि उसकी पुत्री के विवाह के लिए कोई साधन उसके पास नहीं है। लाजवन्ती ने तीर्थयात्रा स्थगित कर दी और उस द्रव्य से हरो की सहायता की। गरीब की सहायता का पुण्य तीर्थयात्रा के पुण्य से भी बढ़कर सिद्ध हुआ। देवी प्रसन्न हुई, उसने लाजवन्ती को स्वप्न में उसके पुत्र के दीर्घायु होने का आशीर्वाद दिया। गरीब की सेवा से देवी भी प्रसन्न हुई। कहानी का संकेत पूर्ण आस्तिकता का संदेश देता है।

कहानी संकेत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आशीर्वाद

[१]

लाजवन्ती के यहाँ कई पुत्र पैदा हुए मगर सब-के-सब बचपन में ही मर गए। आखिरी पुत्र हेमराज उसके जीवन का सहारा था। उसका मुंह देखकर वह पहले बच्चों की मौत का गम भूल जाती थी। यद्यपि हेमराज का रंग-रूप साधारण देहाती बालकों का-सा ही था, मगर लाजवन्ती उसे सब से सुन्दर समझती थी। मातृ-वात्सल्य ने आँखों को धोखे में डाल दिया था। लाजवन्ती को उसकी इतनी चिंता रहती थी कि दिन रात उसे छाती से लगाए फिरती थी; मानो वह कोई दीपक हो, जिसे बुझाने के लिए हवा के तेज़ झोंके बार-बार आक्रमण कर रहे हों। वह उसे छिपा-छिपाकर रखती थी, कहीं उसे किसी की नज़र न लग जाए। गांव के लड़के खेतों में खेलते-फिरते हैं, मगर लाजवन्ती हेमराज को घर से बाहर न निकलने देती थी, और कभी निकल भी जाता, तो घबराकर ढूंढ़ने लग जाती थी। गाँव की स्त्रियां कहतीं—"हमारे भी तो लड़के हैं, तू जरा-सी बात में यों पागल क्यों हो जाती है ?" लाजवन्ती यह सुनती, तो उसकी आंखों में आंसू लहराने लगते। भर्राये हुए स्वर से उत्तर देती—"क्या कहूँ, मेरा जी डर जाता है !"

इस समय उसे अपने मरे हुए पुत्र याद आ जाते थे।

मगर इतना सावधान रहने पर भी हेमराज बुरी नज़र से न बच सका। प्रातःकाल का समय था; लाजवन्ती दूध दुह रही थी। इतने में हेमराज जागा और मुंह फुलाकर बोला—"माँ"!

आवाज़ में उदासी थी, लाजवन्ती के हाथ से बर्त्तन गिर गया। दौड़ती हुई, हेमराज के पास पहुँची, और प्यार से उसके सिर पर हाथ फेरकर बोली—"क्यों हेम ! क्या है बेटा ? घबराया हुआ क्यों है तू ?"

हेमराज की आँखों में आँसू डबडबा आये; रुक-रुककर बोला—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"सिर में दर्द हो रहा है।"

बात साधारण थी, मगर लाजवन्ती का हृदय काँप गया। यही दिन थे, यही ऋतु, जब उसका पहला पुत्र मदन मरा था। वह भी इसी तरह बीमार हुआ था। उस समय भी लाजवन्ती ने उसकी सेवा-शुश्रूषा में दिन-रात एक कर दिया था। मगर जो होना होता है, उसे कौन मेट सकता है? निर्दयी मृत्यु ने लाजवन्ती का सर्वस्व छीन लिया। लाजवन्ती उस समय इस दुःख से अधमरी-सी हो गयी थी। वही घटना इस समय उसकी आँखों के सामने फिर गयी। क्या अब फिर.....

लाजवन्ती के पैरों के नीचे से मिट्टी खिसकती-सी मालूम होने लगी। जिस तरह विद्यार्थी एक बार फेल होकर दूसरी बार परीक्षा में बैठते घबराता है, उसी तरह हेमराज के सिर-दर्द से लाजवन्ती व्याकुल हो गई। गाँव में दुर्गादास वैद्य अच्छे अनुभवी थे। लोग उन्हें देवता समझते थे। सैकड़ों रोगी उनके हाथों से आरोग्य पाते थे, आस-पास के गाँवों में उनका बड़ा नाम था। लाजवन्ती उड़ती हुई उनके पास पहुँची। वैद्यजी बैठे एक पुराना साप्ताहिक समाचारपत्र पढ़ रहे थे। लाजवन्ती को देखकर उन्होंने पत्र हाथ से रख दिया, और आँखों से ऐनक उतार कर बोले—"क्यों बेटी! क्या बात है?"

वैद्यजी इस गाँव के रहने वाले न थे। अवस्था भी पचास से ऊपर थी। अतएव गाँव की बहू-बेटियाँ उनसे परदा न करती थीं। लाजवन्ती ने चिंतित-सी होकर उत्तर दिया—"हेम बीमार है।"

वैद्यजी ने सहानुभूति के साथ पूछा—"कब से?"

"आज ही से; कहता है सिर में दर्द है।"

"बुखार तो नहीं?"

"मालूम तो नहीं होता। आप चलकर देख लेते तो अच्छा था।"

वैद्यजी का मनोरथ सिद्ध हुआ। उन्होंने जल्दी से कपड़े पहने और लाजवन्ती के साथ हो लिये। हेमराज बुखार से बेसुध पड़ा था। वैद्यजी ने नाड़ी देखी, माथे पर हाथ रक्खा, और फिर कहा—"कोई चिंता नहीं। दवा देता हूँ, बुखार उतर जाएगा।"

लाजवन्ती के डूबते हुए हृदय को सहारा मिल गया। उसने दुपट्टे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

के आँचल से अठन्नी खोली और वैद्यजी को भेंट कर दी। वैद्यजी ने मुँह से नहीं नहीं कहा, मगर हाथों ने मुँह का साथ न दिया।

[२]

कई दिन बीत गए, हेम का बुखार नहीं घटा। वैद्यजी ने कई दवा-इयाँ बदलीं; परन्तु किसी ने अपना असर न दिखाया। लाजवन्ती की चिंता बढ़ने लगी। वह रात-रात भर उसके सिरहाने बैठी रहती। लोग आते और धीरज दे-देकर चले जाते; परन्तु लाजवन्ती का मन उनकी बातों की ओर न था। वह अपने मन की पूरी शक्ति से हेम की सेवा में लगी रहती थी।

एक दिन उसने वैद्यजी से पूछा—"क्या बात है, जो यह बुखार नहीं उतरता ?"

वैद्यजी ने एक कटाक्ष-विशेष से, जो प्रायः वैद्य लोग ही किया करते हैं, उत्तर दिया—"मियादी बुखार है ?"

लाजवन्ती ने तड़पकर पूछा—"मियादी बुखार क्या ?"

"अपनी मियाद पूरी करके उतरेगा ?"

"पर कब तक उतरेगा ?"

"इक्कीसवें दिन उतरेगा, इससे पहले नहीं उतर सकता।"

"आज ग्यारह दिन हो गये हैं।"

"बस दस दिन और हैं। किसी तरह यह दिन निकाल दो, भगवान् भला करेगा।"

लाजवन्ती का माथा ठनका, हिचकिचाते हुए बोली—"अंदेशा तो नहीं है ? सच-सच बता दीजिए।"

वैद्यजी थोड़ी देर चुप रहे। इस समय वह सोच रहे थे कि उसे सच-सच बताएँ, या न बताएँ। आखिर बोले—"देखो, बुखार दुस्साध्य-सा है; हानिकारक भी हो सकता है। मेरी सम्मति में हेम के पिता को बुलवा लो।"

लाजवन्ती सहम गई। रेत के स्थलों को मीठे जल की नदी समझ-कर जब हरिण पास पहुँचकर देखता है कि नदी अब तक उतनी ही दूर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

है, तो जो दशा उसके मन की होती है, वही दशा इस समय लाजवन्ती की हुई। उसे आशा नहीं, निश्चय हो गया था कि हेम एक आध दिन में ठीक हो जाएगा। उसी तरह खेलता फिरेगा, उसी तरह नाचता फिरेगा। माँ देखेगी, ख़ुश होगी, लोग बधाइयाँ देंगे। मगर वैद्य की बात सुनकर उसका दिल बैठ गया। उसका पति रामलाल सचदेव सुलतान में नौकर था। उसने उसे पत्र लिखा। वह तीसरे दिन पहुँच गया। इलाज दुगुनी सावधानी से होने लगा। यहाँ तक कि दस दिन और भी बीते गए। अब इक्कीसवाँ दिन सिर पर था। लाजवन्ती और रामलाल दोनों घबड़ा गये। हेम की देह अभी तक आग की तरह तप रही थी। सोचने लगे, क्या बुखार एकाएक उतरेगा।

वैद्य ने आकर नाड़ी देखी तो घबड़ाकर बोला—"आज की रात बड़ी भयानक है। सावधान रहना, बुखार एकाएक उतरेगा।"

[३]

लाजवन्ती और रामलाल, दोनों के प्राण सूख गए। वैद्य के शब्द किसी आने वाले भय की पूर्व-सूचना थे। रामलाल दवाएँ सँभालकर बेटे के सिरहाने बैठ गए। परन्तु लाजवन्ती के हृदय को कल न थी। उसने संध्या समय थाल में घी के दीपक जलाये और मन्दिर की ओर चली। इस समय उसे आशा अपनी पूरी जीवन सामग्री के साथ सामने नाच करती हुई दिखाई दी। लाजवन्ती अनन्य भाव से मन्दिर में पहुँची, और देवी के सामने गिरकर देर तक रोती रही। जब थककर उसने सिर उठाया, उसका मुखमण्डल शान्त था, जैसे तूफान के बाद समुद्र शान्त हो जाता है। उसको ऐसा मालूम हुआ, जैसे कोई दिव्य शक्ति उसके कान में कह रही है कि तूने आँसू बहाकर देवी के पाषाण हृदय को पिघला दिया है। परन्तु उसने इतने पर भी सन्तोष न किया ; मातृ-स्नेह ने भय को चरम सीमा पर पहुँचा दिया था। लाजवन्ती ने देवी की आरती उतारी, फूल चढ़ाये, मन्दिर की परिक्रमा की और प्रेम के बोझ से काँपते हुए स्वर से मानता मानी कि "देवी माता ! मेरा हेम बच जाय, तो मैं तीर्थ-यात्रा करूँगी।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यह मानता मानने के बाद लाजवन्ती को ऐसा जान पड़ा, जैसे उसके दिल पर से किसी ने कोई बोझ हटा लिया है, जैसे उसका संकट टल गया है, जैसे उसने देवताओं को खुश कर लिया है। उसे निश्चय हो गया कि अब हेम को कोई भय नहीं है। लौटी, तो उसके पाँव भूमि पर न पड़ते थे। उसके हृदय-समुद्र में आनन्द की तरंगें उठ रही थीं। उड़ती हुई घर पहुँची, तो उसके पति ने कहा—"लो बधाई हो, तुम्हारा परिश्रम सफल होने को है; बुखार धीरे-धीरे उतर रहा है।"

लाजवन्ती के मुख पर प्रसन्नता थी और नेत्रों में आशा की झलक। झूमती हुई बोली—"अब हेम को कोई डर नहीं है। मैं तीर्थ-यात्रा की मानता मान आई हूँ।"

रामलाल ने तीर्थ-यात्रा के खर्च का अनुमान किया, तो हृदय बैठ गया, परन्तु पुत्र-स्नेह ने इस चिंता को देर तक न ठहरने दिया। उसने बादलों से निकलते हुए चन्द्रमा के समान मुस्कराकर उत्तर दिया—"अच्छा किया, रुपये का क्या है, हाथ का मैल है, आता है, चला जाता है। परमेश्वर ने एक लाल दिया है, वह जीता रहे। यही हमारी दौलत है।"

लाजवन्ती ने स्वामी को सुला दिया और आप रात भर जागती रही। उसके हृदय पर ब्रह्मानन्द की मस्ती छा रही थी। प्रभात हुआ, हेम का बुखार उतर गया था। लाजवन्ती के मुखमण्डल से प्रसन्नता टपक रही थी; जैसे सन्ध्या के समय गौओं के स्तनों से दूध की बूंदें टपकने लगती हैं।

वैद्यजी ने आकर देखा तो उनका मुखमण्डल भी चमक उठा। अभिमान से सिर उठाकर बोले—"अब कोई चिन्ता नहीं। तुम्हारा बच्चा बच गया।"

लाजवन्ती ने हेम की देह पर हाथ फेरते हुए कहा—"क्या से क्या हो गया है।"

वैद्य ने लाजवन्ती की ओर देखा और रामलाल से बोले—"यह सब इसी के परिश्रम का फल है।"

लाजवन्ती ने उत्तर दिया—"देवी माता की कृपा है, अथवा आप की दवा के प्रभाव का फल है। मैंने क्या किया है, जो मेरे परिश्रम का फल है?"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"मैं तुम्हें दूसरी सावित्री समझता हूँ। उसने मरे हुए पति को जिलाया था, तुमने पुत्र को मृत्यु के मुँह से निकाला है। तुम यदि दिन-रात एक न कर देतीं तो हेम का बचना सर्वथा असम्भव था। यह सब तुम्हारी मेहनतों का फल है। भगवान् प्रसन्न हो गया। बच्चा बचा नहीं है, दूसरी बार पैदा हुआ है।"

रामलाल के होठों पर मुस्कराहट थी, आँखों में चमक। इसके सातवें दिन वह अपनी नौकरी पर चले गये, और कहते गये कि तीर्थ-यात्रा की तैयारी करो।

[४]

तीन महीने बीत गए; लाजवन्ती तीर्थ-यात्रा के लिए तैयार हुई। अब उसके मुख पर फिर वही आभा थी। आँखों में फिर वही चमक, दिल में फिर वही खुशी। हेम आँगन में इस प्रकार चहकता फिरता था, जैसे फूलों पर बुलबुल चहकती है। लाजवन्ती उसे देखती, तो फूली न समाती थी। तीर्थ-यात्रा से पहले की रात को उसके आँगन में सारा गाँव इकट्ठा हो रहा था। झाँझें और करतालें बज रही थीं! ढोलक की थाप गूँज रही थी। स्त्रियाँ गाती थीं, बजाती थीं, शोर मचाती थीं। दूसरी तरफ कहीं पूरियाँ बन रही थीं, कहीं हलुआ। उनकी सुगंध से दिमाग तर हुए जाते थे। लाजवन्ती इधर-से-उधर और उधर-से-इधर आ-जा रही थी, मानो उसके यहाँ ब्याह हो। एक ओर निश्चिंते साधु सुलफे के दम लगा कर गाँव की हवा को शुद्ध कर रहे थे। उनकी ओर गाँव के लोग इस तरह देखते थे, जैसे किसान तहसीलदार की ओर देखते हैं। आँखों में श्रद्धा-भाव के स्थान में भय और आतंक की मात्रा कहीं अधिक थी। लाजवन्ती से कोई मैदा माँगता था, कोई घी। कोई कहता था, हलवाई खाँड के लिए चिल्ला रहा है। कोई पूछता था, अमचूर का बर्त्तन कहाँ है। कोई और समय होता, तो लाजवन्ती घबरा जाती। पर इस समय उसके मुख पर ज़रा घबराहट न थी। सोचती थी, कैसा सौभाग्य है, जो यह दिन मिला। आज घबराहट कैसी?

परन्तु सारा गाँव प्रसन्न हो, यह बात न थी। वहीं स्त्रियों में बैठी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हुई एक बूढ़ी स्त्री असीम दुःख में डूबी हुई थी। यह लाजवन्ती की पड़ोसिन हरो थी। अत्यन्त दुःख के कारण उसके कण्ठ से आवाज़ न निकलती थी। नगर होता, तो वह इस उत्सव में कभी सम्मिलित न होती। मगर गाँव की बात थी; न आती तो, उंगलियाँ उठने लगतीं। आनन्दमय हास-परिहास के बीच में उसका मस्तिष्क दुःख और शोक के कारण ऐसे खौल रहा था, जैसे ठंडे समुद्र में गरम जल का स्रोत उबल रहा हो। वह स्रोत बाकी समुद्र से कितना परे, कितना अलग होता है।

इसी तरह रात के चार बज गए, लोग खा-पीकर आराम करने लगे। जो बच रहा, वह गरीबों को बाँट दिया गया। लाजवन्ती ने लोगों को विदा किया और चलने की तैयारी में लगी। उसने एक टीन के बक्स में ज़रूरी कपड़े रक्खे, एक बिस्तर तैयार किया कण्ठ में लाल रंग की सूती माला पहनी, माथे पर चन्दन का लेप किया। गऊ पड़ोसिन को सौंपी, और बार-बार कहा—"इसका पूरा-पूरा ध्यान रखना। जा रही हूँ। मगर मेरा मन अपनी गऊ में रहेगा।" सहसा किसी की सिसकी भरने की आवाज़ सुनाई दी। लाजवन्ती के कान खड़े हो गए। उसने चारों तरफ देखा, मगर कोई दिखाई न दिया। इस समय सारा गाँव सुख-स्वप्न में अचेत पड़ा था। यह सिसकी भरने वाला कौन है? यह सोचकर लाजवन्ती हैरान रह गई। वह आँगन में निकल आई और ध्यान से सुनने लगी। सिसकी की आवाज फिर सुनाई दी।

लाजवन्ती छत पर गई, और पड़ोसिन के आँगन में झुककर जोर से बोली—"माँ हरो!"

कुछ देर तक सन्नाटा रहा। फिर चारपाई पर से उत्तर मिला—"कौन? लाजवन्ती।"

आवाज़ में आँसू मिले हुए थे।

लाजवन्ती जल्दी से नीचे उतर गई, और हरो के पास पहुँचकर बोली—"माँ, क्या बात है? तू रो क्यों रही है?"

हरो सचमुच रो रही थी। परन्तु अपना दुःख लाजवन्ती के सामने कहते हुए उसके नारी-दर्प को बट्टा लगता था, इसलिए अपनी वास्तविक अवस्था को छिपाती हुई बोली—"कुछ बात नहीं है।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"तो रो क्यों रही है ?"

हरो के रुके हुए आँसुओं का बाँध टूट गया; उसका दुःखी हृदय सहानुभूति की एक चोट को भी सहन न कर सका। वह सिसकियाँ भर-भरकर रोने लगी।

लाजवन्ती ने फिर पूछा—"माँ ! बात क्या है, जो तू इस समय रो रही है ? मैं तेरी पड़ोसिन हूँ, मुझ से न छुपा।"

हरो ने कुछ उत्तर न दिया। वह सोच रही थी कि इसे बताऊँ या न बताऊँ। प्रभात हो चला था; कुछ-कुछ प्रकाश निकल आया था। लाजवन्ती चलने के लिए आतुर हो रही थी। मगर हरो को क्या दुःख है, यह जाने बिना चले जाना उसके लिए कठिन था। उसने तीसरी बार फिर पूछा—"माँ, बता दो ना, तुम्हें क्या दुःख है ?"

हरो ने दुःखी होकर कहा—"क्या तुम उसे दूर कर दोगी ?"

"हो सका, तो दूर कर दूँगी।"

"यह असम्भव है।"

"संसार में असम्भव कोई बात नहीं, भगवान् सब कुछ कर सकता है।"

हरो थोड़ी देर तक चुप रही; फिर धीरे से बोली—"बेटी का दुःख खा रहा है। रात-रात भर रोती रहती हूँ। जाने यह नाव कैसे पार लगेगी।"

"यह क्यों ? उसके ब्याह का खर्च तो तुम्हारे जेठ ने देना मंजूर कर लिया है।"

"ऐसा भाग होता तो रोना काहे का था ?"

लाजवन्ती ने अकुलाकर पूछा—"तो क्या यह झूठ है ?"

"बिल्कुल झूठ भी नहीं। उसने दो सौ रुपये के गहने बनवा दिए हैं, मगर मिठाई आदि का प्रबन्ध नहीं किया। अब चिन्ता यह है कि बारात आएगी तो उसके सामने क्या धरूँगी ? बाराती मिठाई माँगेंगे, पूरियाँ माँगेंगे, हलुआ माँगेंगे। यहाँ सूखे सत्तू खिलाने की भी हिम्मत नहीं। यही सोच-सोचकर सूखती जाती हूँ।"

लाजवन्ती ने कुछ सोचकर उत्तर दिया—"क्या गाँव के लोग एक निर्धन ब्राह्मणी की कन्या का ब्याह नहीं कर सकते ? और यह उनकी दया

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

न होगी; धर्म होगा।"

हरो की आँखें भर आईं। वह इस समय निर्धन थी, परन्तु कभी उसने अच्छे दिन भी देखे थे। लाजवन्ती के प्रस्ताव से उसे अत्यन्त दुःख हुआ, जैसे नया-नया भिखारी गालियाँ सुनकर पृथ्वी में गड़ जाता है। उसने धीरे से कहा—"बेटी! यह अपमान न देखा जाएगा।"

"परन्तु इस तरह तो गाँव भर की नाक कट जाएगी।"

हरो ने बात काटकर कहा—"मैं भी तो इसे सहन नहीं कर सकूँगी। किसी के सामने हाथ फैलाना बुरा है।"

"तो क्या करोगी? कन्या कुँआरी रक्खोगी?"

"भगवान् की यही इच्छा है, तो मेरा क्या बस है? कहीं निकल जाऊँगी। न कोई देखेगा, न बात करेगा।"

लाजवन्ती ब्राह्मणी की करुणाजनक अवस्था देखकर काँप गई। उसे ऐसा मालूम हुआ, जैसे कोई कह रहा है कि अगर यह हो गया, तो ईश्वर का कोप गाँव भर को जलाकर ख़ाक कर देगा। लाजवन्ती अपने आप को भूल गई। उसका हृदय दुःख से पानी-पानी हो गया। उसने जोश से कहा—"चिंता न करो, तुम्हारा यह संकट मैं दूर कर दूँगी। तेरी बेटी का व्याह होगा, और बारात के लोगों को मिठाई मिलेगी। तेरी बेटी तेरी ही बेटी नहीं है, मेरी भी है।"

हरो ने वह सुना, जिसकी उसे इच्छा थी, परन्तु आशा न थी। उसके नेत्रों में कृतज्ञता के आँसू झलकने लगे। लाजवन्ती तीर्थ-यात्रा के लिए अधीर हो रही थी। वह सोचती थी—हरिद्वार, मथुरा, वृन्दावन के मन्दिरों को देख कर हृदय कली की तरह खिल जाएगा। मगर जो आनन्द उसे इस समय प्राप्त हुआ, वह उस कल्पित आनन्द की अपेक्षा कहीं अधिक बढ़-चढ़कर था। वह दौड़ती हुई अपने घर गयी, और सन्दूक से दो सौ रुपए लाकर हरो के सामने ढेर कर दिये। यह रुपये जमा करते समय वह जितनी प्रसन्न हुई थी, उन्हें देते समय उससे भी अधिक प्रसन्न हुई। जो सुख त्याग में है, वह ग्रहण में कहाँ?

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

[५]

लाजवन्ती के तीर्थ-यात्रा का विचार छोड़ देने पर सारे गाँव में आग-सी लग गई। लोग कहते थे, लाजवन्ती ने बहुत बुरा किया। देवी माता का कोप उसे नष्ट कर देगा। स्त्रियाँ कहती थीं—किस शेखी पर रात को रतजगा किया था? साठ-सत्तर रुपए खर्च हो गए, अब घर में बैठ गयी है। नहीं जाना था, तो इस दिखावे की क्या आवश्यकता थी? कोई कहती थी—देवी-देवताओं के साथ यह हँसी-मज़ाक अच्छा नहीं; ले-देकर एक लड़का है, उसकी खैर मनाए। जो बूढ़ी थीं, वे माला की गुरियाँ फेरते-फेरते बोलीं—कलियुग का पहरा है, जो हो जाए, सो थोड़ा! ऐसा तो नहीं सुना था! आज तक सुनते थे आदमी आदमी से बात करके बदल जाते हैं, अब देवताओं से बात करके भी बदलने लगे। पर असली भेद का किसी को पता न था। धीरे-धीरे ये बातें लाजवन्ती के कानों तक भी जा पहुँचीं। पहले तो उसने उनकी कुछ परवाह नहीं की, एक कान से सुना, दूसरे कान से निकाल दिया। परन्तु जब सब ओर यही चर्चा और यही बात सुनी, तो उसका चित्त भी डाँवाँडोल होने लगा। हवा ने झक्कड़ का रूप धारण कर लिया था, अब मुसाफिर घबराने लगा, अब उसका मन डोलने लगा।

लाजवन्ती सोचती थी—मैंने बुरा क्या किया? एक ग़रीब ब्राह्मणी की बेटी के विवाह में सहायता देना क्या देवी को पसन्द नहीं? और मैंने तीर्थ-यात्रा का विचार छोड़ नहीं दिया, केवल कुछ काल के लिए स्थगित किया है। इस पर देवी-देवता गुस्से क्यों होने लगे? मगर दूसरा विचार उठता कि मैंने सचमुच भूल की। देवी-देवताओं की भेंट किसी आदमी को देना अपराध नहीं, तो और क्या है। यह विचार आते ही उसका कलेजा काँप जाता और हेम के विषय में भयानक संशय उत्पन्न होने लग जाते। संसार बुराइयों पर पछताता है; लाजवन्ती भलाई पर पछता रही थी। दिन का चैन उड़ गया, रात की नींद हराम हो गई! उसे वहम हो गया कि अब हेम की कुशल नहीं। उसे खेलता देखती, तो उसके हृदय पर कटारियाँ चल जाती थीं। बुरे-बुरे विचार आते थे। जी डरता था, हिम्मत काँपती थी।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इसी तरह कई दिन बीत गए। गाँव में चहल-पहल दिखाई देने लगी। हलवाई की दुकान पर मिठाइयाँ तैयार होने लगीं। गाँव की कुँआरी कन्याओं के हाथों में मेंहदी रची हुई थी। रात के बारह-बारह बजे तक हरो की छत पर ढोलक बजती रहती थी, और स्त्रियों के देहाती गीतों से सारा गाँव गूँजता रहता। एक वह दिन था, जब लाजवन्ती प्रसन्न थी और हरो दुःखी थी। आज हरो के यहाँ चहल-पहल थी, मगर लाजवन्ती के यहाँ उदासी बरस रही थी। समय के फेर ने काया पलट कर दी थी।

रात का समय था; मन्दिर में घंटे बज रहे थे। लाजवन्ती ने आरती का थाल उठाया, और पूजा के लिए चली। मगर दरवाजे पर पहुँचकर पाँव रुक गए। उसे ऐसा प्रतीत हुआ, मानो देवी की मूर्ति उसे दण्ड देने के लिए नेत्र लाल किए खड़ी है। लाजवन्ती का कलेजा धड़कने लगा। वह डरकर दरवाजे पर बैठ गई, और ऐसे रोने लगी जिस प्रकार दुर्बल विद्यार्थी को परीक्षा के कमरे में जाने का साहस नहीं होता। पाँव आगे रखता है, दिल पीछे रह जाता है।

सहसा उसे ऐसा प्रतीत हुआ, जैसे कोई प्रार्थना कर रहा है। लाजवन्ती का रोम-रोम कान बन गया। उसे निश्चय हो गया कि इस प्रार्थना का अवश्य ही उसके साथ सम्बन्ध है, और वह ग़लती पर न थी। कोई कह रहा था—

"देवी माता! उसे सदा सुहागिन बनाओ। उसके बेटे को चिरंजीव रखो। उसने एक असहाय ब्राह्मणी का मान रक्खा है। तुम उसको इसका फल दो। उसके बेटे और पति का बाल भी बाँका न हो। यह एक बूढ़ी ब्राह्मणी की प्रार्थना है, इसे सुनो और स्वीकार करो। जिस तरह उसने मेरा कलेजा ठंडा किया है, उसी तरह उसका भी कलेजा ठंडा रक्खो।"

यह ब्राह्मणी हरो थी। लाजवन्ती के रोम-रोम में हर्ष की लहर दौड़ गई। उसके सारे सन्देह घुएँ के बादलों की तरह तितर-बितर हो गए। वह रोते हुए आगे बढ़ी और बूढ़ी ब्राह्मणी के पैरों से लिपट गई।

रात को स्वप्न में वह फिर देवी के सम्मुख थी। एकाएक देवी की मूर्ति ने अपने सिंहासन से नीचे उतरकर लाजवन्ती को गले से लगा लिया। और कहा—"तूने एक ग़रीब की सेवा की है, गोया मेरी सेवा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

की है। मैं तुझसे खुश हूँ। तेरे काम से खुश हूँ। लोग तीर्थ-यात्रा करते हैं, तूने महातीर्थ-यात्रा की है। सेवा तीर्थ-यात्रा से बढ़कर है।"

लाजवन्ती की आँख खुल गई। इस समय उसे ऐसी प्रसन्नता प्राप्त हुई जैसी आज तक कभी नहीं हुई थी। आज उसने पूजा का रहस्य पा लिया था।

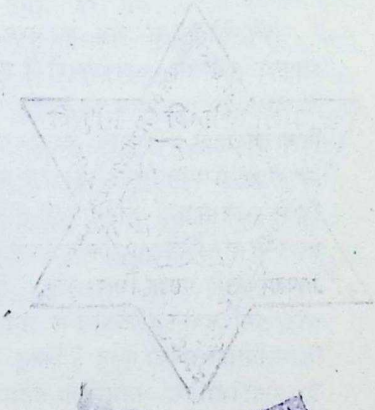

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री जैनेन्द्रकुमार जैन

(जन्म : १९०५ ई०)

श्री जैनेन्द्रकुमार जैन का जन्म कौड़ियागंज जिला अलीगढ़ में हुआ। आपका वर्तमान कहानीकारों में एक प्रतिष्ठित स्थान है। प्रेमचन्दजी के बाद कहानी-साहित्य को आपने एक नया मोड़ दिया है। गांधीवादी विचारधारा से पूर्ण होने के कारण आपने पढ़ना छोड़कर असहयोग आन्दोलन में भाग लिया तथा जेल गए। जेल में आपको लिखने की प्रेरणा मिली। स्वभावतः अहिंसावादी होने के कारण आप गांधीवादी विचारधारा से प्रभावित हुए किन्तु गांधीवाद के मौलिक अहिंसात्मक रूप से आपका अहिंसावाद भिन्न रहा। हिन्दी आलोचक आपकी नई विचारधारा तथा नवीन दृष्टिकोण से चमत्कृत हैं। यद्यपि आपकी कहानियों का शिल्प-विधान सर्वथा नूतन है किन्तु कहानी कला की दृष्टि से वह उत्कृष्ट है। मनोवैज्ञानिक अनुभूति के आधार पर कहानियाँ लिखकर आपने एक नूतन दृष्टिकोण का प्रारम्भ किया है। जिस प्रकार प्रेमचन्द का जीवन के प्रति एक गहरा विश्वास था, उसी प्रकार जैनेन्द्र जी बाह्य समाज की उपेक्षा कर व्यक्ति को उसके भीतर से देखना चाहते हैं। 'जाह्नवी', 'आत्म-शिक्षण' और 'पढ़ाई' जैनेन्द्रजी की तीन सर्वोत्तम कहानियाँ हैं। इन कहानियों में उन्होंने मनोवैज्ञानिक पद्धति को अपनाया है। यह पद्धति उनके चिन्तन, मनन और दार्शनिकता की देन है। यद्यपि आप व्यक्तिवादी दृष्टिकोण को लेकर चले हैं किन्तु इनकी कहानियाँ उच्च कोटि की हैं। आपकी कहानी कला इतनी आकर्षक है कि पाठक स्वतः उस ओर आकर्षित हो जाता है। आपने अनेक शैलियों में कहानियाँ लिखी हैं, साथ ही भाषा में अनेकरूपता है। कलात्मकता का उत्कृष्ट गुण होने के कारण जैनेन्द्रजी हिन्दी कहानी साहित्य में एक प्रतिभाशाली कलाकार माने जाते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रस्तुत कहानी श्री जैनेन्द्रकुमार की उत्कृष्ट कहानी कला का एक श्रेष्ठ उदाहरण है। आत्म-चिन्तन से मानव वस्तुतः एक निश्चय पर पहुँच सकता है, यह तथ्य इसमें मनोवैज्ञानिक ढंग से स्पष्ट चित्रित किया गया है। रामचरण एक किशोर बालक है जिसकी मनःस्थिति और सूनेपन को उसके पिता रामरत्न तथा माता दिनमणि समझ नहीं सके हैं। वे केवल उसकी उदासीनता की प्रवृत्ति को देखकर उसे सुस्त समझ बैठते हैं। किन्तु किशोर बालक रामचरण की कापियों पर लिखित संकेतों को पढ़कर पिता की आँखें खुल जाती हैं और वह अपने सुस्त से दिखाई देने वाले बालक की गम्भीरता तथा चिन्तन से प्रभावित होता है। कहानीकार ने 'आत्म-शिक्षण' शीर्षक देकर इसकी मनोवैज्ञानिकता को स्पष्ट प्रकट किया है। इसमें आत्म-चिंतन और मनन के महत्त्व की ओर संकेत किया गया है। मनुष्य अपने मन की सन्देहपूर्ण अवस्था में आत्मचिन्तन से ही तथ्य तक पहुँचता है, यही इस कहानी का संकेत है और यही उद्देश्य है।

कहानी संकेत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आत्म-शिक्षण

महाशय रामरत्न को इधर रामचरण के समझने में कठिनाई हो रही है। वह पढ़ता है और सपने में रहता है। कुछ कहते हैं तो दो-एक बार तो सुनता ही नहीं। सुनता है तो जैसे चौंक पड़ता है। ऐसे समय, मानो विघ्न पड़ा हो इस भाव से वह झुंझला भी उठता है। लेकिन तभी झुंझलाने पर वह अपने से अप्रसन्न भी दीखता है और फिर बिन बात, बिन अवसर वह बेहद विनम्र हो जाता है।

यह तेरह वर्ष की अवस्था ही ऐसी है। तब कुछ बालक में उग रहा होता है। इससे न वह ठीक बालक होता है न कुछ और। उसे प्यार नहीं कर सकते, न उससे परामर्श कर सकते हैं। तब वह किस क्षण बालक है और किस पल बुजुर्ग, यह नहीं जाना जा सकता। उसका आत्म-सम्मान कब कहाँ रगड़ खा जाएगा, कहना कठिन है। उससे कुछ डरकर चलना पड़ता है।

रामरत्न की बात भी तो दूसरी है। घर में अधिक काल उन्हें नहीं रहना होता। सबेरे नौ बजे दफ्तर की तैयारी हो जाती है और सांझ अँधेरे वापस आते हैं। बाद में खाने के अलावा कोई घंटा भर घर में रहने पाते होंगे। रात नींद की होती ही है। पर दिनमणि की परेशानी की न पूछो। वह रामचरण को लेकर हैरान है। अकेले में बैठकर सोचती है, दो जनियों से पूछकर वह विचारती है। पर ठीक कुछ समझ नहीं आता कि रामचरण से कैसे निबटे? जानती है कि यह लड़का सुशील है, खोटी आदत कोई नहीं है। किताबें सदा अच्छी और धर्म की पढ़ता है पर उसकी तबीयत की थाह जो नहीं मिलती। वह गुम-सुम रहता है। चार दफे बात कहते हैं तब जाकर कहीं जवाब देता है। इस कारण आये दिन कलह बनी रहती है। इसमें दिनमणि को अपनी ज़बान खराब करनी पड़ती है और रामचरण अटल रहता है। वह दस तरह झींकती है—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

फटकारती है। डपटती है और कहती है मैं क्या भौंकने के लिए हूँ ? पर रामचरण को जो करना होता है, करता है और जो नहीं करना होता वह नहीं करता। सारांश, दिनमणि कहं-सुनकर अपने-आप में ही फुंक रहती है।

दिनमणि ने अब अपने भीतर से सीख लेकर रामचरण से कहना-सुनना लगभग छोड़ दिया है। कुछ होता है तो पुत्र के पिता पर जा डालती है। सबेरे का स्कूल है और आठ बज गए हैं, पर रामचरण अभी खाट पर पड़ा है। पड़ोस के सब बालक स्कूल गए, खुद घर की छोटी बिन्नी नाश्ता करके स्कूल जा चुकी है। आँगन में धूप चढ़ आई है। लेकिन रामचरण है कि खाट पर पड़ा है।

दिनमणि ने पति से कहा—"सुनते हो जी, लड़का सो रहा है और वक्त इतना हो गया है। उसे क्या स्कूल नहीं जाना है ? जगा क्यों नहीं देते ?" रामरत्न अखबार पढ़ रहे थे, युद्ध में अनी का समय आया ही चाहता है, बोले—"क्या रामचरण !—तो ?"

"तो क्या"—पत्नी कमर पर हाथ रखकर बोली—"सूरज सिर पर आ जाएगा तब वह उठेगा ? एक तो कमजोर है और तुमने आँख फेर रखी है। कहती हूँ, स्कूल नहीं भेजोगे ? या ऐसे ही उसे नवाब बनाने का इरादा है ? तुमने ही उसे सिर पर चढ़ा रक्खा है।"

रामरत्न ने कहा—"क्या बात है ? बात क्या है ?"

दिनमणि का भाग्य ही वाम है। वैसा पुत्र और ऐसा पति ! बोली—"बात क्या है—तब से कह तो रही हूँ कि अपने लाड़ले को चलकर उठाओ। पता है, नौ बजेंगे !"

रामरत्न ने अन्दर जाकर जोर से कहा—"रामचरण, उठोगे नहीं या तुम्हें पढ़ने का ख़याल नहीं है ?"

करवट लेकर रामचरण ने पिता की ओर देखा।

उन आँखों में निर्दोष आलस्य था और आज्ञा-पालन की शीघ्रता नहीं थी।

पिता ने कहा—"चलो, उठो। सुना नहीं ?"

मालूम हुआ कि रामचरण ने सचमुच नहीं सुना है। वह झटपट उठकर बैठे नहीं गया। पिता ने हाथ से पकड़ कर उसे खींचते हुए कहा—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"चलो, उठते हो कि नहीं ? दिन चढ़ आया है और दुनियाँ स्कूल गयी। नवाब साहब सोते पड़े हैं ?"

रामचरण पहले झटके में ही उठकर सीधा हो गया। अब वह आँखें मल रहा था। पिता ने कहा—"चलो, जल्दी निबटो और स्कूल जाओ। क्या तमाशा बना रक्खा है, अपने स्कूल का तुम्हें ख़याल नहीं है ?"

रामचरण बिस्तर से उठकर चल दिया। दिनमणि उसी कमरे में एक ओर खड़ी यह देख रही थी। उसके जाने पर बोली—"मिज़ाज तो देखो इस शरीर के। इतना भौंकवाया, तब कहीं जाकर उठा है। और अब भी देखो तो मुंह चढ़ा हुआ है।"

अखबार रामरत्न के हाथ में ही था, बोले—"उसके नाश्ते-वाश्ते को निकाल रखो कि जल्दी स्कूल चला जाय। देर न हो। बच्चा है, एक रोज़ आँख नहीं खुली तो क्या बात है ?"

दिनमणि इसका उपयुक्त उत्तर देने को ही थी कि रामरत्न चलकर अपनी बैठक में आ गये और रूस-जर्मन मोर्चे का नया नक्शा अपने मन में बैठाने लगे। पर नक्शा ठीक तरह वहाँ जम न सका ; क्योंकि जहाँ रोस्टोव चाहते हैं, वहाँ रामचरण आ बैठता था। तब रामचरण पर उन्हें करुणा होने लगी। मानो वह अनाथ हो। माता है, पिता है, पर जैसे उस बालक का फिर भी संगी कोई नहीं है। उन्हें अपने पर और अपनी नौकरी पर क्षोभ होने लगा कि देखो वह लड़के के लिए कुछ भी समय नहीं दे पाते। घर में रहकर बालक पराया हुआ जा रहा है।

इसी समय सुनते क्या हैं कि अन्दर कुछ गड़बड़ मच उठी है। जाकर मालूम हुआ कि रामचरण (दिनमणि ने साहबबहादुर कहा था) नहाया नहीं है, न ठीक तरह मंजन किया है और दिनमणि कहती हैं तो बदलकर नया निकर भी नहीं पहनता है।

दिनमणि ने कहा—"निकर बदल लो रामचरण ?"

उसने कहा —"देर हो जायगी।"

मैंने कहा—"आधी मिनट में क्या फर्क होता है, इतने के लिए माँ का कहना नहीं टाला करते भाई।"

रामचरण ने इस पर जाकर निकर बदल लिया और बस्ता लेकर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चलने को तैयार हो गया।

स्कूल जाते समय वह एक आना पैसा ले जाता है। देते समय पिता उससे तर्क करते हैं कि ऐसी-वैसी चीज बाजार की लेकर नहीं खानी चाहिए, समझे। पर वह बात ऊपरी होती है और पिता अपना टैक्स देना नहीं भूलते। उसको जाते देख पिता ने कहा—"क्यों आज चार पैसे नहीं ले जाओगे ?"

उसके आने पर कहा—"नाश्ता तो करते जाओ और पैसे भी ले जाना।"

उसने सुन लिया। उसका मुह गिरा हुआ था और वह बोला नहीं।

रामरत्न ने सोचा कि स्कूल में शायद देर हो जाने का उसे डर है। थपथपाते हुए वह उसे मेज पर ले गये और खुद मँगाकर नाश्ते की तश्तरी उसके सामने रख दी। कहा कि मैं हेडमास्टर को चिट्ठी लिख दूंगा, देर के लिए वह कुछ नहीं कहेंगे। अब तुम खाओ। तभी उन्होंने घड़ी देखी साढ़े आठ हो गये थे और उनका सब नित्यकर्म शेष था।

"खाओ बेटा, खाओ।"—कहते हुए वह वहाँ से चल दिये।

स्नान समाप्त कर पाये थे कि बाहर से दिनमणि ने सुनाकर कहा—"देखो जी, तुम्हारे साहबज़ादे बिना खाये-पीये जा रहे हैं। फिर जो पीछे तुम मुझे कहो।"

रामरत्न शीघ्रता से केवल धोती पहने और अंगोछा कंधे पर रखकर बाहर आये, रामचरण से बोले—"नाश्ता करते जाते बेटे।"

रामचरण का मुंह सूखा था और गिरा हुआ था। उसने कुछ जवाब नहीं दिया।

"क्यों तबीयत तो खराब नहीं ?"

रामचरण ने अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से पिता को देखा और अब भी कुछ बोला नहीं। पिता को ऐसा लगा कि उन आँखों में पानी तिर आना चाहता है। उन्हें कुछ समझ न आया। हठात् बोले—"माँ से नाराज़ नहीं होना चाहिए। भई, वह जो कहती है तुम्हारे भले के लिए ही कहती है। आओ चलो कुछ नाश्ता कर लो।"

रामचरण फिर एक बार मूंगी आँखों से देखकर मुंह लटकाये वहीं-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

का-वहीं खड़ा रह गया।

पिता ने इस पर पुत्र को किंचित् उपदेश दिया और फिर भी उसे वहीं अचल देखकर किंचित् रोष में उसे छोड़कर चल दिये। वहीं से पुकार-कर पत्नी से उन्होंने कहा—"नहीं खाता है तो जाने दो।" और रामचरण के प्रति कहते गये—"हमारे बक्स में पर्स होगा, उसमें से अपनी इकन्नी लेते जाना, समझे ? भूलना नहीं।"

रामरत्न संध्या बीते घर लौटे तो देखा कि रामचरण खाट पर लेटा हुआ है। और रोज अब तक वह खेल से मुश्किल से लौट पाता था ? यह भी मालूम हुआ कि उसने खाना नहीं खाया है और उसकी माँ ने काफी उसे कहा-सुना है।

रामरत्न विचार-शील हैं, पर उन्हें अति अच्छी नहीं लगती। सब सुनकर उन्होंने जोर से कहा—"रामचरण, क्या बात है जी ?"

दफ्तर से वह इसी उधेड़-बुन में चले आ रहे थे। डर रहे थे कि घर में कहीं बात बढ़ी न हो। उनके मन में पुत्र के लिए करुणा का भाव था। उन्हें अपना बचपन याद आता था कि किस तरह बचपन में उन्हें भी ग़लत समझा गया था। रवीन्द्रनाथ ठाकुर की एन्ट्रेंस में पढ़ी 'होम कमिंग' कहानी का वह लड़का याद आता था जिसका नाम चाहकर भी वह स्मरण न कर पाते थे। उसकी बात सोचकर उनके रोंगटे खड़े हो जाते थे। विचार करते थे कि लड़कों की अपनी स्वप्न की दुनिया अलग होती है। हम बड़ों का प्रवेश वहाँ निषिद्ध है। अपने सपनों पर चोट वह नहीं सह सकते। हम बड़ों को इसका ख़याल रखना चाहिए।

लेकिन जब घर में पैर रखते ही दिनमणि ने रामचरण की उद्दण्डता और अपने धैर्य की बात सुनाई तो उन्हें मालूम हुआ कि सचमुच लड़के में ज़िद बढ़ने देना नहीं चाहिए। यह बात सच थी कि दिनमणि ने स्कूल से लौटने पर पुत्र से खाने के लिए आध घंटे तक अनुरोध किया था। उस सारे काल रामचरण मुंह फेरे खाट पर पड़ा रहा था। उकताकर अन्त में उत्तर में उसने तीन बार यही कहा था—"मैं नहीं खाऊँगा, नहीं खाऊँगा, नहीं खाऊँगा।" यह उत्तर सुनकर दिनमणि खाट से उठ खड़ी हुई थी और उसने कुछ तथ्य की बातें बिना लाग-लपेट के रामचरण को वहीं-की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वहीं सुना दी थीं। रामचरण सब को पीता चला गया।

यथार्थ स्थिति का परिचय पाकर रामरत्न दफ्तर के कपड़ों में ही अन्दर जाकर उसे डपटकर बोले—"रामचरण, क्या बात है जी ?"

रामचरण ने पिता के स्वर पर चौंककर ऐसे देखा, जैसे कहीं किसी खास बात के होने का उसे पता न हो, और वह जानना चाहता हो।

रामचरण की आँखों में फैली इस शिशुवत् अबोधता पर पिता को और तैश हो आया। बोले—"खाना तुमने क्यों नहीं खाया जी ? तुम्हारी मंशा क्या है ? क्या चाहते हो ? क्या घर में किसी को चैन लेने देना नहीं चाहते ? सब तुम्हारी खुशामद करें, तब तुम खाओगे ? आख़िर तुम क्या चाहते हो ? रोज़-रोज़ यह तमाशा किस लिए ?"

इसी तरह दो-तीन मिनट तक रामरत्न क्रोध में अपनी बात कहते चले गये। रामचरण खाट पर पड़ा आँखें फाड़े उन्हें देख रहा था। जैसे वह कुछ न समझ रहा हो।

पिता ने वहीं से पत्नी को हुक्म देकर कहा—"लाना तो खाने को, देखें कैसे नहीं खाता है ?"

दिनमणि खाना ले गयी और पिता ने पुत्र से कहा—"अब और तमाशा न कीजिए। हम समझते थे कि आप समझते हैं। लेकिन दीखता है कि आप इसी तरह बाज़ आइएगा।"

रामचरण तत्क्षण न उठता दिखाई दिया तो कड़ककर बोले—"सुना नहीं आपने, या अब चपत लगे ?"

रामचरण सुनकर एक साथ उठकर बैठ गया। उसके मुख पर भय नहीं, विस्मय था और वह पिता को आंखें फाड़कर चकित-सा बना देख रहा था।

खाने की थाली आयी और सामने उसकी खाट पर रख दी गयी। पर उसकी ओर रामचरण ने हाथ बढ़ाने में शीघ्रता नहीं की।

पिता ने कहा—"अब खाते क्यों नहीं हो ? देखते तो हो कि मैंने दफ्तर के कपड़े भी नहीं उतारे, क्या तुम्हारे लिए क़यामत तक यहीं खड़ा रहूँगा। चलो शुरू करो।"

रामचरण फिर कुछ देर पिता को देखता रहा, अन्त में बोला—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"मुझे भूख नहीं है।"

"कैसे भूख नहीं है?" पिता ने कहा—"सबेरे से कुछ नहीं खाया। जितनी भूख हो उतना खाओ।"

रामचरण ने उन्हीं फटी आँखों से पिता को देखते हुए कहा—"भूख बिल्कुल ही नहीं है।"

पिता अब तक ज़ब्त से काम ले रहे थे। लेकिन यह सुनकर उनका धैर्य छूट गया और उन्होंने एक चाँटा कनपटी पर दिया, कहा—"मक्कारी न करो, सीधी तरह खाने लग जाओ।"

इस पर रामचरण बिल्कुल नहीं रोया, न शिकायत का भाव उस पर दिखाई दिया। वह शान्त भाव से थाली की तरफ हाथ बढ़ाकर टुकड़ा तोड़ने लगा। माता और पिता दोनों पास खड़े हुए देख रहे थे। रामचरण का मुंह सूखा था और ऐसा लगता था कि कौर उससे चबाया नहीं जा रहा है। इस बात पर उसके पिता को तीव्र क्रोध आया, पर जाने किस विधि वह अपने क्रोध को रोके रह गये।

पाँच-सात कौर खाने के बाद रामचरण सहसा वहाँ से उठा, जल्दी-जल्दी चलकर बाहर आया, नाली पर पहुँचकर सब कै कर बैठा।

पिता यह सब देख रहे थे। मुंह साफ करके रामचरण लौटा तो पिता ने कठिनाई से अपने को वश में करके कहा—"अच्छा हुआ। कै तो अच्छी चीज़ है। अब स्वस्थ हो गये होगे, लो अब खाओ।"

रामचरण ने आँखों में पानी लाकर कहा—"मुझे भूख बिल्कुल नहीं है।"

"लेकिन तुमने सबेरे से खाया ही क्या है?" पिता ने कहा—"देखो रामचरण, यह सब आदत तुम्हारी नहीं चलेगी। ज़िद की हद होती है। या तो सीधी तरह खाना खा लो, नहीं तो अब से हम से तुम्हारा वास्ता नहीं—बोलो खाते हो?"

रामचरण ने कहा—"मुझे भूख नहीं है।"

इस पर पिता जोर से बोले—"लो जी, ये उठा ले जाओ थाली। अब इनसे खबरदार जो तुमने कुछ कहा। हम तो इनके लिए कुछ हैं ही नहीं। फिर कहना-सुनना क्या?"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

थाली वहाँ से उठ गयी और रामचरण बिना कुछ बोले हक्का-बक्का-सा पिता को देखता रह गया। पिता वहाँ से जाते-जाते पुत्र से बोले—"सुनिए, अब आपका राज है, जो चाहे कीजिए, जो चाहे न कीजिए। हमने आपको इसी रोज़ के लिए पाला था।" कहते-कहते उनकी वाणी गद्‌गद हो आयी। बोले—"ठीक है, जैसी आपकी मर्ज़ी। बुढ़ापे में हमें यही दिन दिखाइएगा।"

कहते हुए पिता वहाँ से चले गए। रामचरण की आँखों में आँसू आ गए थे। पर पिता के जाने पर अपना सिर हाथों में लेकर वह वहीं खाट पर पड़ गया।

रात होती जाने लगी। पर पिता के मन का उद्वेग शान्त होने में न आता। उनको रोष था और अपने से खीज थी; वह विचारवान् व्यक्ति थे। सोचते थे, लड़के में दोष हमसे ही आ सकता है। त्रुटि कहीं हममें ही होगी। लेकिन ख़याल होता था—ज़िद अच्छी नहीं है। दिनमणि का कहना है कि लड़के को शुरू में काबू में नहीं रक्खा, इससे वह सिर चढ़ गया है। क्या यह ग़लती है? क्या डाँटना बुरा है? लाड़ से बच्चे बेशक संभल नहीं सकते। लेकिन मैंने कब उसकी तरफ ध्यान दिया है। उसने कभी कुछ पूछा है तो मैंने टाल दिया है। न उसकी माँ ही समय दे पाती है। मैं समझता हूँ कि लापरवाही है जिससे उसमें यह आदत आई है।

सोचते-सोचते उन्होंने पत्नी को बुलाया और पूछा और जिरह की। वह कहीं-न-कहीं से बच्चे से बाहर दोष को पा लेना चाहते थे। पर जिरह से कुछ फल नहीं निकला। उन्हें मालूम हुआ कि वह स्कूल से घर रोज से कुछ जल्दी ही आया था।

"पूछा नहीं, जल्दी क्यों आया है?"

"नहीं, मैं तो उससे कुछ पूछती नहीं, मुंह लटकाए आया और चादर लेकर खाट पर लेट गया। कुछ बोला न चाला।" तब पिता ने जोर से आवाज़ देकर पुकारा—"रामचरण!" सुनकर रामचरण वहाँ आ गया।

पूछा—"तुम आज स्कूल पूरा करके नहीं आए?"

"नहीं।"

"पहले आ गए?"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"हाँ।"

"क्यों ?"

इसका उत्तर लड़के ने नहीं दिया। झुककर पास की कुर्सी का सहारा ले वह पिता को देखने लगा।

पिता ने कहा—"सहारा छोड़ो, सीधे खड़े हो। तुम बीमार नहीं हो। और सुनो, तुम सवेरे बिना खाए गए और किसी की बात नहीं सुनी। स्कूल बीच में छोड़कर चले आए। आए तो रूठकर पड़े रहे। और इतना कहा तो भी अब तक खाना नहीं खाया। बताओ, ऐसे कैसे चलेगा ?"

लड़का चुप रहा।

पिता जोर से बोले—"तुम्हारे मुंह में ज़बान नहीं है ? कहते क्यों नहीं; ऐसे कैसे चलेगा ? बताआ, इस ज़िद की तुम्हें क्या सज़ा दी जाय ? देखते नहीं, घर भर में तुम्हारी वजह से क्लेश मचा रहता है।"

लड़का अब भी चुप ही था।

अत्यन्त संयमपूर्वक पिता ने कहा—"देखो, मेरी मानो तो अब भी खाना खा लो और सवेरे समय पर स्कूल चले जाना। आइन्दा ऐसा न हो। समझे ? सुनते हो ?"

लड़के की आँखें नीची थीं। कुछ मद्धम पड़कर पिता ने कहा—"भूख नहीं है तो जाने दो। लेकिन कल सवेरे नाश्ता करके ठीक वक्त से स्कूल चले जाना। देखो इस उम्र में मेहनत से पढ़ लोगे और माँ-बाप का कहना मानोगे तो तुम्हीं सुख पाओगे। नहीं तो पीछे तुम्हें ही पछताना होगा। लो जाओ, कैसे अच्छे बेटे हो। बोलो, खाओगे ?"

जाते-जाते रामचरण ने कहा—"मुझे भूख नहीं है।"

पिता का जी यह सुनकर फिर खराब हो आया। लेकिन उन्होंने विचार से काम लिया और अपने को संयत रखा।

अगले दिन देखा गया कि वह फिर समय पर नहीं उठ सका है। जैसे-तैसे उठाया गया है तो अनमने मन से काम कर रहा है। नाश्ते को कहा गया तो फिर नाश्ता नहीं ले रहा है।

पिता ने बहुत धैर्य से काम लिया। लेकिन कई बार अनुरोध करने पर भी जब रामचरण ने यही कहा कि भूख नहीं है, तो उनका धीरज

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

टूट गया। तब उन्होंने उसे अच्छी तरह पीटा और अपने सामने नाश्ता कराके छोड़ा। उसके स्कूल चले जाने पर उनमें आत्मालोचना और कर्त्तव्य-भावना जाग्रत हुई। उन्होंने सोचा कि सायंकाल का समय वह मित्र-मण्डली से बचाकर पुत्र को दिया करेंगे। उसे अच्छी-अच्छी बातें बतायेंगे और पढ़ाई की कमजोरी दूर करेंगे। पत्नी से कहकर रामचरण की आलमारी में से उन्होंने उसकी किताब और कापियाँ मँगायीं। वह कुछ समय लगाकर रामचरण की पढ़ाई-लिखाई के बारे में परिचय पा लेना चाहते थे। पहले उन्होंने पुस्तकें देखीं, फिर कापियाँ देखीं। कापियों से अन्दाज़ा हुआ कि उसका कम्पोजीशन बहुत खराब है और भाषा का ज्ञान काफी नहीं है। किन्तु अन्तिम कापी जो सब से साफ और बढ़िया थी, जिस पर किसी विषय का उल्लेख नहीं था, उसको खोला तो देखते-के-देखते रह गए। सुन्दर-सुन्दर अक्षरों में पुस्तक में से चुने हुए नीतिवाक्य बालक ने उसी कापी में अंकित किए हुए थे। जगह-जगह नीचे लाल स्याही से महत्त्वपूर्ण अंशों पर रेखा खिंची हुई थी। उसमें पहले ही सफे पर पिता ने पढ़ा--

"बड़ों की आज्ञा सदा सुननी चाहिए और कभी उनको उत्तर नहीं देना चाहिए।"

"दुःख सहना वीरों का काम है। अपने दुःख में सज्जन पुरुष किसी को कष्ट नहीं देते और उसे शान्ति से सहते हैं।"

"रोग मानने से बढ़ता है। रोग की सब से अच्छी औषधि निराहार है।"

"घर ही उत्तम शिक्षालय है। सफल पुरुष पाठशाला में नहीं, जीवन-शाला में अध्ययन करते हैं।"

"दृढ़ संकल्प में जीवन की सिद्धि है। जो बाधाओं से नहीं डिगता, कछुआ ता है।"

पहले पृष्ठ के ये रेखांकित वाक्य पढ़ कर कापी को ज्यों-की-त्यों खोले पिता सामने शून्य में देखते-के-देखते रह गए।

दफ्तर में भी वे शान्ति न पा सके। शाम को लौटे तो मानो अपने को क्षमा न कर पाते थे। घर आने पर पत्नी ने कहा—"अरे उसे देखो तो, तब से ही कै हो रही है।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रामरत्न ने आकर देखा। रामचरण शान्त भाव से लेटा हुआ था।

पत्नी ने कहा—"स्कूल से आया तो निढाल हो रहा था। मुश्किल से दीवार पकड़ करके जीना चढ़ करके आया। और तब से दस बार कै हो चुकी है। पूछती हूँ तो कुछ कहता नहीं। देखो न क्या हो गया है?"

पिता ने कहा—"रामचरण, क्या बात है?"

रामचरण ने कहा—"कुछ नहीं, मतली है।"

"कल भी थी?"

"हाँ।"

पिता को और समझना शेष न रहा। वह यह भी न पूछ सके कि ऐसी हालत में तुम दोनों रोज़ दो-दो मील पैदल गए और आए। बस उनकी आँखें भर आयीं और वह डाक्टर लाने की बात सोचने लगे।

रामचरण ने उनकी ओर देखकर कहा—"कुछ नहीं है बाबू जी, न खाने से सब ठीक हो जायगा।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री विष्णु प्रभाकर

(जन्म : जून १९१२)

श्री विष्णु प्रभाकर का जन्म मीरपुर जिला मुज़फ्फरनगर में हुआ। आपने पंजाब विश्वविद्यालय से बी० ए० उत्तीर्ण किया। पन्द्रह वर्ष तक पंजाब के सरकारी फार्म पर नौकरी करने के उपरान्त सन् १९४४ में आप पूर्ण रूप से साहित्य के क्षेत्र में आ गए। उस समय से आप साहित्य-सेवा में निरन्तर लीन हैं। यद्यपि आप साहित्य के क्षेत्र में बहुत पीछे आए किन्तु आपकी रुचि साहित्य के क्षेत्र में प्रारम्भ से ही थी। सन् १९३४ से ही आपने लिखना शुरू किया था। उस समय आप लेख गद्य काव्य में लिखते थे किन्तु शीघ्र ही कहानी लेखक बन गए। आधुनिक एकांकी नाटक क्षेत्र में आपका एक विशिष्ट स्थान है। सन् १९३९ से आपने नाटक और रेखाचित्र लिखना शुरू किया था। आज उनकी लेखनी इतनी मंज गई है कि उनका स्थान आधुनिक एकांकीकारों में प्रशंसा के योग्य माना जाता है। सन् १९४८ ई० से आप रेडियो रूपक लिख रहे हैं तथा उसमें भी प्रसिद्धि प्राप्त की है। डा० नगेन्द्र लिखते हैं—मानव जीवन का यथार्थ चित्रण, मनोवैज्ञानिक विश्लेषण विष्णुजी की कला की विशेषताएँ हैं। उनके साहित्य की मूलात्मा उनका सहज मानव गुण है। कहानीकार, नाटककार और उपन्यास-लेखक के रूप में श्री प्रभाकर जी ने हिन्दी साहित्य को अनेक रचनाएँ प्रदान की हैं। अब भी आपकी साहित्य-साधना निरन्तर चालू है। भाषा और शैली की दृष्टि से विष्णुजी एक श्रेष्ठ कलाकार हैं।

'मेरा वतन' कहानी श्री विष्णु प्रभाकर की एक राष्ट्रीय विचारों से पूर्ण रचना है। वतन का प्रेम और उसके प्रति निष्ठा जीवन की सब से अमूल्य वस्तु होती है। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के समय की एक भीषण परिस्थिति की घटना को लेकर लेखक ने उसे देश-

कहानी संकेत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भक्ति का बानां पहनाया है, यद्यपि कहानी का वातावरण विषाक्त है। देश-विभाजन की दारुण घटनाओं का एक नग्न चित्र है किन्तु श्री पुरी की देशभक्ति की भावना उस विषैले वातावरण में प्रेम की अमृतमयी स्रोतस्विनी प्रवाहित कर देती है। देशवासी, देश के किसी भाग में रहे, किसी भी सम्प्रदाय या मज़हब का मानने वाला हो, किन्तु मातृभूमि के कण-कण के प्रति उसके हृदय में निष्ठा होनी चाहिए। उसे मतभेद भूलकर देश में एकता का शंख नाद कर देना चाहिए; यही भावना होनी चाहिए कि इसी देश के लिए जीना है और इसी के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देना है। श्री प्रभाकर जी की भाषा सजीव और पात्रानुकूल है तथा शैली नाटकीय है। नाटककार होने के कारण कहानी के संवाद सजीव हो उठे हैं। यथार्थ को आदर्शोन्मुख करके दिखाना लेखक की सफलता का द्योतक है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मेरा वतन

उसने सदा की भांति तहमद लगा लिया था और फैज़ ओढ़ ली थी। उसका मन कभी-कभी साइकिल के ब्रेक की तरह तेजी से झटका देता था, परन्तु पैर यन्त्रवत् आगे बढ़ते चले जाते थे। यद्यपि इस शक्ति-प्रयोग के कारण वह बे-तरह कांप उठता था, पर उसकी गति पर अंकुश नहीं लगता था। देखने वालों के लिए वह एक अर्द्ध-विक्षिप्त से अधिक समझदार नहीं था। वे अक्सर उसका मज़ाक उड़ाना चाहते थे। वह क़हक़हे लगाते और ऊंचे स्वर में गालियां पुकारते; पर जैसे ही उसकी दृष्टि उठती—न जाने उन निरीह, भावहीन, फटी-फटी आंखों में क्या होता था—वे सहम जाते; सोडावाटर के तूफान की तरह उठने वाले क़हक़हे मर जाते और वह नज़र दिल की अन्दरूनी बस्ती को शोले की तरह सुलगाती हुई फिर नीचे झुक जाती। वे फुसफुसाते—'जरूर इसका सब कुछ लुट गया है'.....'इसके रिश्तेदार मारे गए हैं'.....'नहीं,न हीं, ऐसा लगता है कि काफिरों ने इसके बच्चों को इसी के सामने आग में भून दिया है या भालों की नोक पर टिकाकर तब तक घुमाया है जब तक उनकी चीख पुकार बिल्ली की मिमियाहट से चिडिया के बच्चे की चीं-चीं में पलटती हुई खत्म नहीं हो गई है।'

"और यह सब देखता रहा है।"

"हां! यह देखता रहा है। यही खौफ़ इसकी आंखों में उतर आया है। उसी खौफ़ ने इसके रोम-रोम को जकड़ लिया है। वह खौफ़ इसके लहू में इतना घुल-मिल गया है कि इसे देखकर डर लगता है।"

"डर"—किसी ने कहा था "इसकी आंखों में मौत की तसवीर है, वह मौत, जो कत्ल, खूंरेज़ी और फांसी का निज़ाम सम्भालती है।"

एक बार राह चलते दर्दमन्द ने एक दुकानदार से पूछा—"यह कौन है ?"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दुकानदार ने जवाब दिया—"मुसीबतज़दा है, जनाब ! अमृतसर में रहता था। काफिरों ने सब कुछ लूटकर इसके बीवी-बच्चों को आग में फूंक दिया।"

"ज़िन्दा"—राहगीर के मुंह से अचानक निकल गया।

दुकानदार हंसा—"जनाब किस दुनियां में रहते हैं। वह दिन बीत गए जब आग काफिरों के मुर्दों को जलाती थी। अब तो वह जिन्दों को जलाती है।"

राहगीर ने तब कड़वी भाषा में काफिरों को वह सुनाई कि दुकानदार ने खुश होकर उसे बैठ जाने के लिए कहा। उसे जाने की जल्दी थी। फिर भी जरा-सा बैठकर उसने कहा—"कोई बड़ा आदमी जान पड़ता है।"

"जी हां ! वकील था, हाईकोर्ट का बड़ा वकील। लाखों रुपयों की जायदाद छोड़ आया है।"

"अच्छा जी।"

"जनाब ! क्या पूछते हैं ? आदमी आसानी से पागल नहीं होता। दिल पर चोट लगती है तभी वह टूटता है। पर जब एक बार टूट जाता है तो फिर नहीं जुड़ता। आजकल चारों तरफ़ यही कहानी है। मेरा घर का मकान नहीं था, लेकिन दूकान में सामान इतना था कि तीन मकान बन सकते थे।"

"जी हां"—राहगीर ने सदय होकर कहा—"आप ठीक कहते हैं पर आप के बाल-बच्चे तो ठीक आ गए हैं।"

"जी हां ! खुदा का फज़ल है। मैंने उन्हें पहले ही भेज दिया था। जो पीछे रह गए थे उनकी न पूछिए। रोना आता है। खुदा गारत करे हिन्दुस्तान को.....।"

राहगीर उठा। उसने बात काट कर इतना ही कहा—"देख लेना एक दिन वह गारत होकर रहेगा। खुदा के घर में देर है, पर अन्धेर नहीं।"

और वह चला गया, परन्तु उस अर्द्ध-विक्षिप्त के क्रम में कोई अन्तर नहीं पड़ा। वह उसी तरह धीरे-धीरे बाजारों में से गुज़रता, शरणार्थियों

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

की भीड़ में धक्के खाता, परन्तु उस ओर देखता नहीं। उसकी दृष्टि तो आस-पास की दुकानों पर जा अटकती थी। अटकती ही नहीं, चिपक जाती थी। मिकनातीस लोहे को खींच लेता है वैसे ही वे बेज़बां इमारतें, जो जगह-जगह पर खण्डहर की शकल में पलट चुकी थीं, उसकी नज़र और नज़र के साथ उसके मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार सभी को अपनी ओर खींच लेती थीं और फिर उसे जो कुछ याद आता, वह उसे पैर के तलुए से होकर सिर में निकल जाने वाली सूली की तरह काटता हुआ, उसके दिल के कोने में जा बैठता था। इसी कारण वह आज तक मर नहीं सका था, केवल सिसकियां भरता रहता था, वे सिसकियां जिनमें न शब्द थे, न आंसू। वे सूखी हिचकियों की तरह उसे बेजान किए हुए थीं।

सहसा उसने देखा—सामने उसका अपना मकान आ गया है। उसके अपने दादा ने उसे बनाया था। उसके ऊपर के कमरे में उसके पिता का जन्म हुआ था। उसी कमरे में उसने आंखें खोली थीं और उस कमरे में उसके बच्चों ने पहली बार प्रकाश-किरण का स्पर्श पाया था। उस मकान के कण-कण में उसके जीवन का इतिहास अंकित था। उसे फिर बहुत सी कहानियां याद आने लगीं। वह तब उन कहानियों में इतना डूब गया था कि उसे परिस्थिति का तनिक भी ध्यान नहीं रहा। वह ज़ीने पर चढ़ने के लिए आगे बढ़ा और जैसा कि वह सदा करता था उसने घंटी पर हाथ डाला। बे-जान घंटी शोर मचाने लगी और तभी उसकी नींद टूट गई। उसने अपने चारों ओर देखा। वहां सब एक ही तरह के आदमी नहीं थे। वे सब एक ही ज़बान नहीं बोलते थे। फिर भी उनमें ऐसा कुछ था जो उन्हें एक कर रहा था और वह इस एके में अपने लिए कोई जगह नहीं पाता था। उसने तेजी से आगे बढ़ जाना चाहा, पर तभी ऊपर से एक व्यक्ति उतर आया। उसने ढीला पाजामा और कुरता पहना था, पूछा—"कहिए जनाब ?"

वह अचकचाया—"जी !"

"जनाब किसे पूछते थे ?"

"जी, मैं पूछता था कि मकान खाली है।"

ढीले पाजामे वाले व्यक्ति ने उसे ऐसे देखा कि जैसे वह कोई चोर या उठाईगीर हो। फिर मुंह बनाकर तसल्ली से जवाब दिया—"जनाब

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तशरीफ ले जाइए वरना····"आगे उसने क्या कहा वह यह सुनने के लिए नहीं रुका, बढ़ा चला गया। उसकी गति में तूफान भर उठा, उसके मस्तिष्क में बवंडर उठ खड़ा हुआ और उसका चिन्तन गति की चट्टान पर टकराकर पाश-पाश हो गया। उसे जब होश आया तो वह अनारकली से लेकर माल तक का समूचा बाजार लांघ चुका था। वह बहुत दूर निकल गया था। यहां आकर वह कांपा। एक टीस ने उसे कुरेद डाला जैसे बढ़ई ने पेच में पेचकश डालकर पूरी शक्ति के साथ उसे घुमाना शुरू कर दिया हो। हाईकोर्ट की शानदार इमारत उसके सामने थी। वह दृष्टि गाडकर उसके कंगूरों को देखने लगा। उसने बरामदे की कल्पना की। उसे याद आया—वह कहां बैठता था, वह कौन से कपड़े पहनता था कि उसका हाथ सिर पर गया जैसे उसने सांप को छुआ। उसने उसी क्षण हाथ खींच लिया, पर मोहक स्वप्नों ने उसी रंगीन दुनिया की रंगीनी को उसी तरह बनाये रखा। वह तब इस दुनिया में इतना डूब चुका था कि बाहर की जो वास्तविक दुनिया है वह उसके लिए मृगतृष्णा बन गई थी। उसने अपने पैरों के नीचे की धरती को ध्यान से देखा, देखता रहा। सिनेमा की तसवीरों की तरह अतीत की एक दुनिया, एक शानदार दुनिया उसके अन्तस्तल पर उतर आई। वह इसी धरती पर चला करता था। उसके आगे-पीछे उसे नमस्कार करते, सलाम झुकाते, बहुत से आदमी आते और जाते थे। दूसरे वकील हाथ मिलाकर शिष्टाचार प्रदर्शित करते और···

विचारों के हनुमान ने समुद्र पार करने के लिए छलांग लगाई—उसका ध्यान जज के कमरे में जा पहुंचा। जब वह अपने केस में बहस शुरू करता था तो कमरे में सन्नाटा छा जाता था। केवल उसकी वाणी की प्रतिध्वनि गूंजा करती थी, केवल 'मी लार्ड' शब्द बार-बार उठता और 'मी लार्ड' कलम रखकर उसकी बात सुनते····

हनुमान फिर कूदे और अब वह बार-ऐसोसिएशन के कमरे में आ गया था। इसमें न जाने कितने कहकहे उसने लगाए थे, कितनी बार राजनीति पर उत्तेजित कर देने वाली बहसें की थीं, वहीं बैठकर उसने महापुरुषों को अनेक बार श्रद्धांजलियां भेंट की थीं और विदा और स्वागत के खेल खेले थे।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वह अब उस कुर्सी के बारे में सोचने लगा जिस पर वह बैठा करता था। तब उसे कमरे की दीवारों के साथ-साथ दरवाजे के पायदान की याद भी आ गई और वह पायदान को देखने के लिए आतुर हो उठा। वह सब-कुछ भूलकर सदा की तरह झूमता हुआ आगे बढ़ा, पर तभी जैसे किसी ने उसे कचोट लिया, उसने देखा कि लॉन की हरी घास मिट्टी में समा गई है। रास्ते बन्द हैं, केवल डरावनी आँखों वाले सैनिक मशीनगन संभाले, हैलमेट पहने तैयार खड़े हैं कि कोई आगे बढ़े और वे शूट कर दें। उसने हरी वर्दी वाले होमगार्डों को भी देखा और देखा कि राइफल थामे पठान लोग जब मन में उठता है तब फायर कर देते हैं। वे मानो छड़ी के स्थान पर राइफल का प्रयोग करते हैं और उनके लिए जीवन की पवित्रता बन्दूक की गोली की सफलता पर निर्भर करती है। उसे स्वयं जीवन की पवित्रता से अधिक मोह नहीं था। वह खंडहरों के लिए आंसू भी नहीं बहाता था। उसने अग्नि की प्रज्वलित लपटों को अपनी आंखों से उठते देखा था। उसे तब खाण्डव-वन की याद आ गई थी जिसकी नींव पर इन्द्रप्रस्थ-सरीखे वैभवशाली और क़लामय नगर का निर्माण हुआ था। तो क्या इस महानाश की नींव पर भी किसी गौरव-गरिमामय-कलाकृति का निर्माण होगा। इन्द्रप्रस्थ की उस कला के कारण महाभारत सम्भव हुआ, जिसने इस अभागे देश के मदोन्मत्त, किन्तु जर्जरित शौर्य को सदा के लिए समाप्त कर दिया। क्या आज फिर वही कहानी दोहराई जाने वाली है।

एक दिन उसने अपने बेटे से कहा था—जिन्दगी न जाने क्या-क्या खेल खेलती है। वह तो बहुरूपिया है, पर दूसरी दुनिया बनाते हमें देर नहीं लगती। परमात्मा ने मिट्टी इसलिए बनाई है कि हम उसमें से सोना पैदा करें।

बेटा बाप का सच्चा उत्तराधिकारी था। उसने परिवार को एक छोटे-से कस्बे में छोड़ा और आप आगे बढ़ गया। वह अपनी उजड़ी हुई दुनिया को फिर से बसा लेना चाहता था, पर तभी अचानक छोटे भाई का तार मिला। लिखा था—"पिताजी न जाने कहां चले गए!"

तार पढ़कर बड़ा भाई अचरज से कांप उठा। वह घर लौटा और पिताजी की खोज करने लगा। उसने मित्रों को लिखा, रेडियो पर समाचार

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भेजे, अखबारों में विज्ञापन निकलवाये। सब कुछ किया, पर वह यह नहीं समझ सका, कि आखिर वे कहां गए और क्यों गए। वह इसी उधेड़-बुन में था कि एक दिन सवेरे-सवेरे देखा—वे चले आ रहे हैं शान्त, निर्द्वन्द्व और निर्लिप्त।

"आप कहां चले गए थे ?....." प्रथम भावोद्रेक समाप्त होने पर पुत्र ने पूछा।

शान्त मन से पिता ने उत्तर दिया—"लाहौर।"

"लाहौर"—पुत्र हठात् कांप उठा—"आप लाहौर गए थे ?"

"हां।"

"कैसे ?"

पिता बोले—"रेल में बैठकर गया था, रेल में बैठकर आया हूं।"

"पर आप वहां क्यों गए थे ?"

"क्यों गया था"—जैसे उसकी नींद टूटी। उसने अपने आपको संभालते हुए कहा—"वैसे ही, देखने के लिए चला गया था।"

और आगे की बहस से बचने के लिए वह उठकर चला गया। उसके बाद उसने इस बारे में किसी भी प्रश्न का जवाब देने से इन्कार कर दिया। उसके पुत्रों ने पिता के इस परिवर्तन को देखा, पर न तो वे उन्हें समझा सकते थे, न उन पर क्रोध कर सकते थे; क्योंकि वे दुनिया के दूसरे काम सदा की भांति करते रहते थे। हां, पंजाब की बात चलती तो आह भर कर कह देते थे—"गया पंजाब ! पंजाब अब कहां है ?" पुत्र फिर काम पर लौट गए और वे भी घर की व्यवस्था करने लगे। इसी बीच में वे फिर एक दिन लाहौर चले गये, परन्तु इससे पहले कि उनके पुत्र इस बात को जान सकें, वे लौट आये। पत्नी ने पूछा—"आखिर क्या बात है ?"

"कुछ नहीं।"

"कुछ नहीं कैसे ? आखिर आप वहां क्यों जाते हैं ?"

तब कई क्षण चुप रहने के बाद उन्होंने धीरे से कहा—"क्यों जाता हूं, क्योंकि वह मेरा वतन है। मैं वहीं पैदा हुआ हूं। वहां की मिट्टी में मेरी जिन्दगी का राज़ छिपा है। वहां की हवा में मेरे जीवन की कहानी लिखी हुई है।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पत्नी की आंखें भर आईं, बोली—"पर अब क्या, अब तो सब कुछ गया।"

"हां, सब कुछ गया।" उन्होंने कहा—"मैं जानता हूं अब कुछ नहीं हो सकता, पर न जाने क्या होता है, उसकी याद आते ही मैं अपने-आप को भूल जाता हूं और मेरा वतन मिकनातीस की तरह मुझे अपनी ओर खींच लेता है।" उनकी आंखें भर आईं।

करुण स्वर में पत्नी ने कहा—"नहीं, नहीं, आपको अपने मन को संभालना चाहिए। जो कुछ चला गया उसका दुःख तो जिन्दगी भर सालता रहेगा। भाग्य में यही लिखा था, पर अब जान-बूझ कर आग में कूदने से क्या लाभ ?"

"हां, अब तो जो कुछ बचा है उसी को सहेज कर गाड़ी खींचनी ठीक है"—उसने पत्नी से कहा और फिर जी-जान से नए कार्य-क्षेत्र में जुट गया। उसने फिर वकालत का चोगा पहन लिया। उसका नाम फिर बार-एसोसिएशन में गूंजने लगा। उसने अपनी जिन्दगी को भूलने का पूरा-पूरा प्रयत्न किया। और शीघ्र ही वह अपने काम में इतना डूब गया कि देखने वाले दांतों तले उंगली दबाकर कहने लगे—"इन लोगों में कितना जीवन है। सहस्रों वर्षों में अनेक पीढ़ियों ने अपने को खपा कर जिस दुनिया का निर्माण किया था वह क्षण-भर में राख का ढेर हो गई, तो बिना आंसू बहाए उसी तरह की दुनिया, ये लोग क्षणों में ही बना देना चाहते हैं।"

उनका अचरज ठीक था। तम्बुओं और कैम्पों के आस-पास, सड़कों के किनारे, राह से दूर भूत-प्रेतों के चिर-परिचित अड्डों में, उजड़े गांवों में, खोले और खादर में, जहां भी मनुष्यों की शक्ति कुण्ठित हो चुकी थी वहीं ये लोग पहुंच जाते थे और पादरी के नास्तिक मित्र की तरह नरक को स्वर्ग में बदल देते थे। उन लोगों ने जैसे कसम खाई थी कि धरती असीम है, शक्ति असीम है, फिर निराशा कहां रह सकती है ?

ठीस उसी समय जब उसका बड़ा पुत्र अपनी नई दुकान का मुहूर्त करने वाला था, उसे एक बार फिर छोटे भाई का तार मिला—"पिता जी पांच दिन से लापता हैं।" पढ़कर वह क्रुद्ध हो उठा और तार के टुकड़े-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

टुकड़े करके उसने दूर फेंक दिये और चिनचिनाया—"वे नहीं मानते तो उन्हें अपने किये का फल भोगना चाहिए। वे अवश्य लाहौर गए हैं।" उसका अनुमान सच था। जिस समय वे इस प्रकार चिन्तित हो रहे थे उसी समय लाहौर के एक दुकानदार ने एक अर्द्ध-विक्षिप्त व्यक्ति को, जो तहमद लगाए, फैज़ कैप ओढ़े, फटी-फटी आंखों से चारों ओर देखता हुआ घूम रहा था, पुकारा—"शेख़ साहब! सुनिए तो। बहुत दिन में दिखाई दिए, कहां चले गए थे?"

उस अर्द्ध-विक्षिप्त पुरुष ने थकी हुई आवाज में जवाब दिया—"मैं अमृतसर चला गया था।"

"क्या"—दुकानदार ने आंखें फाड़कर कहा—"अमृतसर!"

"हां, अमृतसर गया था। अमृतसर मेरा वतन है।"

दुकानदार की आंखें क्रोध से चमक उठीं, बोला—"मैं जानता हूं। अमृतसर में साढ़े तीन लाख मुसलमान रहते थे, पर आज एक भी नहीं है।"

"हां" उसने कहा—"वहां आज एक भी मुसलमान नहीं है।"

"काफिरों ने सबको भगा दिया, पर हमने भी कसर नहीं छोड़ी। आज लाहौर में एक भी हिन्दू या सिक्ख नहीं है और कभी होगा भी नहीं।"

वह हंसा, उसकी आंखें चमकने लगीं। उसमें एक ऐसा रंग भर उठा जो बे-रंग था और वह हंसता चला गया, हंसता चला गया···"वतन, धरती, मोहब्बत, सब कितनी छोटी-छोटी बातें हैं···सबसे बड़ा मज़हब है, दीन है, खुदा का दीन। जिस धरती पर खुदा का बन्दा रहता है, जिस धरती पर खुदा का नाम लिया जाता है, वह मेरा वतन है, वही मेरी धरती है और वही मेरी मोहब्बत है।"

दूकानदार ने धीरे-से अपने दूसरे साथी से कहा—"आदमी जब होश खो बैठता है, तो कितनी सच्ची बात कहता है।"

साथी ने जवाब दिया—"जनाब! तब उसकी जबान से खुदा बोलता है।"

"बेशक"—उसने कहा और मुड़कर उस अर्द्ध-विक्षिप्त से बोला—"शेख साहब! आपको घर मिला?"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"सब मेरे ही घर हैं।"

दूकानदार मुस्कराया—"लेकिन शेख साहब ! जरा बैठिए तो अमृतसर में किसी ने आपको पहचाना नहीं।"

वह ठहाका मार कर हंसा—"तीन महीने जेल में रहकर लौटा हूं।

"सच।"

"हां, हां"—उसने आंखें मटकाकर कहा।

"तुम जीवट के आदमी हो।"

और तब दूकानदार ने खुश होकर उसे रोटी और कबाब मंगाकर दिया। लापरवाही से उन्हें पल्ले में बांध कर और एक टुकड़े को चबाता हुआ वह आगे बढ़ गया।

दूकानदार ने कहा—"अजीब आदमी है। किसी दिन लखपती था, आज फाकामस्त है।"

"खुदा अपने बन्दों का खूब इम्तहान लेता है।"

"जन्नत ऐसे को ही मिलता है।"

"जी हां। हिम्मत भी खूब है। जान-बूझकर आग में जा कूदा।"

"वतन की याद ऐसी ही होती है," उसके साथी ने जो दिल्ली का रहने वाला था कहा, "अब भी जब मुझे दिल्ली की याद आती है तो दिल भर आता है।"

और वह आगे बढ़ रहा था। माल पर भीड़ बढ़ रही थी। कारें भी कम नहीं थीं और अंग्रेज, एंग्लो-इण्डियन तथा ईसाई नारियां पूर्ववत् बाजार में भ्रमण कर रही थीं। फिर भी उसे लगा कि वह माल जो उसने देखी थी यह नहीं है। शरीर कुछ वैसा ही था, पर उसकी आत्मा झुलस रही हैं। लेकिन यह भी उसकी दृष्टि का दोष था। कम-से-कम वे जो वहाँ घूम रहे थे उनका ध्यान आत्मा की ओर नहीं था।

एकाएक वह पीछे मुड़ा। उसे रास्ता पूछने की जरूरत नहीं थी। बैल की तरह उसके पैर डगर को पहचानते थे। आंखें इधर-उधर देख रही थीं। पैर अपने रास्ते पर बिना डगमगाए बढ़ रहे थे और विश्व-विद्यालय की आलीशान इमारत एक बार फिर सामने आ रही थी। उसने नुमायश की ओर एक दृष्टि डाली, फिर वुलनर के बुत की तरफ से हो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कर वह अन्दर चला गया। उसे किसी ने नहीं रोका और वह लॉ क़ालिज के सामने निकल आया। उस समय उसका दिल एक गहरी हूक से टीसने लगा था। कभी वह इस कालेज में पढ़ा करता था···वह कांपा, उसे याद आया, उसने इस कालेज में पढ़ाया भी है···वह फिर कांपा। हूक फिर उठी। उसकी आंखें भर आईं। उसने मुंह फेर लिया। उसके सामने वह रास्ता था जो उसे दयानन्द कालेज ले जा सकता था। एक दिन पंजाब-विश्वविद्यालय, दयानन्द-विश्वविद्यालय कहलाता था।

तब एक भीड़ उसके पास से निकल गई। वे प्रायः सभी शरणार्थी थे···बे-घर और बे-ज़र, लेकिन उन्हें देखकर उसका दिल पिघला नहीं, कड़वा हो उठा। उसने चिल्लाकर उन्हें गालियां देनी चाहीं। तभी पास से जाने वाले दो व्यक्ति उसे देखकर ठिठक गए। एक ने रुककर उसे ध्यान से देखा, दृष्टि मिली, वह सिहर उठा। सर्दी गहरी हो रही थी और कपड़े कम थे। वह तेजी से आगे बढ़ा। वह जल्दी-से-जल्दी कालेज-कैम्प में पहुंच जाना चाहता था। उन दो व्यक्तियों में से एक जिसने उसे पहचाना था, दूसरे से कहा—"मैं उसको जानता हूं।"

"कौन है ?"

"हिन्दू।"

साथी अचकचाया—"हिन्दू"

"हां, हिन्दू। लाहौर का एक मशहूर वकील···" और कहते-कहते उसने ओवर-कोट की जेब में से पिस्तौल निकाल लिया। वह आगे बढ़ा। उसने कहा—"जरूर यह मुखबिरी करने आया है।"

उसके बाद गोली चली। एक हलचल, एक खटपट-सी मची। देखा एक व्यक्ति चलता-चलता लड़खड़ाया और गिर पड़ा। पुलिस ने उसे देखकर भी अनदेखा कर दिया, परन्तु जो अनेक व्यक्ति उस पर झुक गए थे, उनमें से एक ने उसे पहचाना और कांप कर पुकारा—"मिस्टर पुरी ! तुम यहां, ऐसे····!"

मिस्टर पुरी ने आंखें खोलीं, उनका मुख श्वेत हो गया था और उस पर मौत की छाया पड़ रही थी। उन्होंने पुकारने वाले को देखा और धीरे से कहा —"हसन, हसन...!"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आंखें फिर मिच गईं। हसन ने चिल्ला कर सैनिक से कहा—"जल्दी करो। टैक्सी लाओ। मेयो अस्पताल चलना है। अभी…"

भीड़ बढ़ती जा रही थी। फौज, पुलिस और होमगार्ड सबने उसे घेर लिया। हसन, जो उसका साथी था, जिसके साथ वह पढ़ा था, जिसके साथ उसने साथी और प्रतिद्वन्द्वी बनकर अनेक मुकदमे लड़े थे, वह अब उसे अचरज से देख रहा था। उसने एक बार झुककर कहा—"तुम यहां इस तरह क्यों आये, मिस्टर पुरी ?"

मिस्टर पुरी ने एक बार फिर आंखें खोलीं। वे धीमें से स्वर में फुसफुसाये—"मैं यहां क्यों आया ? मैं यहां से जा ही कहां सकता हूं ? यह मेरा वतन है, हसन ! मेरा वतन…!"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार

(जन्म : सन् १९०६ ई०)

श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार का जन्म पश्चिमोत्तर पंजाब के कोट अद्दू नामक गांव में हुआ था। आपने गुरुकुल कांगड़ी में शिक्षा प्राप्त की, इसके पश्चात् आपने लाहौर में 'विश्व साहित्य ग्रन्थमाला' का प्रकाशन व संचालन किया। इस समय आप बम्बई से प्रकाशित होने वाली प्रमुख कहानी पत्रिका 'सारिका' का सम्पादन कर रहे हैं। कहानी लेखक होने के साथ विद्यालंकार जी सफल समालोचक, नाटककार और संपादक भी हैं। अपनी रोचक और सजीव शैली के कारण आप वर्तमान समय के सफल और कुशल लेखकों में गिने जाते हैं। आपकी पहली कहानी 'विशाल भारत' में सन् १९२८ में प्रकाशित हुई थी, तब से साहित्य क्षेत्र में आप निरन्तर कुछ न कुछ लिखते ही रहे हैं। आपके जीवन का ध्येय सदा साहित्य साधना रहा है जो कि आपके स्वभाव और रुचि के अनुकूल है। भाषा की सरलता, टकनीक के नये-नये प्रयोग तथा मार्मिक चित्रण, आपकी साहित्य कला के प्रमुख गुण हैं। आपने अनेक कहानियां लिखी हैं जिनके संग्रह चन्द्रकला, भय का राज्य और अभाव और वापिसी के नाम से प्रकाशित हुए हैं।

प्रस्तुत कहानी 'मास्टर साहब' लेखक की एक उत्कृष्ट रचना है। विद्यालंकार जी ने सन् १९४७ ई० के आन्दोलन की एक घटना लेकर अध्यापक के आदरणीय स्वरूप का चित्र उपस्थित किया है।

कहानी संकेत

शिक्षक का स्वरूप व उसका स्तर कितना महान् है, समाज के लिए वह कितना उपयोगी व्यक्ति है, इस तथ्य को कहानी का रूप देकर श्री चन्द्रगुप्त ने अध्यापक जीवन के आदर्श की ओर पाठकों को आकर्षित किया है। साथ ही शिक्षक को भी उसके कर्त्तव्यों के प्रति सजग रहने का संकेत किया गया है। यदि शिक्षक अपने कर्त्तव्य में निष्ठा के साथ लगा रहे तो उसके सम्मान में कमी कोई कमी नहीं आ सकती। साहित्यिक और सुरुचिपूर्ण शैली के कारण इस कहानी में कलात्मकता आ गई है। उद्देश्य की दृष्टि से यह एक सफल कहानी है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मास्टर साहब

न जाने क्यों बूढ़े मास्टर रामरतन को कुछ अजीब तरह की थकान-सी अनुभव हुई और सन्ध्या-प्रार्थना समाप्त कर वे खेतों के बीचों-बीच बने उस छोटे-से चबूतरे पर बिछी एक चटाई पर ही लेटे रहे। सन् १९४७ के अगस्त मास की एक चांदनी रात अभी-अभी आरम्भ हुई थी। मास्टर साहब ने सन्ध्या-प्रार्थना आरम्भ की थी, तो आकाश पर छितराये बादलों में अभी गहरी लाली विद्यमान थी, परन्तु सन्ध्या समाप्त कर जब उन्होंने अपनी आंखें खोलीं तो सब तरफ चांदनी व्याप्त हो चुकी थी और आकाश के एक भाग में छाये हल्के-हल्के बादल रूई के बंडलों की तरह सफेद दिखाई देने लगे थे। पिछले दिनों बहुत गर्मी रही थी—मौसम की भी, दिमाग की भी। मास्टर साहब का यह कस्बा जैसे दुनिया के एक किनारे पर है। निकट-से-निकट का रेलवे-स्टेशन वहां से ३० मील की दूरी पर है। फिर भी पिछले कितने ही दिनों से अमंगलपूर्ण खबरें दिन-रात सुनने में आ रही हैं। सुना जाता है, मुसलमान हिन्दुओं और सिक्खों के खून के प्यासे बन गये हैं। दुनिया तबाह हो रही है। घर-बार लूटे जा रहे हैं। सब तरफ मार-काट जारी है। मास्टर साहब के गांव में भी अभी तक अमन-चैन जारी है फिर भी वहां के वातावरण में एक गहरा त्रास स्पष्ट छाया हुआ है।

चांदनी रात की ठण्डी हवा और चारों तरफ गहरा सन्नाटा। मास्टर साहब को जैसे राहत-सी मिली। थके हुए दिमाग का बोझ उतर-सा गया। ऊंह ये सब झूठी अफवाहें हैं। कभी ऐसा भी हो सकता है। भला, जब मैंने किसी का कुछ भी नहीं बिगाड़ा, तो किसी को कुत्ते ने काटा है कि वह मेरे खून का प्यासा बन जाए। अपनी जिन्दगी के ६५ बरस मैंने यहां बिताए हैं। मेरे शिष्यों की संख्या हजारों में है। हिन्दू, सिक्ख, मुसलमान सभी को मैंने एक समान दिलचस्पी से पढ़ाया है। कोई एकाएक मेरा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दुश्मन क्यों बन जाएगा ? मगर यह पाकिस्तान ! मास्टर साहब की दिमागी राहत को जैसे एकाएक ठोकर लग गई। यह पाकिस्तान तो अब सर पर ही आने वाला है। मास्टर साहब के शरीर भर में एक कंपकंपी-सी छूट गई।

मां प्रकृति ने जैसे अपने इस बूढ़े पुत्र को प्यार-भरी थपकी दी। हवा की ठण्डक और भी बढ़ गई और चांदनी का उजलापन और भी चमक आया। मास्टर साहब को सहसा अनुभव हुआ यह तो वही दुनिया है जिसे देखने का अभ्यास उन्हें बचपन से है। वही खेत हैं, जिन्हें उनके बाप-दादा उनके लिये छोड़ गए हैं। वही आसमान है, वही धरती है और वही सदैव ताजी बनकर बहने वाली हवा है। आखिर पाकिस्तान इन सबको तो नहीं बदल डालेगा। ये सब तो उसी तरह कायम रहेंगे। आखिर पाकिस्तान में भी इन्सान रहेंगे, काम-धन्धे रहेंगे, भाषा रहेगी, लिखना-पढ़ना रहेगा, फिर मेरे जैसा फारसीदां पाकिस्तान वालों को क्योंकर नागवार गुजरेगा ? पाकिस्तान बनेगा, तो यह सब-कुछ बदल थोड़ा जाएगा। आखिर कोई बाहर के लोग तो आकर पाकिस्तान को नहीं बसाएंगे। पाकिस्तान एक दिन बनना ही था, चलो, वह हमारी जिन्दगी ही में बन गया।

रात का सन्नाटा और भी गहरा हो गया, और अपनी इस छोटी-सी जमींदारी के इस अत्यन्त सुरक्षित भाग पर लेटे-लेटे मास्टर साहब को नींद आ गई। प्रभात की लाली आसमान पर दिखाई देने लगी ही थी कि मास्टर साहब की नींद टूट गई। सहसा उन्होंने पाया कि वातावरण अभी तक एकदम नीरव है। यहां तक कि चिड़ियों की चहचहाहट भी सुनाई नहीं दी। मास्टर साहब उठ खड़े हुए और तेजी से गांव की ओर चल पड़े।

एक खास तरह की मनहूसियत जैसे उन्हें चारों ओर फैली हुई दिखाई दे रही थी। राह में कितने ही मुसलमान किसानों के कच्चे कोठे हैं। उन कोठों के आसपास कितने ही बच्चों और औरतों को उन्होंने देखा। उनमें अधिकांश से वे परिचित थे परन्तु आज सभी उन्हें कुछ बदले हुए से प्रतीत हो रहे थे। एक गहरी चुप्पी जैसे पुकार-पुकार कर उन्हें

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चेतावनी दे रही थी कि महाकाल की वेला सिर पर है। राह के किसानों के चेहरे जरूर गम्भीर थे, परन्तु मास्टर साहब से किसी ने कुछ भी नहीं कहा। वे तेजी से गांव की ओर बढ़ते गए।

यह दूर पर क्या दिखाई दे रहा है? मास्टर साहब रामरतन सहसा चौंक पड़े। जिस तरफ उनका गांव है, उधर ही सुदूर क्षितिज पर बहुत बड़े पैमाने पर यह काला-काला क्या दिखाई दे रहा है! यह बादल कदापि नहीं, क्योंकि बादल पृथ्वी से आकाश की ओर नहीं जाते। मास्टर साहब की चाल और भी तेज हो गई। अब उन्हें सुदूर क्षितिज पर लाली भी दिखाई देने लगी। सुबह-सुबह पश्चिम में दिखाई देने वाली यह लाली स्पष्टतः किसी बहुत बड़े अमंगल की सूचक थी। बूढ़ा मास्टर अपने परमात्मा से प्रार्थना करने लगा और चाहे जो कुछ भी हो, वह अग्निकांड उनके गांव में न हुआ हो। परन्तु यह तो स्पष्ट ही है कि उनका गांव जल रहा है। बूढ़े मास्टर ने अपनी प्रार्थना की मांग और भी कम कर दी; चाहे उनका सारा गांव जल कर भस्म हो जाए, उनके गांव के सभी निवासी सही-सलामत बच जाएं।

मास्टर साहब अब दौड़ने लगे। बहुत जल्द वे पसीना-पसीना हो गए। फिर भी उनकी दौड़ जारी रही। कुछ दूर पहुंचकर एक अत्यन्त त्रासदायक महानाद-सा भी उन्हें सुनाई देने लगा, जैसे सैकड़ों नर-नारी एक साथ ही हाहाकार कर रहे हों।

बूढ़े मास्टर ने अपनी प्रार्थना की मांग और भी कम कर दी। चाहे कितने ही लोग कत्ल क्यों न हो जायें, उनके गांव की किसी लड़की का अपमान न हो पाए।

और तभी सहसा चिन्ता के एक बड़े तूफान ने उनके हृदय को एक सिरे से दूसरे सिरे तक झकझोर कर रख दिया। ओह! उनके परिवार की सब स्त्रियां और बच्चे गांव में ही थे। और उनकी लाडली पोती निर्मला जिसकी १६वीं वर्ष गांठ अभी ५ ही दिन हुए बीती है।

मास्टर साहब के हृदय की सम्पूर्ण सदभिलाषाएं स्वयमेव अपनी लाड़ली पोती निम्मो के चारों ओर केन्द्रित हो गईं। ओ मेरे परमात्मा, ओ मेरे देवता, यह तेरी अपनी लज्जा का सवाल है। मेरी निम्मो को तू

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अपने पास भले ही बुला ले, उसकी अप्रतिष्ठा मत होने देना।

पूरब दिशा का आग पुंज सूरज निकल आया। मास्टर साहब अब अपने गांव के काफी निकट पहुंच गए थे। अब वे अकेले भी नहीं थे। उनके गांव के कितने ही हिन्दू और सिक्ख खेतों में छिपे या गांव की ओर से भागकर आते हुए उन्हें दिखाई दिये। मास्टर साहब पसीने से तर-बतर हो गए थे। राह की धूल उस पसीने से लगकर द्रवीभूत होने लगी थी। इस बहती मिट्टी से उनका मुंह, कपड़े और बाल बुरी तरह भर गए। फिर भी जिस किसी तरह वे दौड़ते चले गए और अपने गांव की सीमा में आ पहुंचे।

मास्टर साहब ने आवाज दी—"नत्थूसिंह, मेरे घर का क्या हाल है?"

नत्थूसिंह उनका पड़ोसी था। वह इतना उदास दिखाई दे रहा था, जैसे उसकी निर्जीव देह-मात्र चल फिर रही हो। नत्थूसिंह ने मुंह से कुछ भी नहीं कहा, सिर्फ इस तरह सिर हिला दिया, जिससे उसकी असमर्थता प्रकट होती थी। मास्टर साहब ने कितने ही लोगों को पुकारा पर जवाब कहीं से नहीं मिला। कुछ ही क्षणों के बाद मास्टर साहब अपने मोहल्ले के सामने विद्यमान थे। राह-भर में कितनी ही लाशों को लांघ कर मास्टर साहब इस जगह तक पहुंच पाए।

मास्टर साहब का मोहल्ला पक्के मकानों का था। इससे आग वहां बहुत फैलने नहीं पाई थी। किनारे के कुछ मकान जरूर जल गए थे और अब उनमें से गहरा नीला धुआं उठ रहा था। पर मास्टर साहब के मकान तक आग पहुंचने भी न पाई थी और न अब उधर आग के बढ़ने का खतरा ही था। मास्टर साहब लपक कर घर के सामने पहुंचे। गली भर में एक भी आदमी उन्हें दिखाई नहीं दिया। सब तरफ सन्नाटा था—मौत का गहरा सन्नाटा! कुत्ता, बिल्ली या कोई भी जीवित प्राणी गली में नहीं था। आसमान में परिन्दे तक नहीं थे। सिर्फ दूर पर जल रहे मकानों की ज्वालाएं एक भयोत्पादक आवाज उत्पन्न कर रही थीं।

क्षण-भर को मास्टर साहब ठिठक गए। जो कुछ हो बीता है, उसका आभास उन्हें मिल गया था। फिर भी यह उम्मीद तो थी कि घर के लोग शायद बच गये हों। अगर यही आशा बनी रह सकती तो।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

क्षण भर के बाद मास्टर साहब ने सहमे-सहमे से आवाज दी—"निम्मो !"

कोई जवाब नहीं आया।

मास्टर साहब घर भर को नाम ले-लेकर पुकारने लगे—"निम्मो की दादी ! बेटा सत्ती ! बेटा प्रकाश ! बेटी सत्यवती !"

कोई जवाब नहीं आया।

मास्टर साहब धीरे-धीरे घर के भीतर प्रविष्ट हुए। घर के सब दरवाजे चौपट खुले पड़े थे। अन्दर जैसे कोई झाड़ू-सा दे गया था। कहीं कोई चीज नहीं थी। गुण्डे सभी-कुछ उठा ले गये थे। भीतर जाते ही एक तरफ बैठक है। सब खाली। उसके बाद एक खुला सहन है। इस सहन के दाहिनी ओर दो कमरे हैं, जो सर्दियों में परिवार के सोने के काम आते हैं। दोनों कमरे एकदम खाली पड़े हैं। सहन की बाईं ओर एक दरवाजा है। उसमें होकर एक छोटे सहन में जाना होता है, जहां घर के जानवर बांधे जाते हैं—एक बरामदा, एक कमरा जानवरों के लिए। इस वक्त सब खाली हैं। कमरे के पिछवाड़े में जरा सी जगह खाली है, जिसके चारों ओर ऊंची दीवारें हैं। यहां मास्टर साहब की बूढ़ी घरवाली ने तुलसी के कुछ घने झाड़ बना रखे हैं और उनके पास एक चबूतरे पर वे नियमित रूप से भगवान् की पूजा करती हैं। धड़कते दिल से मास्टर साहब इस झाड़ तक आ पहुंचे।

'ओह, मेरे भगवान् ! यह सब क्या सच है। तुलसी के उस झाड़ के नीचे नन्हें सत्ती और नन्हें प्रकाश के क्षत-विक्षत निष्प्राण देह पड़े हैं मानो अनजान शिशु डरकर मां तुलसी की गोद में आसरा पाने आए हों ! उधर चबूतरे पर मां-बेटी—मास्टर साहब की जीवनसंगिनी अपनी बड़ी लड़की से चिपक कर पड़ी हैं, निष्प्राण, निःस्पन्द।

क्षण-भर के लिए मास्टर साहब को प्रतीत हुआ जैसे वे स्वयं निष्प्राण हो गए हैं; उनके हृदय की सम्पूर्ण अनुभूति सन्न होकर एकदम निष्क्रिय बन गई है। परन्तु अभी तो मास्टर साहब ने सभी कुछ नहीं देखा। उनकी लाड़ली निम्मो कहां है ?

बूढ़े मास्टर की बेहोश होती हुई चेतना खुद-ब-खुद लौट आई। वे अत्यन्त करुण-स्वर में चीख उठे—"निम्मो ! निम्मो ! ! निम्मो ! ! !"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पर कहीं से कोई जवाब नहीं मिला !

× × ×

उसके बाद घण्टों की मेहनत से मास्टर रामरतन रात के महाप्रलय के सम्बन्ध में जो कुछ जान पाये, उसका सार इतना ही था कि चांद डूबने से घण्टा भर पहले मुसलमानों की एक बहुत बड़ी संख्या ने गांव के उस भाग पर हमला कर दिया, जिसमें हिन्दू और सिक्ख रहते थे। यह हमला इतना अचानक और इतने जोर से हुआ कि उसका मुकाबला किया ही नहीं जा सका। आक्रमणकारी लोगों में बहुत बड़ी संख्या आस-पास के तथा दूर से आये मुसलमान किसानों की थी, परन्तु यह कह सकना कठिन है कि गांव के मुसलमान भी शामिल थे या नहीं। भयंकर मार-काट और लूटमार के बाद गुण्डे लोग गाड़ियों में भरकर लूटा हुआ माल अपने साथ ले गए हैं। गांव की बीसों जवान लड़कियों को भी वे अपने साथ लेते गए हैं। वे लोग ही बच पाए जो रात के वक्त घरों से भाग कर खेतों में जा छिपे या दूर भाग गए। वे सब लोग अब एक जगह इकट्ठे कर लिए गए हैं और उन्हें नये हिन्दुस्तान में भेजने का इन्तजाम किया जा रहा है। मास्टर साहब के एक पड़ोसी ने इतना ही बताया है कि जब वह उनके घर के सामने से होकर भागा जा रहा था, तो घर के भीतर से भयंकर हाहाकार सुनाई दे रहा था। निम्मो के सम्बन्ध में सभी का यह खयाल था कि गुण्डे जरूर उसे अपने साथ उठा ले गए हैं।

बूढ़े मास्टर की परेशानी की सीमा न रही। जन्म भर के उस अत्यन्त ईश्वर-परायण वृद्ध की अन्तरात्मा ने अपने उस अज्ञात आराध्य देव से पूछा—"मेरे किस अपराध की सजा इस छोटी-सी मासूम-सी बच्ची को मिली है, ओ मेरे देवता !"

अपनी जीवन-संगिनी, बड़ी विधवा पुत्री और दोनों पोतों को एक साथ खोकर बूढ़े मास्टर के लिए जिन्दगी में क्या दिलचस्पी बाकी रह सकती थी। अच्छा होता कि वे भी साथ ही मर जाते। पर मास्टर साहब अब यह बात सोच भी नहीं सकते थे। उनकी लाड़ली पोती निम्मो जीवित है और वह गुण्डों के हाथ में है।

अपना जीवन-ध्येय चुनने में मास्टर साहब को सोचने की आवश्यकता

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नहीं पड़ी। वह तो जैसे आकाश पर लिखा हुआ-सा उनके सामने आ गया। बूढ़े मास्टर ने निश्चय किया कि वे जिस किसी तरह निम्मो को तलाश करेंगे, किसी-न-किसी तरह उसके पास पहुंच जायेंगे, और····स्पष्ट था कि बूढ़ा उसे बचा नहीं सकेगा। तब ? निम्मो के पास पहुंच कर बूढ़ा दादा अपने हाथों अपनी पोती की हत्या करेगा और उसके बाद आत्महत्या कर लेगा।

सांझ तक गांव के भले मुसलमानों की मेहनत से वे सब हिन्दू और सिक्ख एक धर्मशाला में एकत्र कर दिये गये, जो प्रभात के महाप्रलय से बाकी बच रहे थे। थाने के दो-चार सिपाही भी उनकी देखभाल के लिए आ पहुंचे और उन्हें जिले की ओर ले जाने का प्रबन्ध किया जाने लगा। परन्तु मास्टर रामरतन इन लोगों में नहीं थे। न जाने वे किस वक्त चुपचाप गांव से खिसक गए।

× × ×

गांव छोड़ने के तीन दिनों के भीतर ही मास्टर रामरतन का जैसे कायाकल्प हो गया। मुंह की झुर्रियां और भी गहरी हो गईं, आंखें एक तरह से गड्ढे में चली गईं और उनके नीचे कालिमा-सी पुत गई। ये तीन डरावने दिन उनकी ६५ साल की जिन्दगी पर जैसे पूरी तरह छा गए। मास्टर साहब का चेहरा इतना शोकमग्न और इतना गम्भीर दिखाई देने लगा, जैसे वह अपने सारे जीवन में न कभी हंसे हों और न कभी मुस्कराए ही हों।

किसी अपरिचित के लिए यह पहचान सकना अब आसान नहीं था कि मास्टर रामरतन हिन्दू हैं या मुसलमान। बेतरतीबी से बढ़े हुए और बेपरवाही से बिखरे हुए उनके धूलि-धूसरित बालों ने उनकी आकृति पर फ़कीरी की छाया डाल दी थी—एक फकीर जो न हिन्दू होता है और न मुसलमान। वह फकीर बन ही तब सकता है जब वह इस दुई को, इस भेद-भाव को, एकदम भूल जाए।

आस-पास की कितनी ही बस्तियों और गांवों की खाक छानते-छानते मास्टर रामरतन को यह मालूम हो गया कि उनके गांव पर आक्रमण करने वालों का मुखिया एक पूरे गांव का जमींदार गुलाम रसूल था और यह भी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कि वह कितनी ही हिन्दू लड़कियों को अपने साथ ले गया है।

तीन दिनों के बाद चौथे दिन के प्रभात में राह की एक पगडण्डी पर चलते-चलते सहसा बूढ़े मास्टर को अनुभूति हुई कि वे अपने लक्ष्य के बहुत निकट आ पहुंचे हैं। इस अनुभूति के साथ-ही-साथ उनका हाथ जैसे स्वयमेव भीतर की जेब तक पहुंच गया, जहां एक चाकू सम्भालकर रखा गया था। बूढ़े मास्टर ने चारों ओर एक खोजती निगाह डाली और जब दूर तक उन्हें और कोई मानव-आकृति दिखाई नहीं दी, तो कांपते हाथों से उन्होंने वह चाकू जेब से बाहर निकाल लिया। चलते-चलते बाएं हाथ में चाकू पकड़कर दाहिने हाथ से उसे खोला और बिना रुके ही दाहिने हाथ की तर्जनी उंगली से उसकी धार की परीक्षा की। बूढ़े का हाथ बुरी तरह से कांप रहा था। इससे उंगली की मोटी चमड़ी जरा सी कट गई और उस पर खून की हल्की रेखा चमक आई। चार दिनों में पहली बार मास्टर को उत्साह की अनुभूति हुई। एक अजीब तरह की उत्तेजना उनके थके हुए मन पर छा गई। हां, मैं अपना काम बखूबी कर सकूंगा। इस तेज चाकू से हत्या और उसके बाद आत्महत्या! चाकू बन्द करके उन्होंने जेब में डाल लिया और डगमगाते पैरों की गति स्वयमेव तेज हो गई।

गुलाम रसूल का घर तलाश करने में मास्टर साहब को देर नहीं लगी। गांव में कुल मिलाकर २५–३० मकान थे और उनमें सबसे बड़ा और सबसे ऊंचा मकान जमींदार का था। उन्होंने मकान पर दस्तक दी। क्षण भर में मकान के सहन का दरवाजा खुल गया और एक बच्चे ने आकर पूछा—"क्या चाहिए?"

मास्टर साहब सहसा चौंक गए। बच्चे की उम्र उनके चार साल के सत्ती से अधिक नहीं थी। तो अभी तक इस दुनिया में मासूम बच्चे मौजूद हैं। इन महान् हत्यारे के घर उनका स्वागत एक बच्चा करेगा, इसकी आशा उन्हें कदापि नहीं थी। मास्टर साहब के झिझक भरे मौन पर वह बच्चा चकित होने वाला ही था कि उन्होंने कहा—"मियां गुलाम रसूल घर पर हैं?"

"कौन, अब्बा?

"हां, तुम्हारे अब्बा।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इसी वक्त भीतर से एक नारी-कण्ठ सुनाई दिया—

"कौन आया है, बेटा हमीद ?"

बच्चे ने जवाब दिया—"कोई फकीर है, अम्मी ! अब्बा को पूछता है।"

बड़े दरवाजे के दाहिनी ओर घर की बैठक थी। क्षण-भर बाद बैठक का दरवाजा खुल गया और बड़ी उम्र के अन्य लड़के ने मास्टर साहब से भीतर आने को कहा। बैठक में कुछ मोढ़े रखे थे। एक तरफ एक पलंग पड़ा हुआ था। मास्टर साहब चुपचाप एक मोढ़े पर जा बैठे।

वह लड़का बड़ी हैरानी से मास्टर साहब की ओर देख रहा था। उनके बैठ जाने पर उसने पूछा—"चाचा से क्या कह दूं ? वे साथ के मकान में गए हैं। मैं अभी जाकर उन्हें बुला लाता हूं।"

मास्टर साहब इस प्रश्न के लिए तैयार नहीं थे। फिर भी उनकी विचार-शक्ति ने उन्हें धोखा नहीं दिया। मास्टर साहब आज सुबह नूरपुर से इस गांव की ओर चले थे। उन्होंने कह दिया—"चाचा से कहना, नूरपुर से पैगाम आया है।"

लड़का चला गया और मास्टर साहब को जैसे जरा सोच सकने की फुरसत मिली। यहां तक तो सब ठीक है। अब आगे क्या होगा ? गुलाम रसूल अभी आता होगा। परन्तु वह अपनी निम्मो को उससे कैसे मांग सकेंगे ? कोई बहाना तलाश करने से शायद काम बन जाए। यह तो साफ ही है कि सब लोग उन्हें मुसलमान समझने लगे हैं। क्यों न वह इसी बात का फायदा उठाएं। वह कह सकते हैं कि नूरपुर का जमींदार कुछ लड़कियां चाहता है और वह उनके लिए अच्छी कीमत भी देने को तैयार है। इसी बहाने से वह सब लड़कियों को देखने की इच्छा प्रकट कर सकते हैं। और जहां तक भेद खुल सकने का सवाल है, उन्हें उसकी चिन्ता ही क्या है। आखिर वे तो अपनी जान देने ही यहां आए हैं। अगर उनकी चाल सफल हो गई, तो वे गुलाम रसूल पर तेज चाकू से हमला तो कर ही सकते हैं। जो-कुछ हो जाए, उतना ही सही। निकट भविष्य में उन्हें क्या करना होगा इसका निश्चय उन्होंने अनायास ही कर लिया।

और यह निश्चय कर लेने के साथ-ही-साथ उन्हें ध्यान आया कि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उनका अन्त समय सिर पर है। कुछ ही क्षणों के भीतर वह अपने परिवार से जा मिलेगा, अपने भगवान् के चरणों में जा पहुंचेगा। मास्टर साहब मन-ही-मन राम-नाम का जाप करने लगे।

और सहसा एक अत्यन्त अप्रत्याशित घटना घटित हो गई। जो छोटा बच्चा पहले-पहल मास्टर साहब का स्वागत करने दरवाजे पर उपस्थित हुआ था, उसी हमीद का हाथ पकड़ कर सहसा निम्मो बैठक के दरवाजे पर आ उपस्थित हुई। बूढ़ा मास्टर रामरतन लाल सहसा चीख उठा—"निम्मो!"

दरवाजे पर ही निम्मो चिल्लाई—"दादा!" और उसी क्षण बूढ़े रामरतन ने अपनी १६ वर्ष की पोती को गोद में उठा लिया। न जाने इतनी शक्ति बूढ़े मास्टर में कहां से आ गई। भावों का पहला तूफान निकल जाने के बाद ही मास्टर को यह समझ में नहीं आया कि वे इस हालत में क्या करें। जेब में तेज चाकू की उपस्थिति का ज्ञान उन्हें अब भी था, परन्तु जैसे वह चाहते हुए भी चाकू निकाल नहीं पाए। बूढ़े के आश्चर्य की सीमा न रही, जब उन्होंने पाया कि जैसे बच्चा हमीद निम्मो का साथ ही नहीं छोड़ना चाहता। मास्टर साहब के प्रेम का यह तूफान देखकर वह सहम-सा गया है और तब भी उसका दाहिना हाथ निम्मो के बाएं हाथ को पकड़े हुए है।

मास्टर साहब अभी तक सकते-की-सी हालत में थे कि सहसा गली में शोर मच गया—"काफिर, काफिर!" मास्टर साहब अभी तक अपनी जेब से चाकू निकाल तक नहीं पाये थे कि दो जवान मुसलमानों ने उन्हें जकड़ कर पकड़ लिया। घर की एक बूढ़ी औरत ने घर में काफिर की मौजूदगी की सूचना बहुत शीघ्र मुहल्ले भर को दे दी थी।

और उसी वक्त गालियां बकते हुए गुलाम रसूल ने अपनी बैठक में प्रवेश किया। पूरी तरह सम्भव था कि अपने नए शिकार को देखते ही गुलाम रसूल उसे मारना-पीटना शुरू कर देता और इसी बात की कल्पना भी सभी लोगों को थी। परन्तु कमरे में मौजूद सभी लोगों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब बूढ़े मास्टर पर निगाह पड़ते ही गुलाम रसूल अचम्भे में भरकर चिल्ला उठा—"ओ मास्टर साहब!"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जिन दो नौजवानों ने मास्टर साहब को पकड़ रखा था उनकी जकड़ एकाएक ढीली पड़ गई। गुलाम रसूल क्षण-भर के अन्तर से फिर चिल्लाया —"ओ, मास्टर साहब! आप यहां कैसे?"

और बूढ़ा मास्टर, जो इस अप्रत्याशित घटना-चक्र के प्रवाह में एकदम मूक और एकदम संज्ञाहीन सा बन गया था, सहसा फफककर रो उठा। दोनों जवानों ने मास्टर को अपनी पकड़ से मुक्त कर दिया और निम्मो अपने दादा से जा चिपकी।

गुलाम रसूल ने बूढ़े मास्टर को सान्त्वना देने का प्रयत्न किया। उसने कहा—"मास्टर साहब, बचपन में जब हम रोया करते थे, तो आप हमको चुप कराया करते थे, और आज···" कहते-कहते सहसा गुलाम रसूल चुप हो गया। न जाने किस शक्ति ने उसे यह अनुभूति प्रदान कर दी कि अब उसे यह सब कहने का अधिकार नहीं रहा।

बात बदलने की गरज से गुलाम रसूल ने पूछा—"यह लड़की आपको क्या लगती है, मास्टर साहब?"

बूढ़े मास्टर ने सिसकते हुए कहा—"यह मेरी पोती है।"

गुलाम रसूल ने कहा—"तभी!" और वह चुप हो रहा।

बूढ़ा मास्टर निम्मो को छाती से लगाकर अब भी धीरे-धीरे सिसक रहा था। उसने कोई सवाल नहीं किया। क्षण-भर बाद गुलाम रसूल ने स्वयं ही कहा—"शायद तभी चार ही दिनों में हमीद इसे अपनी सगी बहन समझने लगा है।" और तब आसमान की ओर ताककर उसने कहा—"खुदा का शुक्र है।"

मानवीय सहानुभूति का हल्का-सा आसरा पाकर बूढ़े मास्टर के हृदय की सम्पूर्ण व्यथा आंखों की राह बह चली, जैसे गरमी पाकर बरफ पिघलती है।

कुछ क्षणों तक गुलाम रसूल चुपचाप मास्टर साहब की ओर देखता रहा और उसके बाद धीरे-धीरे आगे बढ़कर उसने बूढ़े मास्टर को अपनी छाती से लगा लिया। मास्टर साहब ने कोई प्रतिरोध नहीं किया। गुलाम रसूल ने बहुत धीमे शब्दों में कहा—"धीरज से काम लो मास्टर साहब! अब आपको कोई भय नहीं है। निम्मो के साथ मेरी हिफाजत में, आप चाहे जहां चले जा सकेंगे। अब कोई आपका बाल भी बांका नहीं कर सकेगा।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्रीमती महादेवी वर्मा

(सन् १९०७ ई०)

श्रीमती महादेवी वर्मा का जन्म एक ऐसे सम्भ्रांत और सुशिक्षित परिवार में हुआ, जो परम आस्तिक और भक्त था। उनके पिता श्री गोविन्दप्रसाद वर्मा भागलपुर के एक हाईस्कूल में हैडमास्टर थे; उनकी माता श्रीमती हेमरानी देवी परमभक्त, आस्थामयी और विदुषी थीं। उनके नाना ब्रजभाषा के एक विज्ञ कवि थे। तुलसी, सूर तथा मीरा की बहुतेरी रचनाएं उन्होंने बाल्यावस्था में ही अपनी माता से पढ़ ली थीं। मिडिल से लेकर एम० ए० तक की सभी परीक्षाएं उन्होंने बड़ी कुशलता से उत्तीर्ण कीं। हाईस्कूल की परीक्षा में आप संयुक्त प्रान्त में सर्वप्रथम आयी थीं। बी० ए० में आपने अन्य विषयों के साथ-साथ दर्शन-शास्त्र लिया था। एम० ए० आपने संस्कृत में किया। प्रारम्भ से ही आप प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्रधानाध्यापिका हैं। अनेक वर्षों तक आप "चांद" की सम्पादिका रह चुकी हैं। पांच वर्ष तक आप उत्तरप्रदेशीय विधान परिषद् की सदस्या रहीं।

आपका व्यक्तित्व बड़ा प्रभावशाली, जीवन सादा, विचार उच्च और साहित्यिक कृतित्व युगव्यापी है। जीवन में चाहे कितनी पीड़ा रही हो, पर वार्तालाप में आप सदा प्रसन्न दिखलायी देंगी। कविता में चाहे जितनी वेदना व्यक्त होती हो, पर भाषण देते क्षण आपकी वाग्धारा में ओज और विवेक, भावना और ज्ञान की ही निर्झरिणी प्रवहमान मिलेगी। दीन-हीन दारिद्र्यग्रस्त, अपठित और भोली-भाली ग्रामीण नारी के प्रति आपमें करुणा और सहानुभूति का एक अजस्र स्रोत सदा विद्यमान रहता है। जैसे कविता के क्षेत्र में युग-निर्मात्री होने का श्रेय आपको प्राप्त है, वैसे गद्य-लेखन में भी आप अपनी एक विशिष्ट शैली के लिए प्रसिद्ध हैं। आपकी दार्शनिक विचार-भूमि इतनी पुष्ट, कविताएं इतनी भावमयी और रेखाचित्रात्मक कथाएं ऐसी प्रभावशाली

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हैं कि विचारशील पाठक विस्मय और तृप्ति के आनन्दातिरेक से स्तब्ध हो उठते हैं। तिस पर आपको चित्रकला में भी विशेष रुचि और प्रवीणता प्राप्त है। संगीतकला में भी आप विशिष्ट अनुराग रखती हैं। इतने अधिक गुणों से अलंकृत होकर आप सचमुच परम महिमामयी अपने नामानुरूप महादेवी हैं।

'लछमा' की गणना आपके सर्वोत्तम रेखाचित्रों में की जाती है। इसमें एक ऐसी ग्रामीण नारी का अध्ययन उपस्थित किया गया है, जिसका धूप से झुलसा हुआ मुख ऐसा जान पड़ता है, मानो कच्चे सेव को आग की आंच में पका लिया गया हो। बाप की आंखों में धुन्ध छा गया है, मां का हाथ टूटा हुआ है, भाई विरक्त हो गया है, और भाभी परलोकगामिनी हो गयी। लछमा रात दिन भतीजे और भतीजियों के पालन-पोषण की व्यवस्था में लीन रहती है।

कहानी-संकेत

घर, जमीन, गाय-भैंस और बैलों की दृष्टि से लछमा की ससुराल में सब कुछ था। पर उसका पति बुद्धिहीन था। परिणाम यह हुआ कि लछमा के देवर-जेठ भाई की सम्पत्ति अधिकृत कर लेने का मोह संवरण न कर सके और लछमा पर इतनी मार पड़ती थी कि वह प्रायः अचेत हो जाती। एक दिन तो उसे मृत समझकर खड्ड में डाल दिया जाता है !.....इतना सब सह कर वह अपने मैके भाग आती है और एक परम निष्ठामयी गृहसेविका का जीवन व्यतीत करती है। एक असभ्य अशिक्षित भारतीय ग्रामबाला में कितना अटूट धैर्य और संयम, कितनी सेवापरायणता और परदुःखकातरता, मैले-कुचैले घिनौने परिवेश में भी कैसी उत्कृष्ट सन्तुष्टि है, इसको महादेवी जी ने अत्यन्त प्राणमयी शैली में व्यक्त किया है। इसकी वर्णन-शैली सर्वथा नवीन, अभिव्यंजना मौलिक और हृदय-ग्राहिणी है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लछमा

धुल-धुल कर धूमिल हो जाने वाले पुराने काले लहंगे को एक विचित्र प्रकार से खोंसे, फटी मटमैली ओढ़नी को कई फेंट देकर कमर से लपेटे और दाहिने हाथ में एक बड़ा-सा हंसिया संभाले लछमा, नीचे पड़ी घास-पत्तियों के ढेर पर कूदकर खिलखिला उठी। कुछ पहाड़ी और कुछ हिन्दी की खिचड़ी में उसने कहा, "हमारे लिए क्या डरते हो! हम क्या तुम्हारे जैसे आदमी हैं? हम तो हैं जानवर.....जंगली जानवर! देखो हमारे हाथ-पांव! देखो हमारे काम!"

मुक्त हंसी से भरी यह पहाड़ी युवती न जाने क्यों मुझे इतनी भली लगती है।

धूप से झुलसा हुआ मुख ऐसे जान पड़ता था जैसे किसी ने कच्चे सेब को आग की आंच पर पका लिया हो। सूखी-सूखी पलकों में तरल-तरल आंखें ऐसी लगती हैं मानों नीचे आंसुओं के अथाह जल में तैर रही हों और ऊपर हंसी की धूप से सूख गई हों।

शीत सहते-सहते ओठों पर फैली नीलिमा, सम दांतों की सफेदी से और स्पष्ट हो जाती है। रात-दिन कठिन पत्थरों पर दौड़ते-दौड़ते पैरों में, और घास काटते-काटते और लकड़ी तोड़ते-तोड़ते हाथों में जो कठिनता आ गयी है, उसे मिट्टी और गोबर की आर्द्रता ही कुछ कोमल कर देती है।

एक ऊंचे टीले पर लछमा का पहाड़ के हृदय पर पड़े छाले-जैसा छोटा घास-फूस का घर है।

बाप की आंखें खराब हैं, मां का हाथ टूट गया है और भतीजी-भतीजे की माता परलोकवासिनी और पिता विरक्त हो चुका है। सारांश यह कि लछमा के अतिरिक्त और कोई व्यक्ति इतना स्वस्थ नहीं जो इन प्राणियों की जीविका की चिन्ता कर सके। और इस

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

निर्जन में लछमा कौन-सा काम करके इतने व्यक्तियों को जीवित रखे यह समस्या कभी हल न हो पाती। अच्छे दिनों की स्मृति के समान एक भैंस है। लछमा उसके लिए घास और पत्तियां लाती है। दूध दुहती, दही जमाती और मट्ठा बिलोती है। गर्मियों में झोंपड़े के आस-पास कुछ आलू भी बो लेती है। पर इससे अन्न का अभाव तो दूर नहीं होता, वस्त्र की समस्या तो नहीं सुलझती।

लछमा की जीवन-गाथा उसके आंसुओं में भीग-भीगकर अब इतनी भारी हो गई है कि कोई अथक कथावाचक और अचल श्रोता भी उसका भार वहन करने को प्रस्तुत नहीं।

सभ्यता के शेष चिन्हों से साठ मील दूर स्थित एक गांव में लछमा का विवाह हुआ था। उसकी ससुराल में बहुत जमीन थी, बहुत खेती होती थी, बहुत गाय, भैंस, बैल पले थे.....सारांश यह था कि सभी कुछ बहुत था। पर कठोर भाग्य ने अपना व्यंग्य छिपाने के लिए एक स्थान निकाल ही लिया। उसका पति पागल तो नहीं कहा जा सकता, पर उसका मानसिक विकास एक बालक के विकास से अधिक नहीं हो सका। पागल लड़के की बुद्धिमती और परिश्रमी बहू को सास-ससुर चाह सकते हैं, पर देयर-जेठों के लिये तो वह एक समस्या ही हो सकती है, क्योंकि उसकी उपस्थिति में भाई की सम्पत्ति का प्रबन्ध करना भी आवश्यक हो जाता है और उसे आत्मसात् करने की इच्छा रोकना भी अनिवार्य हो उठता है।

अनेक अत्याचार सहकर भी जब लछमा ने अपना अधिकार छोड़ने की इच्छा नहीं प्रकट की तब एक बार वह इतनी अधिक पीटी गई कि बेहोश हो गयी और मृत समझकर खड्ड में छिपा दी गयी। कैसे वह होश में आयी और किस असह्य कष्ट से घसिट-घसिट कर खड्ड के पार दूसरे गांव तक पहुंच सकी, यह बताना कठिन होगा। अपने सम्बन्धियों के अत्याचार के सम्बन्ध में उसने एक शब्द भी मुंह से निकलने न दिया, क्योंकि इससे उसके विचार में 'घर की मर्जाद' चली जाती है! इसके अतिरिक्त अपने मारे-पीटे जाने की बात अभिमानिनी लछमा कैसे बताती। अचानक बहुत ऊंची शिला से गिरकर चोट खा गयी है। इस

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कल्पित कथा के असत्य में जिस साहस का परिचय मिलता था, वह पीटे जाने की क्रूर कहानी के सत्य में दुर्लभ हो जाता है।

मार्ग में तीन दिन तक कुछ खाने को न मिल सका। लछमा हंसकर कहती है—"जब बहुत भूखा हुआ तब पीली मिट्टी का एक गोला बना कर मुंह में रखा और आंख मूंदकर सोचा लड्डू खाया। बस फिर बहुत-सा पानी पी लिया और सब ठीक हो गया।" मृत्यु की वैतरणी पार करके आयी हुई लछमा को देखकर जब नैहर वालों ने उसकी ससुराल वालों को दण्ड देना चाहा तब लछमा के तीव्र विरोध ने ही एक महाभारत का सूत्रपात रोका।

इस अभागी स्त्री की छाया में मानो दुःख स्थायी रूप से बस गया है। उसके लौटते ही भौजाई ने एक बालिका और एक मास भर के शिशु पुत्र को उसकी गोद में रखकर चिर-काल के लिए विदा ली। टूटे शरीर और फूटे भाग्य के साथ लछमा को जो पूर्ण और स्वस्थ हृदय मिला है उसी को लेकर उसने यह मधुर-कटु कर्त्तव्य-भार संभाला, पर वह बेचारी सन्तान-पालन क्या जाने! न तो आस-पास किसी छोटे बालक की माता ही मिल सकी और न वह शिशु कटोरे से दूध पीना ही सीख सका। तब लछमा की बुद्धि ने नया उपाय खोज निकाला। वह अनुनय-विनय करके किसी से तेल की बोतल खाली करा लायी और उसमें कपड़े की बत्तीनुमा कुछ ढीली डाट लगाकर बच्चे को पानी मिला भैंस का दूध पिलाने लगी। ससुराल के अत्याचार से उसकी हड्डी-हड्डी ढीली हो गई है। कुछ देर बैठने से रीढ़ का दर्द व्याकुल कर देता है और खड़े रहने से घुटनों में चिलक उठती है। पर उसने बिना किसी की सहायता के रात-रात भर खड़े रहकर, दिन-दिन भर झुके रहकर अपनी भाभी की घरोहर को पाल लिया। और आज तो वह शिशु इतना बड़ा हो गया है कि पालतू पशु की तरह बुआ का मूक अनुसरण करता फिरता है।

पहली बार लछमा को देखकर मेरे मन में उसे प्रयाग लाकर पढ़ाने-लिखाने का विचार उठा था। पर मेरे प्रस्ताव के उत्तर में लछमा ने केवल अपने जीर्ण-शीर्ण घर की ओर देखकर सिर झुका लिया। उतने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्राणियों को वह किसके भरोसे छोड़ आती। उस समय आशा थी कि पत्नी-वियोग से अव्यवस्थित भाई सम्भवतः लौटकर अपना कर्त्तव्य संभाल ले। पर उस आशा के दुराशा सिद्ध होने पर भी लछमा की उजली हंसी निराशा की छाया में म्लान नहीं हुई। वह सहज-भाव से मुस्कराकर कह देती है कि जंगल में पढ़-लिखकर क्या होगा। यहां तो पेड़ पर चढ़कर लकड़ियां और पत्तियां तोड़ना आना चाहिए। जब बूढ़े मां-बाप नहीं रहेंगे और बच्चे बड़े हो चुकेंगे तब भगवान् उसे संसार में क्यों पड़ा रहने देंगे। फिर उसे अवश्य ही ऐसा जन्म मिलेगा जिसमें मेरे पास रहकर पढ़-लिख भी सके और कर्त्तव्य का पालन भी कर सके।

यदि मैं उसे पढ़ाना चाहूं तो कम-से-कम दूसरे जन्म तक प्रतीक्षा करूं। इस विचित्र कथन में यदि कर्त्तव्य के प्रति इतनी सहज निष्ठा और जीवन के प्रति इतना सरल विश्वास न होता तो पगली लछमा पर हंसने को जी चाहता।

समता के धरातल पर सुख-दुःख का मुक्त आदान-प्रदान यदि मित्रता की परिभाषा मानी जावे तो मेरे पास मित्र का अभाव है।

अपने आनन्द के प्रकाशन के लिए मेरे निकट कला ही नहीं पशु-पक्षी, पेड़-पौधे भी बहुत महत्त्व रखते हैं, क्योंकि उन पर भी अपनी प्रसन्नता व्यक्त कर मुझे पूर्ण सन्तोष हो जाता है। रहा दुःख का प्रकटीकरण—सो उसको लेश-मात्र भी, भार बनाकर किसी को देना मुझे अच्छा नहीं लगता।

दूसरे के सुख में एक प्रकार की निश्चिन्तता का अनुभव करके मैं दूर रह जाती हूं और दुःखग्रस्त से मेरे सम्बन्ध का आधार वात्सल्य ही रहता है।

पर कंटीली डालियों से छिदे हाथों और पैने पत्थरों से क्षत-विक्षत पैरों वाली, मलिन परिहास से उज्ज्वल लछमा के प्रति मेरे मन में सम्मान-युक्त सख्यत्व की भावना ही प्रधान है। वह अपने दुःख में न इतनी अस्थिर है, न हल्की कि उसे मेरे सहारे की आवश्यकता जान पड़े। और अनेक अवसरों पर तो मैंने उसे अपने आप से बहुत गुरु और ऊंचा पाया है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लछमा के व्यवहार में भी मुझ एक ऐसी समानता का अनुभव होता है, जिसका अन्य पहाड़ी स्त्रियों में अभाव है। मेरे अपने बीच का अन्तर वह अपनी सहज ममता से भर लेती है, अतः मुझे उस तक पहुंचने के लिए कोई प्रयास नहीं करना पड़ता।

मैं अच्छे व्यंजन खा सकती हूं, यह जानकर भी वह बड़े यत्न से ऐसी वस्तुएं लाती ही रहती है जो जंगल में प्राप्य हैं। एक दिन वह छत्ते के मोमी टुकड़ों के साथ हाल का निकला हुआ शहद लेकर दौड़ी आयी और तुरन्त खा लेने के लिये अनुरोध करने लगी। मीठा मुझे वैसे ही कम रुचता है, उस पर मधु को देखते ही मुझे मधुमक्खियां, इस तरह स्मरण आने लगती हैं कि खाना कठिन हो जाता है। पर लछमा के अनुरोध की रक्षा के लिए कुछ चखना ही पड़ा।

वहां तो अनेक व्यक्ति मधुमक्खियां पालकर मधु का व्यापार करते हैं। पर लछमा न तो मधुमक्खियों को पालने के लिये काठ का बना घर खरीद सकती थी और न उसके घर की दीवारें ही ऐसी थीं जिनमें ऐसा घर बनाया जा सकता। पूछने पर पता चला कि घर की एक दीवार फट गई है। लछमा को उसकी दरार में मधुमक्खियां पालने की इच्छा हुई। पर मक्खियां वहां पहुंचें तो क्योंकर। प्रतीक्षा करते-करते थककर लछमा मधुमक्खियों को पकड़-पकड़ कर उस दरार में बैठाने लगी। कई बार उनके काटने से उसके हाथ सूज गए—कई बार वे उस दरार के संकीर्ण घर को नापसन्द कर उड़ गयीं, पर अन्त में कुछ उदार मक्खियों ने वहां बसकर बेचारी लछमा को कृतार्थ किया। उन्हीं के छत्ते का पहला मधु वह मेरे लिए लायी है।

एक बार इसी प्रकार मेरे आने के दिन सब जगह घूम-घूमकर वह मुझे विदा में देने के लिए काले अंगूरों का गुच्छा ले आयी थी। भैंस जब दूध देती है, तब कभी काठ की प्याली में दूध, कभी दोने में दही और कभी पत्ते पर मक्खन लिये लछमा दौड़ती चली आती है और गोबर-मिट्टी से गीले पैरों के द्वारा सूखे फर्श पर मटमैले चित्र-से बनाती हुई मेरी चौकी के पास पहुंचकर थोड़ा-सा खा लेने के लिए हठ-भरा अनुरोध करने लगती है। आदि से अन्त तक मेरी शिक्षा छात्रावास में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रहकर ही हुई है—बीच-बीच में घर जाने पर मां ही खिलाने-पिलाने की विशेष चिन्ता करती थीं, पर उनका चिन्ता करना नियम का अपवाद-जैसा लगता रहा है, इसी से मैं ऐसी चिन्ता की अभ्यस्त नहीं हूं। पढ़ना समाप्त करते ही मैंने अनेक विद्यार्थियों की चिन्ता करने का कर्त्तव्य स्वीकार कर लिया, अतः मुझे हठकर खिलाने वाले व्यक्तियों का अभाव ही रहा है। लछमा का हठ करना मेरे आरोपित और कल्पित बड़प्पन को दूर कर मुझे फिर बचपन की सहज और स्वाभाविक स्थिति में पहुंचा देता है।

वह अपनी ममता में सरल है। अपने लिखने-पढ़ने में बहुत व्याघात पड़ते देख एक दिन मैंने खिझलाकर लछमा से कहा, अब आने पर मैं सामने वाले पहाड़ की सुनसान चोटी पर कुटी बनाकर रहूंगी, जहां कोई न पहुंच सके।

निरन्तर सब के भोजन की चिन्ता करते-करते वह जान चुकी है कि भोजन की समस्या सहज सुलझने वाली नहीं होती और बिना उसे सुलझाये संसार का कोई काम सम्भव नहीं। निर्जन में कहीं मैं भी इसी समस्या में उलझकर न रह जाऊं, यही सोचकर उसने जो उपदेश-गर्भित अनुरोध किया, वह उसी के योग्य था। लछमा की इच्छा है कि जब उसकी मैंस की दो वर्ष की पड़िया चार की होकर दूध देने लगे तब मैं पहाड़ की ऊंची चोटी पर जाकर रहूं। तब एक मैंस का दूध बूढ़ा-बूढ़ी और बच्चों के काम आयेगा और दूसरी का मेरे। वह प्रतिदिन नियम से एक सेर दूध, एक सेर दही, दो-चार आलू और लकड़ी पानी आदि वहां पहुंचा आया करेगी। वह बोलेगी भी नहीं—केवल दरवाजे पर सब कुछ रखकर लौट आया करेगी। फिर जब मेरी मोटी पोथी लिखी जा चुके और मैं अकेले रहते-रहते ऊब जाऊं तो 'लछमा, लछमा' पुकारते ही वह सौ काम छोड़कर वहां जा पहुंचेगी और सब सामान, यहां तक कि कुटी का छप्पर भी ढोकर नीचे ले आवेगी। इस महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव के अन्त में जब लछमा बड़ी विनीत गम्भीरता से मेरे मुख की ओर देखने लगी तब मैं विस्मय से बोल ही न सकी। एकान्त और निर्जन सहज प्राप्य हैं, मोटे-मोटे पोथे लिख लेना भी कठिन नहीं, पर लछमा जैसा अकारण

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ममतालु सहायक दुर्लभ ही रहेगा।

लछमा का यह कथन कि उसके पास भाग्य की कमी है समझ की नहीं, बहुत कुछ सत्य है।

एक बार मेरा हिमालय का चित्र बनाना देखते-देखते वह बोल उठी, "सामान मिलता तो मैं ठीक-ठीक बर्फान उतार देती।" मैंने उपहास के भाव से प्रश्न किया, "क्या-क्या चाहिए?" लछमा ने कुछ विचित्र भाव-भंगी से जो उत्तर दिया, उसका अर्थ था कि उसे एक बड़ा-सा नीला कागज चाहिए और सफेद और हरा रंग। फिर वह एक बहुत ऊंची चोटी पर किसी समतल चट्टान के ऊपर अपना नीला कागज बिछाकर दिन भर बैठेगी और कहीं दीवार की तरह खड़े, कहीं छप्पर की तरह फैले और कहीं मन्दिर के समान कलशदार हिमालय को उतारेगी। नीला कागज आकाश रहेगा, सफेद से बर्फ बनेगी और हरे से देवदार के पेड़। छोटी लछमा की बुद्धि का इतना विशाल परिचय पाकर चकित होना स्वाभाविक ही था। मुझे सफेद कागज पर प्रयास से नीला आकाश बनाते देख उसने नीले कागज की बात सोच ली होगी।

पूछने पर पता चला कि बिना सिखाये ही लछमा को फूल-पत्ती, बेल-बूटे बनाने की इतनी चाह है कि वह अपनी ही नहीं पड़ोस के घरों की दीवारों को भी गेरू और चावल से गोद चुकी है। उसकी चित्र-रचना में चाहे अर्थ कुछ भी न रहे पर बनाने वाली उंगलियों का अपटु परिश्रम और साधन-हीनता तो प्रत्यक्ष हो ही जाती है।

इसी प्रकार देखते-देखते वह कुछ-कुछ बुनना भी जान गई है, पर ऊन और सलाइयों के अभाव में बूढ़े बाप के लिए स्वेटर बुनने की इच्छा साकार न हो पायी। दूसरों से उसकी निराशा का कारण जान कर मैंने–उसे वे वस्तुएं मंगवा अवश्य दीं, पर यदि सर्दी में पिता की रक्षा का प्रश्न न होता तो वह इन सब को छोड़कर भाग खड़ी होती, इसमें सन्देह नहीं। मुझ पर उसका स्नेह कम नहीं है, पर उस स्नेह को साधन बनाकर छोटे-छोटे स्वार्थ की सिद्धि भी उसे अभीष्ट नहीं रही।

साधारणतः असंख्य असुविधाएं और विविध अभाव पहाड़ी जीवन में स्वार्थ भावना को बहुत स्थूल और स्पष्ट रूप दे देते हैं, पर लछमा के

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जीवन को मैंने इसका अपवाद ही पाया।

मुझे उसकी स्वाभाविक हंसी के पीछे आंसुओं को खोजना पड़ता है; और उन आंसुओं के नीचे छिपे कारणों का पता लगाना पड़ता है। फिर अन्त में "हम तो ऐसे ही जंगली हैं, हमें क्या चाहिए", आदि के द्वारा लछमा मेरा सारा परिश्रम निष्फल किए बिना नहीं रहती।

हृदय में इतनी स्वच्छ लछमा को बाहर से मलिन ही रहना पड़ता है। कभी-कभी तो अपनी मलिनता पर आप ही झुंझलाकर वह कह उठती है, "मैं तो इतनी मैली हूं। मुझे भीतर मत आने दो, बाहर ही रोक दिया करो। देखो तो, सारा-का-सारा घर कैसा लगने लगता है।" उसके इस प्रकार के उद्‌गार स्वयं अपने ही प्रति हुआ करते हैं, क्योंकि उनके उपरान्त वह मुझे सफाई देने लगती है—"पांव तो सवेरे ही मल-मलकर धोये थे पर आधे रास्ते में भैंस को घास डालने लौट जाना पड़ा। लहंगा तो कल पत्थर पर मोगरी से पीट-पीटकर छांटा था पर बच्चे ने मिट्टी-भरे हाथ पोंछ दिये। ओढ़नी तो परसों झरने में धोकर सुखायी थी, पर घास पर बांधने की रस्सी बीच में टट गयी और इसी से बांधकर लाना पड़ा।"

न जाने किस युग में लछमा के पास एक काठ की कंघी थी। फिर जब से वह खोयी तब से झरने में धोकर बहुत उलझे बालों को नोच कर फेंक देना ही उसका प्रसाधन हो गया है। मेरे यहां पुराने काले कंघे के उपहार पा लेना उसके लिए एक असम्भावित घटना हो गयी। उस कंघे को दरांती के साथ कमर में खोंस वह पहाड़ के किस-किस कोने में किस-किस झरने की सहायता से शृंगार नहीं करती फिरी, यह बताना कठिन है, पर उसकी विचित्र-केशरचना-जनित प्रसन्नता देखकर आंसू आये बिना नहीं रहते।

शृंगार के असंख्य अभूतपूर्व साधनों से भरी बीसवीं शताब्दी में भी जिस स्त्री के लिए इतनी तुच्छ वस्तु दुर्लभ है उसके दुर्भाग्य को कौन-सा नाम दिया जावे।

एक बार अन्य स्त्रियों से सुना कि लछमा न-जाने क्या धूप-दीप करके उनकी सन्तान का अमंगल मनाती रहती है। पूछने पर पता चला

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कि वह सन्तान का तो नहीं, पर कुछ आंखों का अमंगल अवश्य मनाती है। उसके घर न जाने कब की पुरानी और कीडों की खायी हुई दुर्गा की तस्वीर है। सवेरे सांझ उसके सामने कुछ अंगारे रखकर और उन पर कुछ सूखी, पर सुगन्धित, पत्तियों की धूप डालकर वह कह लेती है कि जो उस पर बुरी दृष्टि डाले उसकी आंखें जलकर क्षार हो जावें।

दूसरों की आंखों का अमंगल वाहने से किसी की पवित्रता की रक्षा नहीं होती ; क्योंकि वास्तविक पवित्रता का प्रमाण तो यही है कि मलिन-से-मलिन दृष्टि भी उसका स्पर्श कर पवित्र हो जावे, इस सत्य को समझना सहज नहीं था। पर लछमा को मेरे कथन के सूक्ष्म भाव तक पहुंचने में कठिनता नहीं हुई। तब से उसके धूप-दीप में अपनी ही नहीं, सब की कल्याण-कामना रहती है।

यह पर्वत की कन्या जितनी निडर है, उतनी ही निश्चल। जिस प्रकार अपनी दरांती के साथ वह अंधेरी-से-अंधेरी रात में भी मार्ग ढूंढ लेती है, उसी प्रकार अपने निश्चय के साथ वह घोर-से-घोर विरोध में भी अटल रह सकती है।

कुछ वर्ष पूर्व लछमा के जीवित हो जाने का समाचार पाकर ससुराल के कुछ सम्बन्धी उसके अबोध पति को लेकर उसे बुलाने आये। उसने अपने बालक-बुद्धि पति से अनुरोध किया कि वह अपने भाइयों को सब कुछ सौंपकर आ जावे और उसी के पास रहे। वह स्वयं भैंस की गोठ में पड़ी रहेगी, पर पति के रहने के लिए एक लिपी-पुती स्वच्छ कोठरी का प्रबन्ध करेगी। स्वयं चाहे मलिन दुर्गन्धित घास में पड़ी रहेगी, पर उसके लिए गांव वालों से चारपाई मांग लावेगी। आप भूखी रहेगी, पर रात-दिन मजदूरी करके उसके भोजन का प्रबन्ध करेगी। लछमा के साथ उसका विवाह हुआ है, अतः उसे वह जीवन-भर न छोड़ेगी। पर, वह उसके घर नहीं जा सकती क्योंकि वहां लोग उसे मार डालेंगे; और यहां उसके माता-पिता, मतीजी भूख से अपने आप मर जायेंगे।

सम्बन्धियों ने उसके पति को वहां न छोड़ा, क्योंकि उन्हें मरकर जीवित हो जाने वाली मायाविनी बहू की सचाई पर विश्वास नहीं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लछमा के इस व्यवहार से आस-पास असन्तोष की लहर-सी फैल गई और वह अनेक प्रकार की चर्चा का आधार बनने लगी।

समाज के मनोविज्ञान का जैसा परिचय समतल में मिलता है वैसा ही पर्वत की विषम भूमि में।

एक पुरुष के प्रति अन्याय की कल्पना से ही सारा पुरुष-समाज उस स्त्री से प्रतिशोध लेने पर उतारू हो जाता है और एक स्त्री के साथ क्रूरतम अन्याय का प्रमाण पाकर भी सब स्त्रियां उसके अकारण दण्ड को अधिक भारी बनाये बिना नहीं रहतीं।

इस तरह पग-पग पर पुरुष की सहायता की याचना न करने वाली स्त्री की स्थिति कुछ विचित्र-सी है। वह जितनी ही पहुंच के बाहर होती है पुरुष उतना ही झुझलाता है और प्रायः यह झुंझलाहट मिथ्या अभियोगों के रूप में परिवर्तित हो जाती है। यह स्वाभाविक भी है, क्योंकि जो अप्राप्य है उसी को प्राप्त प्रमाणित करके हमें सन्तोष होता है; जो प्राप्त है, उसे प्राप्य प्रमाणित करने की आवश्यकता ही नहीं रहती।

पर, खड़ा हुआ व्यक्ति यदि अपने गिरने की घोषणा सुनते-सुनते खड़े होने के प्रयास को व्यर्थ समझने लगे तो आश्चर्य क्या? इसी कारण जब तक स्त्री स्वभाव से इतनी शक्तिशालिनी नहीं होती कि मिथ्या पराभव की घोषणा से विचलित न हो तब तक उसकी स्थिति अनिश्चित ही रहती है।

लछमा में मैंने अविचलित रहने की शक्ति भी देखी और बड़े-से-बड़े अपकार को क्षमा कर देने की उदारता भी। न वह दूसरों की निन्दा करके हल्की बनती है और न अपनी सफाई देकर आत्म-विश्वास की न्यूनता प्रकट करती है। उसका दर्पण-जैसा मन स्वयं ही अपनी स्वच्छता का प्रमाण है। एक बार तो जब एक सज्जन मेरे घर में बैठ कर मुझे लछमा के कल्पित दोष गिना रहे थे, तब वह दरवाजे के बाहर खड़ी होकर उन्हें छोटे बच्चों की तरह मुंह चिढ़ा रही थी।

गांव के बुरे-से-बुरे व्यक्ति की भी चर्चा चलते ही वह सरल भाव से कह देती है, "अपने आप रहेगा।" उसके स्वनिर्मित शब्द-कोष में इस

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

का अर्थ ह "रहने दो—जैसा करेगा वैसा पावेगा।"

मार्ग में आने वाले सभ्य जन चरने वाली भैंस और चराने वाली लछमा के साथ एक-सा उपेक्षा-भरा व्यवहार करते हैं तब भी वह रुष्ट नहीं होती—उलटे उनकी सफाई देने लगती है—"हम तो आदमी-जैसे नहीं। वे बहुत अच्छे हैं फिर हमसे कैसे बोलें, हम भी नहीं बोलते, तुम बहुत अच्छा नहीं करते, क्योंकि हमसे बोलते हो—पर तुम हमसे अच्छे बोलते हो इसी से हम तुमको घेरते हैं।" ऐसे टूटे-फूटे वाक्यों में लछमा का जो तात्पर्य छिपा रहता है उसे पूर्णतः समझ लेना चाहे सहज न हो, परन्तु इतना समझ में आ ही जाता है कि उसकी लघुता पर संकुचित हृदय में किसी के प्रति कोई दुर्भावना रखने का स्थान नहीं।

मेरे जाने का दिन लछमा के लिए बहुत व्यथा-भरा दिन रहता है। भैंस दुहकर वह मेरे यहां दौड़ आती है। पानी भर कर वह फिर एक चक्कर लगाने चल देती है। बच्चों को रोटी देकर वह फिर एक फेरी दे जाती है। जैसे-जैसे मेरा सामान बंधता है वैसे-वैसे मानो लछमा के जोड़-जोड़ के बन्धन शिथिल होते जाते हैं।

एक मील तक मुझे पहुंचाने आने का उसका नियम है। मील का दूसरा पत्थर आते ही जब मैं उसे लौट जाने का आदेश देती हूं, तब वह खोयी-सी खड़ी हुई बार-बार आंखें पोंछकर दृष्टि से ही कुछ देर तक, मेरा अनुसरण करती रहती है।

पहाड़ी राह तो हमारे यहां की लम्बी-चौड़ी सड़क नहीं है। चार पग चलकर ही कभी दाहिनी ओर मुड़ जाना पड़ता है, कभी बायीं ओर, कभी कोई पेड़ दृष्टि रोक लेता है, कभी कोई शिलाखण्ड। मेरी दृष्टि से ओझल हो जाने पर भी लछमा का आंसुओं से गीला कण्ठ दूर तक सुनाई देता रहता है—"संभल के जाना—जल्दी लौटना—अच्छा—अच्छा—"

इन दिनों लछमा के सामने भूखे मरने का प्रश्न नहीं रहता। सेब के बाग फलों से लदे हुए हैं। पेड़ों के नीचे गिरे कच्चे और खट्टे सेब वहीं सूख या सड़ जाते हैं, इसी से कोई उन्हें लेने से नहीं रोकता। आजकल किसी भी पेड़ के नीचे बैठकर लछमा सेर, तीन पाव खट्टे और

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

न-खाने-योग्य सेब गले के नीचे उतार लेती है और फिर दो-दो दिन तक निराहार काम में लगी रहती है।

पर धीरे-धीरे वह जाड़ा आ रहा है जब धरती के हृदय पर दुःख-भार के समान तीन-तीन फुट ऊंची बर्फ जम जायेगी, जब लोग अपने-अपने घरों में आग तापते हुए पुरानी कथाओं को नए ढंग से कहेंगे, जबकि सम्पन्न और निर्धन अन्न के भरोसे प्रकृति की तरल पर क्रूर क्रीड़ा का उपहास करेंगे, जब कुछ पशु नीचे के गर्म गांवों की ओर भेज दिये जायेंगे, और कुछ सुखायी हुई घास देकर गर्म गोठों में सुरक्षित रखे जायेंगे। और तब विकलांग बूढ़ों, असमर्थ बालकों तथा अरक्षित पशुओं को लेकर लछमा क्या करेगी ?

मुझे उसका कोई समाचार नहीं मिलता, यह सत्य भी है और नहीं भी। वह पढ़ी-लिखी होती तो पत्र लिखने की सुविधा रहती, यह सुन कर लछमा एक विचित्र भाव-भंगिमा के साथ अपनी अटपटी-सी भाषा में उत्तर देती है, "हम तो अपने-जैसी चिट्ठी लिख लेते हैं। एक टीले पर बैठकर सोचते हैं, यह लिखा, वह लिखा, यह ठीक लिखा गया, वह लिखना अच्छा नहीं हुआ। फिर जब मन में आता है कि चिट्ठी गयी तब उठकर खुशी से घास काटते हैं, लकड़ी तोड़ते हैं। क्या हमारा लिखा नहीं पहुंचता !"

कागज, कलम, स्याही और अक्षरों से शून्य तथा पोस्ट आफिस की सहायता के बिना भेजी गई चिट्ठी की बात सुनकर किसे हंसी नहीं आयेगी।

पर जब सर्दियों में मैं अचानक ही यहां के गर्म कमरे को छोड़कर उस हिम से मूर्च्छित पर्वत की ओर जाने को उद्यत हो जाती हूं, गर्मियों में सभ्य समारोह से मुखरित पर्वतीय सौन्दर्य का निरादर कर, उसे व्यथा से नीरव हिमानी के कोने में पहुंचने के लिए विकल हो उठती हूं, तब मुझे निरक्षर लछमा की चिट्ठी नहीं मिलती, यह कौन कह सकता है ?

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री भगवतीचरण वर्मा

(जन्म : सन् १९०३)

श्री भगवतीचरण वर्मा का जन्म उन्नाव जिले के शफीपुर गांव में हुआ। आपके पिता श्री देवीचरण वर्मा जी वकील थे। भगवती बाबू पांच वर्ष के ही हो पाए थे कि उनके पिता का स्वर्गवास हो गया। अतः उनका पालन-पोषण उनकी माताजी ने किया। पहले उनकी शिक्षा कानपुर में हुई। पटकापुर में उनका अपना मकान था। कानपुर से इण्टर करके वे इलाहाबाद चले गए। वहां बी० ए० करने के बाद उन्होंने एल० एल० बी० किया। कुछ दिनों तक कानपुर में वकालत करने का भी उन्होंने प्रयत्न किया, किन्तु तब तक उनका कवि-जीवन कुछ आगे बढ़ चुका था। उनकी गणना प्रतिभाशाली नवोदित कवियों में होने लगी थी। अतः इलाहाबाद में ही रहकर वे स्वतन्त्र रूप से साहित्यिक जीवन व्यतीत करने लगे।

सत्रह वर्ष की अवस्था में उनके चाचा श्री कालीचरण वर्मा का देहान्त हो गया। परिणाम यह हुआ कि वर्माजी पर ही गृहस्थी का सारा भार आ पड़ा। अभी उनका शिक्षा-काल समाप्त भी न हो पाया था, साथ में छोटे भाई साहब भी पढ़ रहे थे। दो बार उनकी पत्नियों का देहान्त हुआ। इन अवस्थाओं में कैसी-कैसी विषम परिस्थितियों से उन्हें गुजरना पड़ा, इसके विषय में उन्होंने एक बार कहा था, "दूसरा कोई होता तो दम-भर में उसका दम घुट कर रह जाता।" वे कलकत्ता में रहे। वहां से 'विचार' नामक एक उच्चकोटि का साप्ताहिक पत्र उन्होंने निकाला था, जो कई वर्ष तक सुचारु रूप से चलता रहा था। कहानी-लेखन की ओर उन्हें स्व० विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक ने प्रेरित किया। उनकी पहली कहानी 'हिन्दी-मनोरंजन' में प्रकाशित हुई। परन्तु उनका कवि-जीवन सन् १९१७ में ही प्रारम्भ हो गया था। उनकी प्रथम कविता 'रोने जाता हूं एकान्त' 'प्रताप' में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रकाशित हुई थी ।

वर्माजी बहुमुखी प्रतिभा के यशस्वी कलाकार हैं। कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास, निबन्ध तथा वक्तृत्व-कला के नाते वे एक पूर्ण प्रतिभाशाली, मेधावी और शक्तिशाली कलाकार का व्यक्तित्व रखते हैं। यों तो उनका 'चित्रलेखा' उपन्यास उनकी एक श्रेष्ठतम रचना है, किन्तु 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते', 'भूले-बिसरे चित्र' तथा 'सीमा और सामर्थ्य' उनके बड़े ही उत्कृष्ट तथा सब प्रकार से सफल उपन्यास हैं। 'भूले-बिसरे चित्र' पर तो उन्हें साहित्य एकादमी का सर्वोत्तम पुरस्कार भी मिल चुका है। यद्यपि वे गीतिकाव्य के अग्रणी कवि हैं (उनकी गणना श्रीमती महादेवी वर्मा तथा श्री बच्चन के साथ की जाती है), किन्तु सृष्टि की निर्ममता और जीवन के कटु सत्य का उद्घाटन करने के नाते वे पहले यथार्थवादी कवि कहलाने का गौरव रखते हैं।

'प्रायश्चित्त' वर्मा जी की एक चिर-प्रसिद्ध व्यंग्य-कथा है। कबरी नामक एक चतुर और नटखट बिल्ली का चित्रण इसमें ऐसे कलात्मक ढंग से किया गया है कि पाठक अंन्त में चकित-विस्मित, स्तब्ध हो उठता है। व्यंग्य-कथा-लेखक के नाते वे बड़े ही पटु एवं मर्मस्पर्शी कथाकार हैं। इस कहानी की चरम परिणति में तो उनका यह कौशल बड़े चमत्कारपूर्ण नाटकीय ढंग से प्रकट हुआ है। तब पाठक इस निष्कर्ष पर जा पहुंचता है कि इसमें तो एक भोजन-भट्ट चौबे की रूढ़िग्रस्त जीविका की शोषणवृत्ति का भण्डाफोड़ किया गया है। जब बिल्ली के अचानक मर जाने से घर का सारा वातावरण एक संकटापन्न परिस्थिति में घिर जाता है, तभी महरी आकर सूचना दे देती है कि बिल्ली तो भाग गयी। उत्कृष्ट द्विविधा और कलात्मक चरम परिणति वाली ऐसी व्यंग्यात्मक कहानियां ही हिन्दी की गौरव-वृद्धि में समर्थ हुई हैं।

कहानी-संकेत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रायश्चित्त

अगर कबरी बिल्ली घर भर में किसी से प्रेम करती थी तो रामू की बहू से ; और रामू की बहू घर भर में घृणा करती थी तो कबरी बिल्ली से। रामू की बहू दो महीना हुआ मायके से प्रथम बार ससुराल आई थी, पति की प्यारी और सास की दुलारी, चौदह वर्ष की बालिका। भंडार-घर की चाबी उसकी करधनी में लटकने लगी, नौकरों पर उसका हुक्म चलने लगा, और रामू की बहू घर में सब कुछ ; सास जी ने माला ली और पूजा-पाठ में मन लगाया।

लेकिन ठहरी चौदह वर्ष की बालिका, कभी भंडार-घर खुला है, तो कभी भंडार-घर में बैठे-बैठे सो गई। कबरी बिल्ली को मौका मिला, घी-दूध पर अब वह जुट गई। रामू की बहू हांडी में घी रखते-रखते ऊंघ गई और बचा हुआ घी कबरी के पेट में। रामू की बहू दूध ढककर मिसरानी को जिस देने गई और दूध नदारद। अगर यह बात यहीं तक रह जाती तो भी बुरा न था, कबरी रामू की बहू से कुछ ऐसा परच गई थी कि रामू की बहू के लिए खाना-पीना दुश्वार। रामू की बहू के कमरे में रबड़ी से भरी कटोरी पहुंची और जब तक रामू आए तब तक कटोरी साफ चटी हुई। बाजार से मलाई आई और जब तक रामू की बहू ने पान लगाया, मलाई गायब। रामू की बहू ने तय कर लिया कि या तो वही घर में रहेगी या कबरी बिल्ली ही। मोरचाबन्दी शुरू हो गई और दोनों सतर्क। बिल्ली फंसाने का कटघरा आया। उसमें दूध, मलाई, चूहे और भी बिल्ली को स्वादिष्ट लगने वाले विविध प्रकार के व्यंजन रखे गए, लेकिन बिल्ली ने उधर निगाह तक न डाली। इधर कबरी ने सरगर्मी दिखाई। अभी तक तो वह रामू की बहू से डरती थी, पर अब वह साथ लग गई ; लेकिन इतने फासले पर कि रामू की बहू उस पर हाथ न लगा सके।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कबरी के हौसले बढ़ जाने से रामू की बहू का घर में रहना मुश्किल हो गया। उसे मिलती थीं सास की मीठी झिड़कियां, और पतिदेव को मिलता था रूखा-सूखा भोजन।

एक दिन रामू की बहू ने रामू के लिए खीर बनाई। पिस्ता, बादाम, मखाने और तरह-तरह के मेवे दूध में औटाये गए, सोने का वर्क चिपकाया गया और खीर से भरकर कटोरा कमरे के एक ऐसे ऊंचे ताक पर रखा गया, जहां बिल्ली न पहुंच सके। रामू की बहू इसके बाद पान लगाने में लग गई।

उधर कमरे में बिल्ली आई, ताक के नीचे खड़े होकर उसने कटोरे की ओर देखा। सूंघा, माल अच्छा है, ताक की ऊंचाई अन्दाजी और देखा रामू की बहू पान लगा रही है। पान लगाकर रामू की बहू सास जी को पान देने चली गई और कबरी ने छलांग मारी, पंजा कटोरे में लगा और कटोरा झनझनाहट की आवाज के साथ फर्श पर।

आवाज रामू की बहू के कान में पहुंची, सास के सामने पान फेंक कर वह दौड़ी, क्या देखती है कि फूल का कटोरा टुकड़े-टुकड़े, खीर फर्श पर और बिल्ली डटकर उड़ा रही है। रामू की बहू को देखते ही कबरी चम्पत।

रामू की बहू पर खून सवार हो गया, न रहे बांस न बजे बांसुरी। रामू की बहू ने कबरी की हत्या पर कमर कस ली। रात भर उसे नींद न आई, किस दांव से कबरी पर वार किया जावे कि फिर जिन्दा न बचे, यही पड़े-पड़े सोचती रही। सुबह हुई और वह देखती है कि कबरी देहरी में बैठी बड़े प्रेम से उसे देख रही है।

रामू की बहू ने कुछ सोचा, इसके बाद वह मुस्कराती हुई उठी। कबरी रामू की बहू के उठते ही खिसक गई। रामू की बहू एक कटोरा दूध कमरे के दरवाजे की देहरी पर रखकर चली गई। हाथ में पाटा लेकर वह लौटी तो देखती है कि कबरी दूध पर जुटी हुई है। मौका हाथ आ गया। सारा बल लगाकर पाटा उसने बिल्ली पर पटक दिया। कबरी न हिली न डुली, न चीखी न चिल्लाई, बस एकदम उलट गई।

आवाज जो हुई तो महरी झाड़ू छोड़कर, मिसरानी रसोई छोड़कर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

और सास पूजा छोड़कर घटनास्थल पर उपस्थित हो गईं। रामू की बहू सिर झुकाए हुए अपराधिनी की भांति बातें सुन रही है।

महरी बोली—अरे राम, बिल्ली तो मर गई। मांजी, बिल्ली की हत्या बहू से हो गई, यह तो बुरा हुआ है।

मिसरानी बोली—मांजी, बिल्ली की हत्या और आदमी की हत्या बराबर है। हम तो रसोई न बनावेंगी जब तक बहू के सिर हत्या रहेगी।

सास जी बोलीं—हां, ठीक कहती हो, अब जब तक बहू के सिर से हत्या न उतर जाए, तब तक न कोई पानी पी सकता है, न कोई खाना खा सकता है। बहू, यह क्या कर डाला!

महरी ने कहा—फिर क्या हो, कहो तो पण्डित जी को बुलाय लाऊं?

सास की जान-में-जान आई—अरे हां, जल्दी दौड़ के पण्डित जी को बुला ला।

बिल्ली की हत्या की खबर बिजली की तरह पड़ोस में फैल गई। पड़ोस की औरतों का रामू के घर में तांता बंध गया! चारों तरफ से प्रश्नों की बौछार और रामू की बहू सिर झुकाए बैठी है।

पण्डित परमसुख को जब यह खबर मिली उस समय वे पूजा कर रहे थे। खबर पाते ही उठ पड़े—पण्डिताइन से मुस्कराते हुए बोले, "भोजन न बनाना। लाला घासीराम की पतोहू ने बिल्ली मार डाली। प्रायश्चित्त होगा, पकवानों पर हाथ लगेगा।"

पण्डित परमसुख चौबे छोटे-से, मोटे-से आदमी थे। लम्बाई चार फीट दस इंच और तोंद का घेरा अट्ठावन इंच। चेहरा गोल-मटोल, मूंछ बड़ी-बड़ी, रंग गोरा, चोटी कमर तक पहुंचती हुई।

कहा जाता है कि मथुरा में जब पंसेरी खुराक खाने वाले पण्डितों को ढूंढ़ा जाता था तो पण्डित परमसुखजी को इस लिस्ट में प्रथम स्थान दिया जाता था।

पण्डित परमसुख पहुंचे और कोरम पूरा हुआ। पंचायत बैठी—सास जी, मिसरानी, किसनू की मां, छुन्नू की दादी और पण्डित परमसुख!

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बाकी स्त्रियां बहू से सहानुभूति प्रकट कर रही थीं।

किसनू की मां ने कहा—पण्डित जी, बिल्ली की हत्या करने से कौन नरक मिलता है ?

पण्डित परमसुख ने पत्रा देखते हुए कहा—बिल्ली की हत्या करने भर से नरक का नाम नहीं बताया जा सकता, वह महूरत भी जब मालूम हो जब बिल्ली की हत्या हुई तब नरक का पता लग सकता है।

यही कोई सात बजे सुबह—मिसरानी जी ने कहा।

पण्डित परमसुख ने पत्रे के पन्ने उल्टे, अक्षरों पर उंगलियां चलाईं, माथे पर हाथ लगाया और सोचा, चेहरे पर धुन्धलापन आया। माथे पर बल पड़े, नाक कुछ सिकुड़ी और स्वर कुछ गम्भीर हो गया—हरे कृष्ण ! हरे कृष्ण ! बड़ा बुरा हुआ, प्रातःकाल ब्राह्म-मुहूर्त में बिल्ली की हत्या ! घोर कुम्भीपाक नरक का विधान। रामू की मां, यह तो बड़ा बुरा हुआ।

रामू की मां की आंखों में आंसू आ गए—तो फिर पण्डितजी, अब क्या होगा, आप ही बतलाएं।

पण्डित परमसुख मुस्कराये—रामू की मां ! चिन्ता की कौन-सी बात है, हम पुरोहित फिर कौन दिन के लिए हैं ? शास्त्रों में प्रायश्चित्त का विधान है सो प्रायश्चित्त से सब कुछ ठीक हो जावेगा।

रामू की मां ने कहा—पण्डितजी, इसीलिए तो आपको बुलवाया था, अब आगे बतलाओ कि क्या किया जाए ?

किया क्या जाए—यही एक सोने की बिल्ली बनाकर बहू से दान करवा दी जाए—जब तक बिल्ली न दे दी जाएगी तब तक तो घर अपवित्र रहेगा। बिल्ली दान देने के बाद इक्कीस दिन का पाठ हो जाए।

छुन्नू की दादी—हां और क्या, पण्डितजी ठीक ही तो कहते हैं ! बिल्ली अभी दान दे दी जाए और पाठ फिर हो जाए।

रामू की मां ने कहा—तो पण्डितजी कितने तोले की बिल्ली बनवाई जाए ?

पण्डित परमसुख मुस्कराये, अपनी तोंद पर हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा—बिल्ली कितने तोले की बनवाई जाए ? अरे रामू की मां, शास्त्रों में तो लिखा है कि बिल्ली के वजन-भर सोने की बिल्ली बनवाई जाए।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लेकिन अब कलियुग आ गया है, धर्म-कर्म का नाश हो गया है, श्रद्धा नहीं रही। सो रामू की मां बिल्ली के तोल भर की बिल्ली तो क्या बनेगी; क्योंकि बिल्ली बीस, इक्कीस सेर से कम की क्या होगी! हां कम-से-कम इक्कीस तोले की बिल्ली बनवा के दान करवा दो, और आगे जो अपनी-अपनी श्रद्धा।

रामू की मां न आंखें फाड़कर पण्डित परमसुख को देखा—अरे बाप रे! इक्कीस तोले सोना। पण्डितजी यह तो बहुत है, तोला भर की बिल्ली से काम न निकलेगा क्या?

पण्डित परमसुख हंस पड़े—रामू की मां! एक तोला सोने की बिल्ली! अरे रुपए का लोभ बहू से बढ़ गया? बहू के सिर बड़ा पाप है—इसमें इतना लोभ ठीक नहीं!

मोल-तोल शुरू हुआ और मामला ग्यारह तोले की बिल्ली पर ठीक हो गया।

इसके बाद पूजा-पाठ की बात आई। पण्डित परमसुख ने कहा—उसमें क्या मुश्किल है, हम लोग किस दिन के लिये हैं। रामू की मां, मैं पाठ कर दिया करूंगा, पूजा की सामग्री आप हमारे घर भिजवा देना।

पूजा का सामान कितना लगेगा?

"अरे, कम-से-कम सामान में हम पूजा कर देंगे। दान के लिए करीब दस मन गेहूं, एक मन चावल, एक मन दाल, मन-भर तिल, पांच मन जौ, और पांच मन चना, चार पंसेरी घी, और मन भर नमक भी लगेगा। बस इतने से काम चल जाएगा।"

"अरे! बाप रे! इतना सामान, पण्डितजी, इसमें तो सौ-डेढ़-सौ रुपया खर्च हो जाएगा"—रामू की मां ने रूंआसी होकर कहा।

"फिर इससे कम में तो काम नहीं चलेगा। बिल्ली की हत्या का कितना बड़ा पाप है, रामू की मां! खर्च को देखते वक्त पहले बहू के पाप को तो देख लो! यह तो प्रायश्चित्त है, कोई हंसी-खेल थोड़े ही है और जैसी जिसकी मर्यादा, प्रायश्चित्त में उसे वैसा ही खर्च भी करना पड़ता है। आप लोग कोई ऐसे-वैसे थोड़े हैं, अरे सौ-डेढ़-सौ रुपया आप लोगों के हाथ का मैल है।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पण्डित परमसुख की बात से पंच प्रभावित हुए, किसनू की मां ने कहा—पण्डितजी ठीक तो कहते हैं, बिल्ली की हत्या कोई ऐसा-वैसा पाप तो है नहीं। बड़े पाप के लिए बड़ा खर्च भी चाहिए।

छुन्नू की दादी ने कहा—और नहीं तो क्या, दान-पुन्न से ही पाप कटते हैं। दान-पुन्न में किफायत ठीक नहीं।

मिसरानी ने कहा—और फिर मांजी, आप लोग बड़े आदमी ठहरे। इतना खर्च कौन आप लोगों को अखरेगा।

रामू की मां ने अपने चारों ओर देखा—सभी पंच पण्डितजी के साथ। पण्डित परमसुखजी मुस्करा रहे थे। उन्होंने कहा—रामू की मां, एक तरफ तो बहू के लिए कुम्भीपाक नरक है और दूसरी तरफ तुम्हारे जिम्मे थोड़ा-सा खर्च है। सो उससे मुंह न मोड़ो।

एक ठण्डी सांस लेते हुए रामू की मां ने कहा—अब तो जो नाच नचाओगे, नाचना ही पड़ेगा।

पण्डित परमसुखजी जरा कुछ बिगड़कर बोले—रामू की मां! यह तो खुशी की बात है, अगर तुम्हें यह अखरता है तो न करो—मैं चला। इतना कहकर पण्डितजी ने पोथी-पत्रा बटोरा।

"अरे पण्डितजी, रामू की मां को कुछ नहीं अखरता—बेचारी को कितना दुःख है—बिगड़ो न"—मिसरानी, छुन्नू की दादी और किसनू की मां ने एक स्वर में कहा।

रामू की मां ने पण्डितजी के पैर पकड़े और अब पण्डितजी ने जमकर आसन जमाया।

"इक्कीस दिन के पाठ के इक्कीस रुपए और इक्कीस दिन तक दोनों वक्त पांच-पांच ब्राह्मणों को भोजन करवाना पड़ेगा"—कुछ रुककर पण्डित परमसुख ने कहा—"सो इसकी चिन्ता न करो। मैं अकेला दोनों समय भोजन कर लूंगा और मेरे अकेले भोजन करने से पांच ब्राह्मणों के भोजन का फल मिल जाएगा।"

"यह तो पण्डितजी ठीक कहते हैं, पण्डितजी की तोंद तो देखो"—मिसरानी ने मुस्कराते हुए पण्डितजी पर व्यंग्य किया।

"अच्छा तो फिर प्रायश्चित्त का प्रबन्ध करवाओ। रामू की मां,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ग्यारह तोले सोना निकालो, मैं उसकी बिल्ली बनवा लाऊं—दो घंटे में बनवाकर मैं लौटूंगा, तब तक सब पूजा का प्रबन्ध कर रखो—और देखो, पूजा के लिए....."

पण्डितजी की बात खतम भी न हुई थी कि महरी हांफती हुई कमरे में घुस आई। सब लोग चौंक उठे। रामू की मां ने घबरा कर कहा—अरी क्या हुआ री !

महरी ने लड़खड़ाते स्वर में कहा—मांजी, बिल्ली तो उठकर भाग गई।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री भगवतीप्रसाद वाजपेयी

(जन्म : १८९९ ई०, मंगलपुर—कानपुर)

"चरैवेति-चरैवेति"—इस एक ही उक्ति में हम हिन्दी के लब्ध-प्रतिष्ठ कथाकार श्री भगवतीप्रसाद वाजपेयी के संपूर्ण व्यक्तित्व को उसके पूर्ण सौन्दर्य के साथ संजो सकते हैं। जीवन के ६४ वसंतों का रस-पराग अपनी अनुभूतियों में समेटकर भी भारती का यह तपःपूत विश्रान्त नहीं हुआ; चल रहा है, बढ़ रहा है, नवीन मान्यताओं और मूल्यों का अंकन करते हुए चल रहा है। १७ वर्ष की लघु-वय से वाजपेयी जी ने हिन्दी वाङ्मय के विस्तृत प्रांगण में नित्य नवल सुगन्ध वाले पुष्पों की वाटिका का निर्माण और सिंचन किया और ऐसे कुसुमों को विकसाया, जिनकी सुरभि भारत की सीमाओं को भी पार कर गई।

पारिवारिक जीवन का संघर्ष उनके स्नेह में पगा है—आरम्भ से वर्तमान काल तक भी जैसे वह 'जन्म-जन्म का नाता' जोड़े साथ है। पर हिन्दी के इस महापुरुष की लेखनी उद्दाम समुद्र की उत्ताल तरंगों की तरह सदा चंचल रही—नियमपूर्वक चंचल, मर्यादा में बंधी हुई चंचल! तीस से अधिक उत्कृष्ट उपन्यास, लगभग तीन सौ कथाएं, अनेकों नाटक और रसभीनी कविताएं एवं गहन निबन्ध।—और इन सब में बोलता-झांकता, जीता-मरता—जागरण की अंगड़ाइयां लेता हमारा समाज, हमारा अपना ही जीवन वाजपेयी जी के कलाकार की ऐसी उज्ज्वल, अप्रतिम, अमिट प्रतिमा हमारे समक्ष प्रस्तुत करता है, जो युगों की विकराल, जीवनहारी, प्रलयंकर आंधियों में भी अविचल रहेगी और रत्नाकर के वक्ष पर उद्दीप्त प्रकाश-स्तम्भ की भांति नए-नए भारती-भक्तों का मार्ग-दर्शन करती रहेगी। 'प्रेम-पथ' (१९२६) से 'गोमती तट पर' (१९६०) आइए, और देखिए विकास का एक सतत क्रम, कला का निर्विघ्न विकास और उल्लास, भाषा का मनोमुग्धकारी प्रभाव —संयम और नियंत्रण से परिचालित विचारों की गहनता और वर्णन-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

व्याख्या की सरलता—ऐसी जो कहीं-कहीं योगियों के 'सूत्रों' का स्मरण करा दे।

—निर्मला गुप्ता, एम० ए०

कहानी-संकेत

बहुतेरे अपराधी प्रायः यही सोचा करते हैं कि मेरे इस कुकर्म को कोई ताड़ नहीं सकता—देख नहीं सकता। अतएव वे जो कुछ भी करते हैं, चुपचाप, इधर-उधर, चारों ओर से, सब की दृष्टि बचा-कर। वे अपनी इस विद्या में जितने कुशल होते हैं, अपराध-कृत्य की घड़ियों के बाद उतने ही प्रसन्न-पुलकित भी होते हैं।

परन्तु इस कहानी की परिकल्पना इसके विपरीत है। इसमें अपराधी अन्त में जब विफल-मनोरथ होता है, तभी उसकी असफलता का एक ऐसा भेद खुल जाता है कि वह प्रायश्चित्त की भावना से उद्बुद्ध होकर अपना अपराध स्वीकार कर लेता है।

पापी व्यक्ति में बुद्धि-तत्त्व चाहे जितना मन्द रहे; पर भावना के क्षेत्र में वह क्रांतिकारी होता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

समर्पण

एक डिब्बे में तीन व्यक्ति बैठे थे। एक तो बर्थ के ऊपर पैर फैलाये आसन जमाये हुए था और दो नीचे की बर्थों पर थे। सब लोग अपना-अपना होल-डाल फैलाये हुए थे। गज्जू ने भी अपना बिस्तर बिछा लिया। सिरहाने तकिया लगा कर वह भी लेट रहा। गाड़ी तेजी से जा रही थी। गज्जू यह अध्ययन करने में लगा था कि कौन क्या कर रहा है। रात के दस बज रहे थे और नींद आ जाना स्वाभाविक था। गज्जू ने सोचा, आंख मूंद लेने पर, सम्भव है, मुझे भी नींद आ जाय। इसलिए वह भी पैर पसार कर आंखें मूंद कर लेट रहा। बाहर आकाश में आषाढ़ मास की चांदनी छिटकी हुई थी। अन्दर डिब्बे की छत के पंखे फर-फर चल रहे थे।

इतने में गज्जू ने देखा कि सामने की बर्थ पर एक गुजराती सेठ लेटे हुए हैं। उनके सिर के नीचे एक चौड़ा तकिया है, जो एक लैदर बैग के ऊपर रक्खा हुआ है। दो-चार मिनट के बाद ऊपर वाले सहयात्री ने अपनी तरफ का बटन दबाकर बत्ती बुझा दी। गज्जू ने लक्ष्य किया—'सेठ यकायक चौंक पड़े हैं। इसके अतिरिक्त वह दाहिने हाथ से तकिये के नीचे रक्खे हुए लैदर बैग को टटोलने-से लगे हैं!'

अब गज्जू ने समझ लिया, इस बैग में अवश्य कोई गहरा माल है। तब उसकी दृष्टि बैंच के नीचे रक्खे एक ट्रंक पर जा पड़ी। उस पर नागरी लिपि में लिखा हुआ था—"चिमनलाल देसाई।"

डिब्बे में एक बत्ती अवश्य बुझ गयी थी, लेकिन दूसरी बत्ती जल रही थी। गज्जू के मन में आया कि बाहर की बत्ती भले ही बुझ गयी हो, लेकिन मेरे भीतर की बत्ती तो जल उठी है! फल यह हुआ कि उसकी आंखों की नींद जाती रही।

अब गाड़ी कुछ तीव्र गति से जा रही थी। थोडी देर बाद उसने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

देखा कि दो सहयात्री तो बिल्कुल सो गये। यह तीसरा चिमन सेठ ही केवल जग रहा है। तब उसने सोचा—'जगने की ही बात है। बैग नोटों से भरा होगा!' और तब गज्जू मुस्करा उठा।

उसने देखा—सेठ के बिस्तर पर आवरण की चद्दर काफी सुन्दर है—और धोती जो वह धारण किए है, वह भी प्रथम श्रेणी की है।

सेठ कमीज पहने हुए था और उसके सेट के बटन सोने के थे। उसने लक्ष्य किया कि हाथ के बटन यद्यपि चांदी के हैं, पर छींटे उन पर भी सोने के पड़े हुए हैं।

अब गज्जू ने बर्थ के नीचे देखा—चप्पल भी साधारण नहीं हैं! उसके मन में आया—'बैग में नोट्स दस-दस के न होकर, हो सकता है, सौ-सौ के हों। तब दांव सब मिलाकर पूरे एक लाख का होगा। तो बस इस बार जो सफलता मिल जाय, तो जीवन भर के लिए निश्चिन्त हो जाऊं। फिर यह धंधा भी छोड़ दूंगा।'

कल्पना रंगीन हो चली—दूकान शहर के भीतर से उठाकर बिरहाना रोड पर, किसी शानदार मकान के नीचे ले आऊंगा। मगर मकान क्यों, उसे महल कहो, महल। नौकर-चाकर बढ़ाने पड़ेंगे। नयी और सुन्दर अलमारियां होंगी। और बैठने के लिए रबर की गद्दीवाली कुर्सियां। एक नौकर घर में भी रखना पड़ेगा। मगर एक नौकर से कैसे काम चलेगा? कम-से-कम चार तो हों!

गज्जू चिमन सेठ के मुख पर टकटकी लगाये हुए था। दस मिनट बाद वह यह देखकर पुनः उत्साहित हो उठा कि आंखें भी उसने बन्द कर लीं। चलो, एक मंजिल तय हुई। अब उसके सोने भर की देर है। मगर सोना भी कई तरह का होता है। कुछ लोग बैल बेचकर सोते हैं। इतनी गहरी नींद आती है कि पास में ढोल बजता रहे, तो भी आंख न खुले!

अब उसे ध्यान आ गया अपने छोटे बच्चे का। सो जाने पर वह किसी तरह उठाये नहीं उठता। उठाकर जो बैठाल भी दो, तो झट फिर लेट रहता है। कोई बात पूछो, तो जवाब में कह देता है—'ऊं!' मगर उसका यह जवाब भी सोने की अवस्था में ही मिलता है। गोद से

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उठाकर एक कमरे से दूसरे कमरे में ले जाइये, उसकी बला से। दूसरी चारपाई पर लिटा दीजिए, परवाह नहीं। वह सोता-का-सोता ही रहेगा। अगर इस चिमन सेठ को ऐसी ही नींद आ जाय, तो मजा पैदा हो जाय।

इतने में इटावा स्टेशन आ गया। गाड़ी प्लेटफार्म पर खड़ी हो गयी। खिड़कियां खुली हुई थीं। दूध गरम, पेठा इटावा का, चाय गरम, देसी घी वाली पूरियां, सोडा लैमन, चूं चूं बोलने वाले खिलौने और पान-सिगरेट की आवाजें आने लगीं। एक यात्री ने अन्दर की ओर झांका भी, पर यह देखकर कि डिब्बा दूसरे दर्जे का है, आगे बढ़ गया।

इसी समय चिमन सेठ की आंखें खुल गयीं और उसने खिड़की की ओर करवट बदल ली। गज्जू यकायक चौंक पड़ा—"अरे यह तो जग रहा है! मैंने अभी कहा था न कि सोना भी कई तरह का होता है। कुछ लोग अजगर की तरह सोते हैं, कुछ कुत्ते की तरह। तो जान पड़ता है, यह चिमनलाल मारू का जो सेठ है, सोने के मामले में बिल्कुल कुत्ता है!"

गज्जू यकायक उठ बैठा। झोले के अन्दर बीड़ी का बण्डल रक्खा हुआ था। झट से निकाला, एक बीड़ी सुलगाने की चेष्टा की। मगर पंखा जो चल रहा था, इसलिए उठकर शौचालय के पास जाकर बीड़ी सुलगायी। बीड़ी सुलग गयी, तो फिर वह अपने बिस्तर पर आकर इत-मीनान से बैठ गया। गाड़ी अब तेजी से जा रही थी।

सारी रात गज्जू ने जागते हुए व्यतीत कर दी। कभी उसको मालूम होता कि सेठ सो रहा है, उसको नींद आ गयी है। पर थोड़ी देर बाद उसका यह विचार मिथ्या सिद्ध होता। कभी सेठ अपना हाथ सिर की ओर बढ़ा देता, कभी एक पैर कुछ अधिक सीधा तान देता, कभी उसके पैर का अंगूठा संकुचित हो उठता और कभी ऊपर को उठ जाता। उस तरफ की खिड़की खुली हुई थी। इसलिए एक बार तो उसने अपना पैर खिड़की पर रख दिया। इसी तरह होते-करते रात बीते गयी, पर न तो चिमन सेठ पूरी तरह सो पाया और न सो पाया गज्जू

अन्त में दिल्ली-शाहदरा आ गया और चिमन सेठ उठ बैठे। उठकर जेब से सिगरेट का पैकेट निकाला और दियासलाई से उसे जलाने की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चेष्टा की। मगर पंखे की हवा के कारण दियासलाई बुझ गयी। संयोग की बात उसकी डिब्बी में वही एक तीली बची हुई थी। तब उसके मुंह से निकल गया—"आपके पास तो दियासलाई होगी ?"

गज्जू ने फौरन दियासलाई की डिब्बी उसे दे दी।

शाहदरा स्टेशन पार हो रहा था। सेठ जी डिब्बी गज्जू को लौटाने लगे, तो उसने उत्तर दिया—"दस-पांच तीलियां रख लीजिए साहब, ऐसी क्या बात है।"

सेठ ने जवाब दिया—"बड़ी कृपा है आपकी।"

गज्जू ने सोचा—'चलो बातचीत का सिलसिला तो शुरू हुआ।' और उसने तत्काल पूछा—"यहीं उतरेंगे, या आगे कहीं.....?"

नाक से धुआं निकालते और सिर हिलाते हुए चिमन सेठ ने उत्तर दिया—"यहीं उतरना है।"

जब तक उसने होलडाल ठीक किया, तब तक दिल्ली स्टेशन आ गया। गाड़ी खड़ी हो गयी और लोग अपना-अपना असबाब कुलियों पर लदवाकर चल दिये। अब आगे चिमन सेठ थे और पीछे गज्जू।

चिमन सेठ ने "कारवां" होटल में ठहरना स्वीकार किया, तो गज्जू ने भी कह दिया—"चलो, हम भी वहीं ठहर जायेंगे। भले आदमी का साथ मिल जाय, तो फिर क्या छोड़ना।" फिर मन में कहने लगा—'काम तो बन ही जायगा।'

इस तरह दोनों एक ही होटल में ठहर गए। संयोग की बात, दोनों को जो कमरे मिले, उनके नम्बर भी सत्रह और अठारह थे।

अब चिमन के साथ गज्जू का मेल-जोल बढ़ गया था। दोनों प्रायः साथ-साथ चाय पीते और साथ-ही-साथ घूमने भी जाते। पहले दिन जब दोनों कमरे के बाहर, एक टेबिल पर बैठे चाय पी रहे थे, चिमन सेठ के मुंह से निकल गया—"चला तो आया हूं, पर देखो कुछ सफलता मिल जाय तब है।"

गज्जू ने कह दिया—"रामायण की एक चौपाई इस मामले में बड़े काम की है।"

चिमन सेठ ने पूछा—"कौन-सी है ?"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गज्जू ने उत्तर दिया—"सुनु सिय सत्य असीस हमारी, पूजहिं मन-कामना तुम्हारी।"

चिमन सेठ मुस्कराने लगे। बोले—"वाह! यह आपने अच्छा बतलाया!"

गज्जू ने अवसर देखकर उत्तर दिया—"मैं सदा भलाई की बात सोचता हूं। परोपकार में मेरी जिन्दगी बीती है। कभी हमारे लायक कोई काम हो, तो संकोच मत कीजियेगा।"

चिमन सेठ बोले—"ऐसे मित्र बड़े भाग्य से मिलते हैं! मैं भी बड़ा भाग्यशाली हूं, जो राह-घाट आप से भेंट हो गयी। देखो आज कोशिश करता हूं, शायद दाम लग ही जायं।"

गज्जू के मुंह में पानी भर आया। मन-ही-मन कह उठा—'मेरा तीर कभी खाली नहीं गया। मैं पहले ही जान गया था कि माल गहरा है।' उसने जान-बूझ कर यह नहीं पूछा कि चीज कौन-सी है और दाम किसका लगना है।

दिन बीता, शाम हुई और दोनों साथ-साथ खाना खाने बैठे। गज्जू ने पूछा—"कहिये, कुछ काम बना?"

चिमन सेठ ने उत्तर दिया—"मुझे तो बड़ा मुश्किल दिखाई देता है।"

गज्जू ने गम्भीरता से कहा—"मैंने जो चौपाई बतलायी थी, मालूम होता है आपने उसका जप ठीक से किया नहीं। आपको मालूम नहीं बड़ा सिद्ध मन्त्र है।"

चिमन सेठ ने कहा—"बात यह हुई कि माला मेरे पास थी नहीं।"

गज्जू झट बोल पड़ा—"तो आपने मुझ से मांग क्यों न ली? बड़े संकोची हैं आप।"

सेठ ने उत्तर दिया—"बाजार से ले आया हूं। बस, आज से ही उसका जप शुरू कर दूंगा।"

इतने में नौ नम्बर के कमरे में शोर-गुल सुनाई पड़ा। गज्जू से नहीं रहा गया। वह तुरन्त वहां जा पहुंचा। थोड़ी देर में लौटकर आया, तो चिमनलाल ने पूछा—"क्यों भाई, क्या बात थी?"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गज्जू ने जवाब दिया—"कुछ नहीं, यों ही पुलिस तलाशी ले रही थी। आठ नम्बर वाले कमरे में चोरी हो गई थी न!"

चिमन सेठ घबड़ा उठे। मुंह से निकल गया—"अच्छा तो यहां चोरी का भी डर है!"

गज्जू ने उत्तर दिया—"मान लो, डर हो भी; पर मेरे रहते आपको डरने की क्या जरूरत है? मैं जान पर खेल जाऊंगा, मगर आपका बाल बांका न होने दूंगा!"

जब अन्य कोई उपाय न देख पड़ा, तो चिमन सेठ बोले—"तो ऐसा करो भाई, अब तुम मेरे कमरे में आ जाओ। एक से दो फिर भी भले।"

गज्जू पुलकित हो उठा। किन्तु प्रसन्नता को दबाकर बोला—"आना ही पड़ेगा मित्र। जो वचन दिया है, उसका पालन न करूं, तो भगवान् को क्या मुंह दिखाऊंगा।"

कमरा बड़ा था, झट से दूसरा पलंग आ गया। रात हुई और दोनों लेट रहे। लेटे-लेटे चिमन सेठ के मन में आया—"आदमी वैसे भला मालूम पड़ता है।'

भीतर से स्वर निकला—'हर एक आदमी भला पैदा होता है। अभी क्या है? जब अन्त तक भला बना रहे, तब है। अभी जो दूध का धोया बनता है, अगर रात में हीरा चम्पत कर दे और भाग खड़ा हो, तो।'

चिन्ता के कारण बड़ी रात तक उसे नींद नहीं आयी। कभी करवट बदलता, कभी उठकर बैठ जाता।

गज्जू पिछली रात को सो न पाया था। दिन में भी वह अपने धन्धे में लगा रहा। इसलिए उसे नींद तो जल्दी आ गयी, पर यकायक तीन बजे रात को उसकी आंख खुल गयी। उसने देखा, चिमन सेठ सो रहे हैं। तब यकायक उसके शरीर में उत्साह की लहर दौड़ गई। उठकर बैठ गया। मन में आया—'इसकी सोने की आदत मेरी घरवाली जैसी है। वह शैतान भी इसी तरह सोती है! कमरे के अन्दर कदम रक्खा नहीं कि झट जग पड़ती है। कहीं यह सेठ जग पड़ा, तो मेरा मुंह काला

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हो जायगा। नहीं-नहीं, अब इस हालत में मैं इसको धोखा न दूंगा। मगर फिर बिरहाना रोड पर अपनी शानदार दूकान, नौकर-चाकर! स्वप्न कैसे पूरा होगा?'

गज्जू यह सोच ही रहा था कि चिमन सेठ सोते-सोते बड़बड़ाने लगे—"चोर-चोर! पकड़ो-पकड़ो!"

गज्जू यह सोचकर पहले तो मन-ही-मन हंसने लगा कि कहीं ऐसा भी होता है कि चोरी हो न पाये और चोर पकड़ा जाय। फिर इतमीनान से बोल उठा—"सेठ जी! सेठ जी! क्या बात है?"

चिमन सेठ यकायक उठ बैठे और झट अपने सिरहाने रखे हुए बैग को खोलकर देखने लगे। हीरा एक डिब्बे के अन्दर रखा हुआ था। देखकर सन्तोष की सांस ली और बोले—"चलो आज तो बच गया। वैसे सपना बड़ा भयानक था!"

गज्जू एक लालच भरी दृष्टि से बोल उठा—"मगर है क्या चीज? जरा मुझ को भी दिखलाइये।" चिमनलाल ने हीरा दिखला दिया। गज्जू एकटक देखता रह गया। उसने ऐसा सुन्दर हीरा अब तक न देखा था! तब उसने मन-ही-मन दृढ़ संकल्प कर लिया—"इस सेठ के साथ चाहे जितने दिन ठहरना पड़े, हीरा उड़ाये बिना मानूगा नहीं!"

जब रात होती और चिमन सेठ सो जाते, तब गज्जू बहुत सावधानी के साथ उनका बैग खिसका लेता। चुपके से खोलकर देखता। मगर उसमें हीरा न पाकर हाथ मलकर रह जाता। मगर चिमन जब बाजार जाने लगते, तभी हीरा उसी बैग से निकाल कर गज्जू को दिखाते हुए बोल उठते—"शहर भर छान मारा, पर इस हीरे का जोड़ कहीं न निकला। अब इसे बेच डालूंगा।"

गज्जू हैरान था कि नित्य रात को इस बैग से हीरा निकालने की चेष्टा करता हूं, पर बहुत ढूंढ़ने पर भी उसका पता नहीं चलता और यह सेठ नित्य मुझे हीरा दिखा-दिखाकर ललचाता रहता है कि इतने बड़े नगर में कहीं इसका जोड़ नहीं।

गज्जू उदास हो-होकर चिमन सेठ के मुंह की ओर देखता रहता। किसी तरह उसकी समझ में न आता कि यह मामला क्या है? आखिर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यह सेठ बैग में हीरा रखता कहां है ?

अन्त में एक दिन चिमन सेठ ने गज्जू को एक दावत दी। जब प्रसन्नता के साथ गज्जू पेट पर हाथ फेरने लगा, तब चिमन सेठ ने मुसकराते-मुसकराते कह दिया—"भगवान् की कृपा से आज मेरे हीरे के दाम लग गये।" और कथन के साथ उसने रिजर्व बैंक का परचा दिखलाते हुए कह दिया—"खर्च भर का रुपया रखकर शेष यह देखो पन्द्रह हजार रुपये अपनी बम्बई वाली बैंक में जमा कर आया हूं।"

चिमन सेठ का इतना कहना था कि गज्जू माथा ठोंकता हुआ रो पड़ा। सिसकियां लेता-लेता वह बोला—"हाय मैं तो मिट गया। मेरा तो सर्वस्व चला गया! इसी हीरे के लिए दस दिन तक मैं आपके साथ इस होटल में ठहरा। इसी के लिए इसका इतना लम्बा खर्च भी सहन किया। मगर हीरा फिर भी मेरे हाथ न लगा।"

चिमन सेठ हंस पड़े। बोले—"मगर हीरा तो तुम्हारे पास था। तुम्हारे इसी झोले में, जिसमें तुम साबुन, तेल, कंघा, शीशा, हजामत का सेट आदि रखते हो। जब तुम मेरा बैग खोलकर देखते थे, तब मैं जागता हुआ मन-ही-मन हंसता था और जब सवेरे तुम नित्यक्रिया के लिए उठकर चल देते थे तब इतमीनान से मैं उसको तुम्हारे झोले से निकाल लिया करता था ? हीरा तुम्हारे पास था, पर तुम उसे जान न सके। जैसे भगवान् की सत्ता हमारे भीतर सदा विराजमान रहती है, पर हम उसे भूले रहते हैं।"

अब गज्जू की आंखें खुल गयीं। इतना मर्माहत वह जीवन में कभी नहीं हुआ था। तुरन्त उसने आंसू पोंछ डाले और हर्ष से गद्‌गद् होकर कहने लगा—"हीरा मैंने खोया नहीं, पा लिया है।"

वह फिर वहां ठहर न सका। सीधे पुलिस स्टेशन पर इन्चार्ज के पास जाकर बोला—"कारवां होटल के कमरा नम्बर आठ में जो चोरी हो गई थी, उसका अपराधी मैं हूं। चोरी मैंने ही की थी!"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री यशपाल

(जन्म : दिसम्बर, १९०३—फिरोजपुर छावनी)

यशपालजी का व्यक्तित्व दो प्रकार का है। पहला क्रान्तिकारी का है। दूसरा प्रतिभाशाली कलाकार का। आपका जन्म दिसम्बर १९०३ में फिरोजपुर छावनी में हुआ। कालेज जीवन से ही आप भारतीय स्वतन्त्रता-संग्राम के लिए प्राण हथेली पर लिए रहते थे। आतंकवादी क्रान्तिकारी दल से आपका घनिष्ठ सम्बन्ध था। चन्द्रशेखर आजाद तथा भगतसिंह के साथ आपने भी सशस्त्र क्रान्ति में भाग लिया था। आप राजनीतिक दलों में सम्मिलित रहे और १९२६ में, दिल्ली में, आपने वायसराय की ट्रेन उड़ाने का भी प्रयत्न किया। प्राण-दण्ड से बचने के लिए आपको गुप्तवास की संकटापन्न परिस्थितियों से भी गुजरना पड़ा। फिर अन्त में आपको सात वर्ष कारागार में काटने पड़े। अपने साहित्यिक जीवन के साथ ही आप मार्क्सवादी समाजवाद में आस्था रखने लगे थे। संघर्षमय रोमांचकारी जीवन ने आपके अनभव-क्षेत्र को बड़ा विस्तृत और व्यापक बना दिया। एक मार्क्सवादी साहित्यकार के समान आपका साहित्य सामाजिक रूढ़ियों पर सतत प्रहार करता रहता है। अतएव आपका सम्पूर्ण साहित्य अपना एक महत्त्वपूर्ण प्रयोजन रखता है। आर्थिक प्रश्नों को भी आपने अपनी रचनाओं में सुलझाने की चेष्टा की है।

यशपाल जी की बहुमुखी प्रतिभा का प्रकाश उपन्यास, कहानी, निबन्ध, नाटक तथा आत्मकथा-लेखन में पूर्ण रूप से हुआ है। आपकी रचनाओं की संख्या ४० से भी ऊपर है। 'दादा कामरेड', 'देशद्रोही', 'दिव्या', 'पार्टी कामरेड', 'मनुष्य के रूप', 'अमिता', तथा 'झूठा सच' आपके प्रसिद्ध उपन्यास हैं। आपका नाटक है, 'नशे-नशे की बात'। आपके सात निबन्ध-संग्रह हैं। 'चक्कर क्लब', 'न्याय का संघर्ष', 'राम-राज्य की कथा', 'देखा सोचा समझा' आदि। आपके क्रान्तिकारी जीवन की आत्मकथा तीन भागों में 'सिंहावलोकन' के नाम से प्रकाशित है। डेढ़ सौ से अधिक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कहानियां आपने लिखी हैं, जो बारह संग्रहों में हैं—'पिंजरे की उड़ान', 'वो दुनिया', 'ज्ञान-दान', 'अभिशप्त', 'तर्क का तूफान' 'भस्मावृत चिनगारी', 'फूलों का कुर्त्ता', 'धर्म युद्ध', 'उत्तराधिकारी', 'चित्र का शीर्षक', 'तुमने क्यों कहा था मैं सुन्दर हूं', और 'उत्तमा की मां'।

'मूर्ख क्रोध' इस कहानी-संग्रह की सर्वाधिक लघु कहानी है। वैसे भी यह अन्य कहानियों से सर्वथा भिन्न एक मनोवैज्ञानिक रचना है।

कहानी-संकेत

इसमें एक नारी की घटना-जन्य स्थिति—मनःक्षोभ तथा उसके शमन का चित्र है। पति-पत्नी में अनेक झगड़े एक दूसरे को गलत समझने के कारण होते रहते हैं। बात यह है कि एक मनुष्य अपने आपको दूसरों की स्थिति में रख कर सोचने-विचारने की चेष्टा नहीं करता। इसमें चरित्र-परिवर्तन के द्वारा एक ही घटना से उक्त मनोवैज्ञानिक तथ्य को उद्घाटित करने की चेष्टा की गई है। जीवन-रहस्य को समझने की उत्सुकता इतने आकर्षक ढंग से व्यक्त की गई है कि रचनाकार की लेखन-कुशलता का रूप मूर्तिमान् हो उठता है। आपने आत्मकथात्मक प्रणाली में यह कहानी बहुत सरल और सुबोध ढंग से लिखने पर भी अपनी भाषा-शैली को सजीव बनाये रखा है। कहानी लघु होने पर भी एक महत्त्वपूर्ण सत्य की उपलब्धि कराने में समर्थ है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मूर्ख क्रोध

सुधू स्कूल की बस पर चढ़ रही थी। पायदान में जूता छिटक गया। सड़क पर घुटने के बल गिरी। जरा-सी खरोंच आ गयी। नौकर ने भीतर आकर मुझसे कहा। सोचा, टिंचर या मर्कोक्रोम लगा दूं। बच्चों को ऐसी चोटें लगती ही रहती हैं इसलिए एक-आध दवाई घर रखती हूं। जब तक बाहर आऊं, बस जा चुकी थी। बच्चे ऐसी चोटों की परवाह भी क्या करते हैं।

सुधू चौथे पहर स्कूल से लौटी तो चोट की बात भी भूल गयी थी। उसने दूध या नाश्ता लेने की अनिच्छा प्रकट की। मुन्ना उससे खेलने के लिए आया तो उसे भी हटा दिया। कहने लगी—"मम्मी, हमें लिटा दो।"

मुझे उसका बदन गरम नहीं लगा, सोचा, कहीं ठंड-वंड लगी होगी या पेट खराब होगा। जबान कुछ कोटिड थी। मैंने उसे लिटा दिया कि कुछ देर आराम करेगी तो ठीक हो जायेगी। नौकर को दोशांदा काढ़ने के लिए भी कह दिया।

ये साढ़े पांच बजे आये तो मैंने बताया कि सुधू कुछ सुस्त है। तब मुझे सड़क पर चोट लगने की भी बात याद आई। घुटने पर देखा तो खून की बूंदें-सी छलककर सूख गई थीं। इन्होंने चोट को बहुत ध्यान से देखकर कुछ चिन्ता के स्वर में पूछा—"कब, किस समय चोट लगी थी।"

मैंने पूछा—"क्यों ?" और बताया—"सुबह साढ़े नौ बजे, स्कूल जाते समय गोपाल ने बताया था। मैं जब तक बाहर गई, बस चली गई थी।"

चिंता से बोले—"सड़क पर लगी चोट अच्छी नहीं होती। एहतियातन उसी समय इंजेक्शन लगवा देना चाहिए था।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इन्होंने सुधू से पूछा—"बेटी, बाजार चलोगी हमारे साथ ?"

सुधू ने अंगड़ाई लेकर कहा—"पापाजी, मन नहीं करता" और मुंह ढांककर सो गयी !

इन्होंने तुरन्त चाय पी और सुधू को गोद में लेकर रिक्शा पर डाक्टर के यहां ले गये। पौन घंटे बाद लौटे तो रिक्शा को रोककर मुझ से बोले—"दो साफ चादरें दे दो। डाक्टर ने हस्पताल में फोन कर सुधू को वहां दाखिल कर लेने के लिए कह दिया है।"

मेरा कलेजा धड़क गया, पूछा—"क्यों, क्या है उसे ? हस्पताल ले जाने की क्या जरूरत है ? सच बताओ।"

ये बोले—"घबराहट की कोई बात नहीं। वहां सब तरह के इलाज की सुविधा रहती है। सब तरह के टेस्ट तुरन्त हो सकेंगे। बिना बुखार के इसे सुस्ती है, जाने क्या कारण है !"

मैंने आग्रह किया—"रात-भर तुम इसे कैसे सम्भालोगे ? मुझे साथ ले चलो। मैं वहां रह जाऊंगी, मुन्ना को तो निर्मला रख लेगी।"

इन्होंने नहीं माना, बोले—"वाह, क्यों नहीं सम्भाल सकूंगा ? यदि रात में चौक या अमीनाबाद से कोई इंजेक्शन ही लाना हुआ तो मुझे तो कोई कठिनाई नहीं होगी। तुम कोई चिन्ता मत करो। चिन्ता तो इलाज में कमी रह जाने से होती है।"

इन्होंने पड़ौसी सतीश के लिए पुछवाया। निर्मला ने कहा—"किसी काम से गये हैं, साढ़े सात-आठ तक आयेंगे।" यह बोले—"अच्छा, अगर जल्दी आ जाये तो कहना, एक बार जरा हस्पताल आ जाय।"

सुधू इनकी गोद में ऊंघ रही थी। उसे प्यारकर मैंने कहा—"बेटी, सुबह हस्पताल से जल्दी लौट आना।" हाय, तब मुझे क्या मालूम था !

सतीश रात साढ़े-नौ-दस के लगभग आये तो बोले—"खास जरूरत हो तो अभी हस्पताल हो आऊं, नहीं तो कल ऐतवार है। सुबह तड़के ही साइकल पर चला जाऊंगा।"

सतीश ऐतवार आठ बजे ही साइकल पर हस्पताल गए। मेरा मन हाथ से निकला जा रहा था। आंसू थमते ही न थे। हाथ-पांव फूल रहे थे। मुन्ना बार-बार सुधू को पूछ रहा था। मेरे आंसू देखकर उसके

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

होंठ लटक आते थे। इसलिए किसी तरह अपने आप को सम्भाले थी।

सतीश अपनी मां और निर्मला के साथ आये। तीनों की रोयी हुई आंखें देखकर मेरी चीख निकल गयी। सतीश की मां ने मुझे बांहों में ले लिया। निर्मला ने लपककर मुन्ना को मेरी गोद से उठा लिया और भाग गई।

सतीश के आंसू बह गये। मैंने सिर पीट लिया। सतीश की मां मुझे छाती से चिपटा मेरे हाथ पकड़ रही थी। सतीश अपने आंसू पोंछता हुआ कह रहा था ——"भाभी, तुम वह दृश्य देख नहीं सकती थीं। टिटेनस में ऐसा ही होता है। लड़की बेहोशी में बेतहाशा हाथ-पांव पीट रही थी। शुक्ल जी सम्भाले रहे। उनका बड़ा जिगर है। परन्तु जब अन्त हो गया तो वे भी बेहोश हो गये। मैंने उन्हें सम्भाला।"

मैं बेहोश हो गई। जब होश आया तो सतीश की मां और दो-तीन पड़ोसिनें समीप बैठीं थीं। उन लोगों ने बताया कि ये सुधू का शरीर लेकर टांगे पर जल्दी ही आ गये थे। इन्होंने कहा—मेरे होश में आने से पहले ही लड़की को ले जाना चाहिए। मैं लड़की का विकृत रूप न देख सकूं; इसलिए सतीश और मुहल्ले के पांच-सात आदमियों के साथ वे कभी के श्मशान की ओर जा चुके थे।

मैंने सिर नोच लिया, सिर पीटा। उस हृदय-विदारक वेदना में मैं क्रोध की आग से जल उठी। क्यों मेरी बेटी को छीन कर ले गये। अन्त समय एक बार उसका मुंह भी मुझे न देखने दिया। मैं एक बार उसे गोद में ले लेती तो इनका क्या बिगड़ जाता। .....ये हमेशा मेरे साथ ऐसा ही करते हैं। सदा धोखा देते हैं। अपने-आप तो बेहोश हो गये। मेरा क्या दिल नहीं है? बेटी क्या इन्हीं की थी? ये कौन होते हैं मुझे उसका मुंह न देखने देने वाले? पहले भी ऐसा ही किया था। नैनीताल में अपना सिर फट गया तो पता भी न दिया। लोगों ने बताया कि भाग्य ही था कि बच गये, तो मुझे समझा दिया—तुम्हें चिन्तित करने से क्या बनता? एक बार कॉलेज में झगड़ा होने से नौकरी छूट गई तो भी सात दिन बाहर-बाहर घूमते रहे, मुझे खबर नहीं दी। ऐसे धोखे और अपमान से तो कुएं में कूदकर प्राण दे दूं, इस घर को सदा के लिए

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

छोड़ कर नदी में कूद पड़ूं, अपना सिर दीवार से मारकर फोड़ लूं"..... "छूदू जीजी" !—मुन्ना के ठुनकने की आवाज और निर्मला की पुकार सुनाई दी—"भाभी, अब इसे लो, यह नहीं मानता।"

मुन्ना बहनं से बहुत हिला था। अपने-आपको किसी तरह सम्भाला, एक और टीस उठी—यह बच्चा ऐसी चोट कैसे सहेगा ! उसे गोद में ले लिया —"मम्मी, छूदू जीजी पास जायेंगे" मुझ से लिपटकर मुन्ना बोला ।

"मेरे लाल, जीजी स्कूल गई है, तू खेल.....।" गला घोंटते आंसू निगलकर मेरे मुंह से निकला और मैं गिर पड़ी.....क्रोध के गौरीशंकर की इस चोटी से गिरी कि अतल में गिरती ही चली जा रही थी। गर्दन झुक गयी। मुन्ना के शरीर पर हाथ रखे, आंखें मूंद ध्यान में उनके चरणों से लिपटकर सहारा लिया.....स्वयं बेहोश हो जाने पर भी मुझे अपने स्नेह की ढाल की ओट में बचा लेने के लिए पूरी चोट अकेले ही सह जाने की चिंता बनी हुई थी.....जल जाये मेरा मूर्ख क्रोध।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रांगेय राघव

डॉक्टर रांगेय राघव हिन्दी के उन इने-गिने लेखकों में से थे, जिन्होंने अपनी बहुमुखी प्रतिभा, मौलिक सूझ-बूझ और नवीन शैली के आधार पर समस्त हिन्दी जगत् में बहुत जल्दी अपने लिए एक सम्मान-पूर्ण स्थान बना लिया। उनका 'घरौंदे' उपन्यास मैंने जब सन् '४३ के लगभग पढ़ा, तभी मैंने मान लिया था कि यह लेखक एक दिन हिन्दी के साहित्य-जगत् में छा जायगा। अन्त में वही हुआ। उन्होंने कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास तथा समालोचनात्मक ग्रन्थ—जो कुछ भी लिखा, प्रथम कोटि का सिद्ध हुआ।

उन्होंने आगरा विश्वविद्यालय से एम०ए०, पी-एच०डी० किया था। 'मेरी प्रिय कहानियाँ' पर, राजस्थान साहित्य-एकादमी ने, उन्हें सन् '५७ का सर्वश्रेष्ठ कहानीकार घोषित करके सम्मानित किया था। डॉक्टर साहब ने विलक्षण सूझ-बूझ पायी थी। श्री भगवतीचरण वर्मा का 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते' उपन्यास पढ़कर उनके मन में आया कि इस कृति के पात्रों को लेकर क्यों न मैं एक उपन्यास 'सीधे-सादे रास्ते' लिख डालूँ। और उनका यह उपन्यास जब प्रकाशित हुआ तो हिन्दी जगत् में एक बार तुमुल कोलाहल उपस्थित हो गया था। उनका 'कब तक पुकारूँ ?' उपन्यास भी सन् '५७ का एक श्रेष्ठ उपन्यास माना गया था। उन्होंने कुल मिलाकर पच्चीस कहानियाँ लिखी थीं। कहते हैं, वे जब लिखने को बैठते थे, तो रात-रात भर लिखते रहते थे। बीच में सिगरेट और चाय के सिवा और कुछ न लेते थे। सिगरेट तो उनके ओठों से सदा लगी ही रहती थी। एक प्रतिभाशाली मेधावी लेखक होने के साथ कला में भी एक विशिष्ट रचनात्मक गति रखते थे।

अभी रांगेय राघव की अवस्था ही क्या थी ? तिस पर भी वे इतनी अधिक अमर कृतियाँ हिन्दी-साहित्य को दे गए कि युग-युग उनकी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कीर्ति-कहानी जीवित रहेगी। डॉक्टर साहब से अभी हिन्दी को बड़ी आशाएँ थीं। ऐसी तरुणावस्था में होने वाली उनकी मृत्यु से हिन्दी-साहित्य की अपार हानि हुई है।

कहानी-संकेत

'गूँगे' डॉक्टर साहब की इस कहानी में एक ऐसे व्यक्ति का अध्ययन उपस्थित किया गया है, जो दया की भीख नहीं पसन्द करता, इसलिए नौकरी करना चाहता है, पर कर नहीं पाता। जहाँ कहीं भी उसके साथ दुर्व्यवहार होता है वह भाग खड़ा होता है और फिर उसी घर के द्वार पर जा खड़ा होता है, जहाँ चमेली से उसे थोड़ी बहुत सहानुभूति मिल जाती है। लेकिन परिवार के सभी लोग तो एक-से नहीं होते। घर-घर ऐसे लोग हैं जो उसकी परिस्थितियों के साथ किसी प्रकार समन्वय स्थापित नहीं कर पाते। फिर गूँगा भी अन्ततोगत्वा आदमी ठहरा। कभी-न-कभी जाने अनजाने उससे भी भूल हो जाती है। मानवी आवश्यकताओं के प्रति मोह उसमें भी है और उनको तुलनात्मक दृष्टि से देखना भी वह जानता है। फलतः एक दिन चमेली भी धक्का देकर उसे घर से निकाल देती है। इतना तिरस्कार सहने के बावजूद गूँगे में एक अपना अहम अब भी शेष है। किसी प्रकार का अपराध किये बिना लड़के जब उसे सड़क पर छेड़ते हैं, तब उनसे दबना उसे स्वीकार नहीं होता। फलतः लड़के मारते-मारते खून से लथपथ कर देते हैं। अन्त में चमेली के द्वार की देहरी पर सिर रखकर वह क्रन्दन कर उठता है। चमेली उसे टुकुर-टुकुर देखती हुई सोचती है—अन्त में सभी गूँगे हैं। जो अन्याय को देखकर भी चुप्पी साध जाते, सामान्य मानवी अधिकारों के प्रति अकारण विद्वेष और वितृष्णा रखने वाले समाज को सहन कर लेते हैं। सीना तान कर स्पष्ट रूप से यह नहीं कहते कि ठीक तो है, जन-साधारण से सहृदयतापूर्वक समानता का व्यवहार पाने का उसे भी अधिकार है।

बड़ी सशक्त और मर्मस्पर्शी कहानी है। एक निरीह असहाय प्राणी का क्षोभ, मोह और विद्रोह और स्वार्थपरता में लिप्त अन्धे युग का गूँगापन इसमें सूक्ष्म किन्तु स्पष्ट रूप से उभर उठा है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गूँगे

'शकुन्तला क्या नहीं जानती ?'

'कौन ? शकुन्तला। कुछ भी नहीं जानती।'

'क्यों साहब ? क्या नहीं जानती ? ऐसा क्या काम है जो वह नहीं कर सकती ?'

'वह उस गूँगे को नहीं बुला सकती।'

'अच्छा बुला दिया तो ?'

'बुला दिया।'

बालिका ने एक बार कहने वाली की ओर द्वेष से देखा और चिल्ला उठी—दूँदे।

गूँगे ने नहीं सुना। तमाम स्त्रियाँ खिलखिला कर हँस पड़ीं। बालिका ने मुँह छिपा लिया।

जन्म से वज्र बहरा होने के कारण वह गूँगा है। उसने अपने कानों पर हाथ रखकर इशारा किया। सब लोगों को दिलचस्पी पैदा हो गई, जैसे तोते को राम-राम कहते सुनकर उसके प्रति हृदय में आनन्दमिश्रित कुतूहल उत्पन्न हो जाता है।

चमेली ने उँगलियों से इंगित किया—'फिर ?'

मुँह के आगे इशारा करके गूँगे ने बतलाया—भाग गई। कौन ? फिर समझ में आया। जब छोटा ही था तब माँ, जो घूँघट काढ़ती थी, छोड़ गई। क्योंकि बाप, अर्थात् बड़ी-बड़ी मूँछें, मर गया था। और फिर उसे पाला है— किसने ? यह तो समझ में नहीं आया पर वे लोग मारते बहुत हैं।

करुणा ने सबको घेर लिया। वह बोलने की कितनी जबर्दस्त कोशिश करता है। लेकिन नतीजा कुछ नहीं, केवल कर्कश काँय-काँय का ढेर। अस्फुट ध्वनियों का वमन, जैसे आदिम मानव अभी भाषा बनाने में जी जान से लड़ रहा हो।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चमेली ने पहली बार अनुभव किया कि यदि गले में काकल तनिक ठीक नहीं हो तो मनुष्य क्या से क्या हो जाता है। कैसी यातना है कि वह अपने हृदय को उगल देना चाहता है, किन्तु उगल नहीं पाता।

सुशीला ने आगे बढ़कर इशारा किया—मुँह खोल। और गूँगे ने मुँह खोल दिया। लेकिन उसमें कुछ दिखाई नहीं दिया! पूछा, गले में कौआ है? गूँगा समझ गया। इशारे से ही बता दिया—किसी ने बचपन में गला साफ करने की कोशिश में काट दिया; और वह ऐसे बोलता है जैसे घायल पशु कराह उठता है। शिकायत करता है जैसे कुत्ता चिल्ला रहा हो और कभी-कभी उसके स्वर में ज्वालामुखी के विस्फोट की सी भयानकता थपेड़े मार उठती है। वह जानता है कि वह सुन नहीं सकता और बताकर मुस्कराता है। वह जानता है कि उसकी बोली को कोई नहीं समझता फिर भी बोलता है।

सुशीला ने कहा—इशारे गजब के करता है। अक्ल बहुत तेज है। पूछा—खाता क्या है, कहाँ से मिलता है?

वह कहानी ऐसी है, जिसे सुनकर सब स्तब्ध बैठे हैं। हलवाई के यहाँ रात भर लड्डू बनाए हैं, कढ़ाई माँजी है, नौकरी की है, कपड़े धोये हैं; सबके इशारे हैं, लेकिन—

गूँगे का स्वर चीत्कार में परिणत हो गया। सीने पर हाथ मारकर इशारा किया—हाथ फैलाकर कभी नहीं माँगा, भीख नहीं लेता। भुजाओं पर हाथ रखकर इशारा किया—मेहनत का खाता हूँ, और पेट बजाकर दिखाया, इसके लिए, इसके लिए।...

अनाथ आश्रम के बच्चों को देखकर चमेली रोती थी। आज भी उसकी आँखों में पानी आ गया। यह सदा से ही कोमल है। सुशीला से बोली—इसे नौकर भी तो नहीं रखा जा सकता!

पर गूँगा उस समय समझ रहा था। वह दूध ले आता है। कच्चा मँगाना हो तो थन काढ़ने का इशारा कीजिये, औटा हुआ मँगाना हो, हलवाई जैसे एक बर्तन से दूध दूसरे बर्तन में उठाकर डालता है, वैसी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बात कहिये। साग मँगाना हो गोल-मोल कीजिये या लम्बी उँगली दिखा कर समझाइये···और भी····· और भी···

और चमेली ने इशारा किया—हमारे यहाँ रहेगा ?

गूँगे ने स्वीकार तो किया, किन्तु हाथ से इशारा किया—क्या दोगी ? खाना ?

'हाँ' चमेली ने सिर हिलाया।

'कुछ पैसे ?'

चार उँगलियाँ दिखा दी। गूँगे ने सीने पर हाथ मारकर जैसे कहा—तैयार है। चार रुपये !

सुशीला ने कहा, 'पछताओगी। भला यह क्या काम करेगा ?'

'मुझे तो दया आती है बेचारे पर,' चमेली ने उत्तर दिया, 'न हो बच्चों की तबियत बहलेगी !'

घर पर बुआ मारती थी, फूफा मारता था, क्योंकि उन्होंने उसे पाला था। वे चाहते थे कि बाजार में पल्लेदारी करे, बारह-चौदह आने कमा कर लाये और उन्हें दे दे। बदले में वे उसके सामने बाजरे और चने की रोटियाँ डाल दें। अब गूँगा घर भी नहीं जाता। यहीं काम करता है। बच्चे चिढ़ाते हैं। कभी नाराज नहीं होता। चमेली के पति सीधे-सादे आदमी हैं। पल जायगा बेचारा। किन्तु वे जानते हैं कि मनुष्य की करुणा की भावना उसके भीतर गूँगेपन की प्रतिच्छाया है, जब वह बहुत कुछ करना चाहता है, किन्तु कर नहीं पाता। इसी तरह दिन बीत रहे हैं।

चमेली ने पुकारा···गूँगे !

किन्तु कोई उत्तर नहीं आया। उठकर ढूँढा···कुछ पता नहीं लगा।

बसंता ने कहा—मुझे तो कुछ नहीं मालूम।

'भाग गया होगा', पति का उदासीन स्वर सुनाई दिया। सचमुच वह भाग गया था। कुछ भी समझ में नहीं आया। चुपचाप जाकर खाना पकाने लगी। क्यों भाग गया ? नाली का कीड़ा। एक छत उठा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कर सिर पर रख दी फिर भी मन नहीं भरा। दुनिया हँसती है। हमारे घर को अब अजायबघर का नाम मिल गया है···किस लिए···

जब बच्चे और वह भी खाकर उठ गये तो चमेली बची रोटियाँ कटोरदान में रखकर उठने लगी। एकाएक द्वार पर कोई छाया हिल उठी। वह गूँगा था। हाथ से इशारा किया भूखा हूँ।

'काम तो करता नहीं भिखारी।' फेंक दीं उसकी ओर रोटियाँ। रोष से पीठ मोड़कर खड़ी हो गयी। किन्तु गूँगा खड़ा रहा। रोटियाँ छुईं तक नहीं। देर तक दोनों चुप रहे। फिर न जाने क्यों गूँगे ने रोटियाँ उठा लीं और खाने लगा। चमेली ने गिलासों में दूध भर दिया। देखा गूँगा खा चुका है। उठी हाथ में चिमटा लेकर उसके पास खड़ी हो गयी।

'कहाँ गया था ?' चमेली ने कठोर स्वर में पूछा।

पर कोई उत्तर नहीं मिला। अपराधी की भाँति सिर झुक गया। तड़ से एक चिमटा उसकी पीठ पर जड़ दिया। किन्तु गूँगा रोया नहीं। वह अपने अपराध को जानता था। चमेली की आँखों से दो बूँदें जमीन पर टपक गईं। तब गूँगा भी रो दिया। और फिर यह भी होने लगा कि गूँगा जब चाहे भाग जाता, फिर लौट आता। उसे जगह-जगह नौकरी करके भाग जाने की आदत पड़ गई थी। और चमेली सोचती कि उसने उस दिन भीख ली थी या ममता की ठोकर को निस्संकोच स्वीकार कर लिया था ?

बसंता ने कसकर गूँगे के चपत जड़ दी। गूँगे का हाथ उठा और न जाने क्यों अपने आप रुक गया। उसकी आँखों में पानी भर आया और वह रोने लगा। उसका रुदन इतना कर्कश था कि चमेली को चूल्हा छोड़कर उठ आना पड़ा। गूँगा उसे देखकर इशारों से कुछ समझाने लगा। देर तक चमेली उससे पूछती रही। उसकी समझ में इतना ही आया कि खेलते-खेलते बसंता ने उसे मार दिया था।

बसंता ने कहा—'अम्मा ! यह मुझे मारना चाहता था।'

'क्यों रे ?' चमेली ने गूँगे की ओर देखकर कहा। इस समय भी नहीं भूली थी कि गूँगा कुछ सुन नहीं सकता। लेकिन गूँगा भाव-भंगिमा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

से समझ गया। उसने चमेली का···हाथ पकड़ लिया। एक क्षण को चमेली को लगा जैसे उसी के पुत्र ने आज उसका हाथ पकड़ लिया था। एकाएक घृणा से उसने हाथ हटा लिया। पुत्र के प्रति मंगल कामना ने उसे ऐसा करने को मजबूर कर दिया।

कहीं उसका भी बेटा गूँगा होता तो वह भी ऐसे ही दुःख उठाता। वह कुछ भी नहीं सोच सकी। एक बार फिर गूंगे के प्रति हृदय में ममता भर आई। वह लौटकर चूल्हे पर जा बैठी, जिसमें अन्दर आग थी, लेकिन उसी आग से वह सब पक रहा था जिससे सबसे भयानक आग बुझती है, पेट की आग, जिसके कारण आदमी गुलाम हो जाता है। उसे अनुभव हुआ कि गूंगे में बसंता से कहीं अधिक शारीरिक बल था। कभी भी गूंगे की भाँति शक्ति से बसंता ने उसका हाथ नहीं पकड़ा था। लेकिन फिर भी गूंगे ने अपना उठा हाथ बसंता पर नहीं चलाया।

रोटी जल रही थी। झट से पलट दी। वह पक रही थी, इसी से बसन्ता, बसन्ता है···गूंगा गूंगा है···

चमेली को विस्मय हुआ। गूंगा शायद यह समझता है कि बसन्ता मालिक का बेटा है, उस पर वह हाथ नहीं चला सकता। मन-ही-मन थोड़ा विक्षोभ भी हुआ, किन्तु पुत्र की ममता ने इस विषय पर चादर डाल दी। और फिर याद आया, उसने उसका हाथ पकड़ा था। शायद इसीलिए कि उसे बसन्ता को दण्ड देना ही चाहिए, यह उसको अधिकार है···

किन्तु वह तब समझ नहीं सकी, और उसने सुना गूंगा कभी-कभी कराह उठता था। चमेली उठकर बाहर आई। कुछ सोचकर रसोई में लौट आई और रात की बासी रोटी लेकर निकली।

गूंगे!' उसने पुकारा।

कान के न जाने किस पर्दे में कोई चेतना है कि गूंगा उसकी आवाज को कभी अनसुना नहीं कर सकता; वह आया। उसकी आँखों में पानी भरा था। जैसे उनमें एक शिकायत थी, पक्षपात के प्रति तिरस्कार था। चमेली को लगा कि लड़का बहुत तेज है। बरबस ही उसके होठों पर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मुस्कान छा गयी। कहा—ले खाले। और हाथ बढ़ा दिया।

गूंगा इस स्वर की, इस सबकी उपेक्षा नहीं कर सकता। वह हँस पड़ा। अगर उसका रोना एक अजीब दर्दनाक आवाज थी तो यह हँसना और कुछ नहीं—एक भयानक गुर्राहट-सी चमेली के कानों में बज उठी। उस अमानवीय स्वर को सुनकर वह भीतर ही भीतर काँप उठी। यह उसने क्या किया था? उसने एक पशु पाला था, जिसके हृदय में मनुष्यों की-सी वेदना थी।

घृणा से विक्षुब्ध होकर चमेली ने कहा—क्यों रे तूने चोरी की है?

गूंगा चुप हो गया। उसने अपना सिर झुका लिया। चमेली एक बार क्रोध से काँप उठी। देर तक उसे घूरती रही। सोचा—मारने से यह ठीक नहीं हो सकता। अपराध को स्वीकार कराके दण्ड न देना ही शायद कुछ असर करे। और फिर कौन मेरा अपना है। रहना हो तो ठीक से रहे, नहीं तो फिर जाकर सड़क पर कुत्तों की तरह जूठन पर जिन्दगी बिताए, दर-दर अपमानित और लांछित।.....

आगे बढ़कर गूंगे का हाथ पकड़ लिया और द्वार की ओर इशारा करके दिखाया—निकल जा।

गूंगा जैसे समझा नहीं। बड़ी-बड़ी आँखों को फाड़े देखता रहा। कुछ कहने को शायद एक बार होठ भी खुले किन्तु कोई स्वर नहीं निकला। चमेली वैसे ही कठोर बनी रही। अबके मुँह से भी साथ-साथ—"जाओ निकल जाओ। ढंग से काम नहीं करना है तो तुम्हारा यहाँ कोई काम नहीं। नौकर की तरह रहना है, रहो, नहीं बाहर जाओ। यहाँ तुम्हारे नखरे कोई नहीं उठा सकता। किसी को भी इतनी फुर्सत नहीं है। समझे?"

और फिर चमेली आवेश में आकर चिल्ला उठी—"मक्कार, बदमाश। पहले कहता था भीख नहीं माँगता है। रोज़-रोज़ भाग जाता है, पत्ते चाटने की आदत पड़ गयी है। कुत्ते की दुम क्या कभी सीधी होगी? नहीं। नहीं रखना है हमें, जा, तू इसी वक्त निकल जा.....।"

किन्तु वह क्षोभ, वह क्रोध, सब उसके सामने निष्फल हो गए, जैसे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मन्दिर की मूर्ति कोई उत्तर नहीं देती, वैसे ही उसने कुछ नहीं कहा। केवल इतना समझ सका कि मालकिन नाराज है और निकल जाने को कह रही है। इसी पर उसे अचरज और अविश्वास हो रहा है।

चमेली अपने आप लज्जित हो गई। कैसी मूर्खा है वह ? बहरे से जाने क्या-क्या कह रही थी ? वह क्या कुछ सुनता है।

हाथ पकड़ कर जोर से एक झटका दिया और उसे दरवाजे के बाहर धकेल कर निकाल दिया। गूंगा धीरे-धीरे चला गया। चमेली देखती रही।

करीब घण्टे भर बाद शकुन्तला और बसन्ता दोनों चिल्ला उठे—अम्मा ! अम्मा !!

"क्या है ?" चमेली ने ऊपर से ही पूछा।

"गूंगा"·····बसन्ता ने कहा। किन्तु कहने से पहले ही नीचे उतर कर देखा—गूंगा खून से भीग रहा था। उसका सिर फट गया था। वह सड़क के लड़कों से पिटकर आया था, क्योंकि गूंगा होने के नाते वह उनसे दबना नहीं चाहता था·····दरवाजे की दहलीज पर सिर रख वह कुत्ते की तरह चिल्ला रहा था।

और चमेली चुपचाप देखती रही, देखती रही कि इस मूक अवसाद में युगों का हाहाकार भर कर गूंज रहा है।

और ये गूंगे···अनेक-अनेक हो, संसार में भिन्न-भिन्न रूपों में छा गए हैं। जो कहना चाहते हैं, पर कह नहीं पाते। जिनके हृदय की प्रति-हिंसा न्याय और अन्याय को परख कर भी अत्याचार को चुनौती नहीं दे सकती, क्योंकि बोलने के लिए स्वर होकर भी, स्वर में अर्थ नहीं है, क्योंकि वे असमर्थ हैं।

और चमेली सोचती है, आज दिन ऐसा कौन है जो गूंगा नहीं है। किसका हृदय समाज, राष्ट्र, धर्म और व्यक्ति के प्रति विद्वेष से, घृणा से नहीं छटपटाता, किन्तु फिर भी कृत्रिम सुख की छलना अपने जालों में उसे नहीं फाँस देती—क्योंकि वह स्नेह चाहता है। समानता चाहता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री अमृतराय

अमृतराय जी अमर कथाकार स्वर्गीय प्रेमचन्दजी के द्वितीय पुत्र हैं। उनका जन्म पंद्रह अगस्त सन् १९२१ ई० को हुआ। सन् '४२ में आपने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से इंगलिश में एम०ए० किया। तभा से वे 'हंस' के सम्पादक हो गए। यह क्रम सन् १९५२ ई० तक चलता रहा। जन-सेवा की ज्वलन्त भावना रखने के कारण आपको कारागार-प्रवास भी करना पड़ा। इधर ग्यारह वर्षों से आप इलाहाबाद में रहकर स्वतन्त्र रूप से लेखन-कार्य कर रहे हैं।

अमृतबाबू की व्यंजना बड़ी तीखी और मर्मभेदिनी होती है। आपकी भाषा की प्रखरता प्रसिद्ध है। उपन्यास, कहानी-संग्रह, समीक्षा-ग्रन्थ और यात्रा-संस्मरण के अतिरिक्त उनके कई अनूदित ग्रन्थ भी हैं। सब मिलाकर लगभग दो दर्जन ग्रन्थ वे अब तक लिख चुके हैं। 'कलम का सिपाही' नाम से अपने पूज्य पिता का एक वृहदाकार प्रामाणिक जीवन वृत्तान्त लिखकर आपने एक बड़े अभाव की पूर्ति की है, कहना चाहिए कि हिन्दी-साहित्य का गौरव बढ़ाया है। इसके लिए आपने छानबीन तो की ही, भ्रमण भी बहुत किया। जहाँ-जहाँ वे रहे, गए, ठहरे और जिन-जिन व्यक्तियों के साथ उनके सम्बन्ध रहे, वहाँ-वहाँ वे गए, ठहरे, उन व्यक्तियों से मिले, उनसे वार्तालाप किया। वे स्थल देखे जिनसे उनको प्रीति थी। वे पत्र देखे जो प्रेमचन्दजी ने उन्हें भेजे थे। उस काल की परिस्थितियों पर विचार किया जो उन पत्रों से उभर उठी हैं। इस प्रकार यह एक ऐसा महत्त्वपूर्ण कार्य आपने किया है, युग-युग तक जिसका महत्त्व अचल स्थिर बना रहेगा।

'बीज' अमृतराय जी का बहुचर्चित उपन्यास है। 'गीली मिट्टी' कथा संग्रह की कुछ कहानियाँ जहाँ नई दिशा की ओर संकेत करती हैं, वहाँ नई विचारभूमि भी देती हैं। उनवा भाव-बोध अपना है और कई

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्थलों पर उन्होंने नए जीवन मूल्यों को सतर्कता से उभारने की चेष्टा की है।

जहाँ तक मौलिक लेखन का सम्बन्ध है, अमृतरायजी का क्षेत्र पूज्य पिता के चरण-चिह्नों से सर्वथा पृथक् रहा है। कहानी-लेखन के क्षेत्र में उनके कतिपय ऐसे प्रयोग हैं, जिनकी चर्चा सदा होती रहेगी।

'गीली मिट्टी' इनमें एक सफल रचना है। एक दिन ऐसा प्रतीत होता है, दरवाजे पर कोई आ गया है। द्वार खोलने पर सहसा प्रश्न हो उठता है—'कौन हो तुम और यहाँ आ कैसे गए ?' प्रश्न स्वाभाविक होते हुए भी कुछ ऐसा रूखा है कि उस व्यक्ति की जीर्ण-जर्जर दीन-हीन दशा देखकर प्रश्नकर्त्ता स्वयं विचार में पड़ जाता है। कहानी इसी स्थल से प्रारम्भ होती है। मानवी संवेदन धीरे-धीरे कोमल होते जाते हैं; यहाँ तक कि अन्त में गृहस्वामी उसे एक कुर्ता, पाजामा और साथ में एक रुपया भी दे देते हैं। फिर भी वह व्यक्ति कुछ कहता नहीं। जब आया था तब भी कुछ नहीं बोला था, जब कुछ पाकर चला गया, तब भी नहीं बोला। अमृतबाबू ने ऐसे एक विलक्षण व्यक्ति की मर्मव्यथा की अभिव्यंजना बड़ी सहृदयता और मनोवैज्ञानिक ढंग से की है।

कहानी-संकेत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गीली मिट्टी

नींद में ही जैसे मैंने माया की आवाज़ सुनी और चौंककर मेरी आँख खुल गई। बगल के पलंग पर नजर गई, माया वहाँ नहीं थी। आज इतने सवेरे माया कैसे उठ गई, कुछ बात समझ में नहीं आई।

आवाज़ दरवाज़े पर से आई थी। मैं हड़बड़ाकर उठा और करीब पहुँचा, तो क्या देखता हूँ कि माया दरवाज़ा खोले खड़ी है और बाहर के बरामदे में एक दुबला काला आदमी, मंझोले कद का, सिर्फ एक जरा-सी लुगड़ी लपेटे, बाकी सब धड़ और टाँगें नंगी, उकड़ूँ बैठा है। माया दरवाजा खोलने आई तो आज सबसे पहले इसी आदमी के दर्शन हुए। मैंने भी देखा और मुझे भी गुस्सा आया कि यह मरदूद यहाँ कैसे आ मरा। मैंने भी डपटकर पूछा—"कौन हो तुम ? यहाँ कैसे आए ?"

दोनों ही सवालों का जवाब आसान था—मैं एक गरीब भिखमंगा हूं, जिसके सर पर छप्पर नहीं है। या—जी नहीं, शिकरम नहीं ली, यों चलकर आ गया। मगर उसने कोई जवाब नहीं दिया, जो कि मुझे और भी खला और मैंने आवाज में और भी तेजी लाते हुए कहा—"बोलता क्यों नहीं ? बहरा है ?"

फिर भी कोई जवाब नहीं। जवाब हो भी क्या सकता था, अगर वह सचमुच बहरा था। मगर कौन कह सकता है कि वह बहरा था ही, आजकल इस तरह के बने हुए आदमी·····

लेकिन वाक्य पूरा करने के पहले ही मुझे लगा कि यह मैं गलत बात कह रहा हूँ। बने हुए आदमी दिन के वक्त भेष बनाकर भीख माँगा करते हैं—इस तरह रात को किसी के बरामदे में आकर सो नहीं जाते, जाड़े की ऐसी रात में। और, मेरा ध्यान उसके ओढ़ने-बिछौने पर गया। बिछौना निखहरी जमीन और ओढ़ना टाट का एक घिसा हुआ पौन गज का टुकड़ा (और हाँ एक चिक भी, जो उसने हमारे दरवाजे से उतारकर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अपने ऊपर डाल ली थी)। उस वक्त, जबकि एक गद्दे और एक लिहाफ से भी हमारा काम ठीक नहीं चलता—जी होता है कि और कुछ ओढ़ लें—कैसी कटी होगी इसकी रात ? नींद तो क्या आई होगी ! दाँत बजते रहे होंगे, जाँघों में हाथ डाले राम का नाम जपता पड़ा रहा होगा, या शायद टहल-टहलकर ही रात काटी हो। किसने देखा है ? और किसको दिखाने के लिये यह शक्ल बनाई है ? इन ठंडी सूनी दीवारों को ? बने हुए आदमी ! यह क्या बना हुआ आदमी है ? और अपनी बात खुद मुझे सालने लगी।

मगर उस आदमी को इस समय की मेरी आत्मपीड़ा से भी उतना ही कम प्रयोजन था, जितना दो मिनट पहले की कठोरता से। ठिठुरते हुए हाथों से चिक को दरवाजे पर टाँगने के बाद वह अब कच्चे पपीते के बीज, जो तमाम बिखरे हुए थे, बटोरकर एक जगह कर रहा था। लगता है, उसने हमारे ही पेड़ से एक कच्चा पपीता तोड़ कर उससे अपनी भूख बुझाने की कोशिश की थी। लेकिन अभी शायद वह पूरी तरह जानवर नहीं बन पाया था, इसलिए पूरा पपीता नहीं खा सका था। आधा टुकड़ा किसी तरह नोच-नाच कर वह खा गया था और आधा ज्यों-का-त्यों पड़ा था। पपीते के बीज सब इधर-उधर छिटके हुए थे, जिन्हें अब वह बटोर रहा था।

पता नहीं, क्यों उसे इस बात का खयाल आया। वह यह भी सोच सकता था कि जिसका घर है, वह सफाई करवा ही लेगा। मगर नहीं, वह जानवर नहीं है कि सफाई का उसे कोई खयाल न हो। जहाँ उसने रात गुजारी है—जहाँ से अब वह जा रहा है—उस जगह को गंदा करके वह नहीं जाना चाहता। मैं नहीं कह सकता कि उसके दिल में क्या बात थी। हो सकता है, बस इतनी ही बात रही हो कि यह सब गन्दगी साफ कर दो, नहीं तो साहब नाराज होंगे और शायद अपने नौकर को बुलाकर दस-पाँच लात-घूँसे लगवा देंगे। जो भी बात उसके दिल में आई हो और जो भी उसके पहले के तजुर्बे रहे हों, मैं कुछ भी नहीं जानता। मैंने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बस इतना देखा कि वह जाड़े के मारे ठिठुरती हुई उंगलियों से जैसे-तैसे गन्दगी इकट्ठी कर रहा है।

पता नहीं, कैसे-कैसे लोगों से उसका पाला पड़ता होगा, क्या-क्या उस पर बीतती होगी, दुनिया को यह कैसा समझता होगा! आज इन्सान जिस तरह तरक्की करता हुआ हजारों साल पीछे पहुँच गया है, जबकि वह पहाड़ की गुफाओं और जंगलों में रहता था और इसी तरह नंगा घूमता था, और शायद इसी तरह कच्चे पपीतों पर बसर करता था। इस तरक्की में इस आदमी का क्या हाथ है? और, मुझे पता नहीं क्यों, उस पर बेहद तरस आया। इस बात पर कि दुनिया में उसका कोई न था, उसके पास कहीं अपनी एक नन्ही-सी कोठरी भी न थी और बस, इसी आसमान के छप्पर के नीचे उसकी रातें बीतती थीं, और यह कि इस ठिठुरती हुई सर्दी में उसके तन पर बस एक लुगड़ी थी और वह गाय-बैल की तरह कच्चा पपीता खा रहा था।···मगर इन सब बातों से ज्यादा इस बात पर कि उसने एक शब्द भी नहीं कहा। यह नहीं कि वह गीता का प्रवचन देने लग जाता, या आल्हा सुनाने लग जाता, मगर फिर भी कुछ तो वह कह ही सकता था। वह मेरे सामने गिड़गिड़ा सकता था, रो सकता था। मगर उसने तो कुछ भी नहीं किया, बस उठकर बैठ गया और चलने की तैयारी में जगह की सफाई करने लगा। उसने न कोई शिकायत की और न कोई फरियाद। कैसा अजीब आदमी है! इसने हमसे अगर खाना खिलाने की तलब की होती, तो क्या हम उसे खाना न खिला सकते थे, या कहा होता, तो तन ढाँकने के लिये दो-एक कपड़े न दे सकते थे? मगर अब शायद उसे इन्सान से इतनी भी उम्मीद बाकी नहीं रही थी। अब तो शायद वह सिर्फ इसलिए जी रहा है कि मौत नहीं आती थी और अगर किसी तरह न आई, तो एक रोज खुद जाकर हाथ पकड़ उसे खींच लाएगा और फिर उसी घिसे हुए टाट के कफन में लपेटकर कोई मेहतर उसे घसीटकर कहीं फेंक आएगा।

कहानी कहने में जितनी देर लगती है, वाकये में उतनी देर नहीं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लगती। अब उसने सब बीज इकट्ठे कर लिए थे और उन्हें फेंकने बाहर जा रहा था। इस वक्त मैंने उसे बतलाना जरूरी समझा कि इस तरह किसी के घर में घुस आना ठीक नहीं होता। अब फिर कभी मत आना। मगर अपने ही कानों में मुझे अपने ये शब्द खोखले सुनाई पड़े।

वह लौटा और अपना टाट उठाकर चला गया। मैं हक्का-बक्का उसे देखता रहा। मैं कुछ समझ नहीं पा रहा था कि मुझे क्या करना चाहिए। तब तक वह काफी दूर चला गया था। मैंने माया से कहा—"एक कुर्ता-पाजामा तो दे देते उसे··· और हाँ, एक रुपया भी लेती आना!"

और तब, मैंने भोर के धुंधलके में उस आदमी को आवाज दी—"ओ आदमी! ओ आदमी!" क्योंकि उसका नाम मुझे नहीं मालूम था।

वह लौट पड़ा। माया ने लाकर एक कुर्ता, पाजामा और एक रुपया मुझे दिया और मैंने बाहर निकलकर दोनों चीजें उसके हाथ में दे दीं। दोनों कपड़े और रुपया लेकर भी उसने कुछ नहीं कहा, कुछ भी नहीं! वह जैसे आया था, वैसा ही चला गया। मैं कुछ देर तक उसे देखता रहा और फिर, पता नहीं क्यों, मुझे बहुत जोर से रुलाई छूटी और मुझे अपनी आँखें नम होती मालूम हुईं और फिर अच्छी तरह आँसू बहने लगे। मुझे खुद अपनी इस हालत पर बड़ी हैरानी थी, क्योंकि मैं किसी मानी में बहुत नर्म दिल का आदमी नहीं हूँ। मगर फिर भी, हर बार जैसे एक लहर-सी उठती थी, जो आकर मुझसे टकराती थी और मुझे भिगोकर चली जाती थी। माया तब तक भीतर दरवाजे पर ही खड़ी थी और मैं नहीं चाहता था कि वह या कोई भी मेरे इन बच-काने आँसूओं को देखे। मैं बाहर सड़क पर निकल गया और घूमने लगा। मगर मैं घूम नहीं रहा था—रो रहा था, जैसे रह-रहकर कोई मेरे दिल को मसोस रहा हो।

माया जाने को हुई, तो उसने पुकार कर कहा—"भीतर चलो न, वहाँ क्या कर रहे हो?"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अपनी आवाज की भर्राहट को छिपाने की कोशिश करते हुए मैंने कहा—"अब नींद थोड़े ही आएगी, अच्छी तरह सवेरा हो गया है।"

और, फिर कोई १५ मिनट तक मैं वहीं घूम-घूमकर रोता रहा। शायद बरसों बाद मैं इस तरह रोया था। मुझे अपने ऊपर कुछ हैरानी भी मालूम हो रही थी, कुछ शर्म भी आ रही थी और यह सोचकर कुछ खुशी भी हो रही थी कि मेरा दिल अभी मरा नहीं है। मैं नहीं जानता, हो सकता है, इसलिए मैंने अपने आंसुओं को कुछ ढील भी दे रखी हो। मगर इतना मैं जानता हूँ कि वे बेईमान आँसू न थे—शायद उस आदमी के दिल की घुटन थी, जो इस वक्त मेरे आँसुओं की शक्ल में बाहर आ रही थी; क्योंकि मुझे लगता है कि जैसे कभी आग के एक गोले से छिटक कर यह सारी सृष्टि बनी थी, वैसे ही किसी कुम्हार ने गीली मिट्टी के एक ही गोले से सब इन्सानों के दिल भी बनाए थे और उनका साज कुछ इस तरह मिलाकर रख दिया था कि एक का दर्द दूसरे के सीने में जाकर बजने लगता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री राजेन्द्र शर्मा

शर्मा जी का जन्म दिल्ली में ८ अक्तूबर सन् १९२३ को हुआ। आप के पिता पंडित ब्रजेन्द्र नारायण जी दिल्ली के एक प्रतिष्ठित नागरिक हैं। सरकारी नौकरी से अवकाश प्राप्त करके आजकल वे कोटा में रहते हैं।

शर्मा जी जन्म-जात पत्रकार, कहानी-लेखक, कवि और उपन्यासकार हैं। आपके कथा-लेखन में आज जिस ज्वलन्त प्रतिभा का परिचय मिलता है, उसकी झलक मुझे सन् '४५ ई० में ही मिल गयी थी, जब मैं बम्बई में था। पत्र निकालने की प्रबल इच्छा आपके मन में बचपन से ही जम गयी थी, जब आप इण्टर में पढ़ते थे। तभी फीस देने को मिली हुई निधि से आपने 'रश्मि' मासिक पत्र के लिए कागज खरीदा था (सन् १९४१)। 'धर्मयुग' में जो सुगम वर्ग पहेली निकला करती थी, उसके आप प्रधान सम्पादक थे। जब यह पहेली बन्द हो गयी; तब आप 'धर्मयुग' के संयुक्त सम्पादक हो गए। दिल्ली के 'समाज' मासिक पत्र का भी आपने सम्पादन किया। फिर आप कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले 'सुप्रभात' का सम्पादन करते रहे। उसके बाद आपने दिल्ली आकर स्वयं 'मधुकर' नामक मासिक पत्र निकाला। हजारों रुपये का घाटा सहकर भी आप उसे साल भर तक चलाते रहे।

सबसे पहले कथा-संग्रह 'पत्ते हरे-पीले, (१९४५) का हिन्दी संसार में अच्छा स्वागत हुआ। इस संकलन की कई कहानियाँ मैंने पढ़ी हैं। और मेरी मान्यता है कि वे प्रथम श्रेणी की हैं। उसके बाद तो आपके 'परिधि', 'मानस हंस', और 'पाँच घड़े मोती' आदि कथा-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। उपन्यासों के नाम है 'हेमा', 'कायर', 'मणिमय कुण्डल,' तथा 'अंधे मोड़'। इनमें से 'अन्धे मोड़' पर आपको उत्तर प्रदेशीय सरकार से पुरस्कार भी मिला था। इसके अतिरिक्त प्रौढ़ साहित्य की 'सतलुज की कहानी', 'सागर का साम्राज्य' तथा 'जय भारत विशाल' पर भी पुरस्कार मिल चुका है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आपकी कई कहानियों का अनुवाद गुजराती में भी हो चुका है। 'सागर सेतु' आपकी एक आध्यात्मिक कृति है। और 'ज्ञान सतसई' संतसइयों की शृंखला में एक अनुपम कृति है, जिसमें सात सौ दोहों में वेदान्त की सारी प्रक्रिया सरल भाषा में समझाई गयी है। सम्पादित तथा अनुवादित कृतियाँ मिलाकर आपकी लगभग दर्जन कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं।

शर्मा जी का व्यक्तित्व प्रभावशाली है। वे बात के धनी, परम आस्थावान एवम् संस्कारी व्यक्ति हैं। उनकी शैली में कला है, भाषा में प्राण। नई पीढ़ी के जिन कथाकारों को इतिहास में स्थान मिलना चाहिए, मेरी धारणा है, शर्मा जी उनमें प्रथम हैं।

कहानी-संकेत

इस कहानी में शर्मा जी ने गाईतोंडे की निस्संतान पत्नी जना के जीवन का एक श्रद्धा-भक्तिपरक जीवन-चित्र प्रस्तुत किया है। उसका पति गाईतोंडे टाइफाइड से आक्रान्त हो जाता है। रात की पाली में वह बेचारी एक मिल में खड़ी-खड़ी तकुवे पर काम करती है और दिनभर रुग्ण पति की सेवा-शुश्रूषा में लगी रहती है। कुछ दिनों के बाद उसके पति का देहान्त हो जाता है। महाराष्ट्रीय समाज में गणेश-पूजन का महोत्सव बड़ी धूमधाम के साथ मनाया जाता है। देवियाँ भी उसमें भाग लेती हैं। पर आस्थातरंगों में डूबी हुई जना गणेष-पूजन के अन्तिम दिन, विसर्जन के अवसर पर, 'गणपति बापा मौरिया' गाती-गाती गाने वाली कीर्तनकारी मण्डली में सम्मिलित होकर स्वयं भी उछल-उछलकर नाचने लगती है। उसके भाल पर सिंदूर की चौड़ी-सी बिन्दी लगी है और हाथ में मंजीरे हैं। ईश्वरोपासना और भगवद्भक्ति की कहानियाँ बहुत लिखी जा चुकी हैं, पर इस कहानी के एक पात्र डा० तलवलकर भी हैं, जो भगवद्भक्ति की रूढ़िग्रस्त अन्ध परम्पराओं पर बिल्कुल आस्था नहीं रखते। पर इस समारोह के अन्दर 'जना' का श्रद्धाविह्वल रूप देखकर उनका हृदय भी मानवीय संवेदन से द्रवित हो उठता है। अपने मित्र मावलंकार के हाथ में कैलशियम सडोज़' की शीशी दे कर वे बोल उठते हैं—"यह आप मेरी ओर से

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जना को दे दीजियेगा। वह गाईतोंडे के पुत्र की माँ बनने वाली है।" कितने परिताप का विषय है कि जना जैसी तपस्विनी आस्थावान् नारियाँ हमारे देश में दिनानुदिन कम होती जा रही हैं। और ऐसे लेखकों का तो सर्वथा अभाव है, जो ऐसे चरित्रों को प्रकाश में लाते रहें।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जना

डा० तलवलकर का नाम तो आपने सुना है न, वही पार्तुगीज़ चर्च के पास जिनका क्लीनिक है। बहुत होशियार डाक्टर हैं, अक्सर मेरी वहाँ बैठक रहती है, खास तौर पर उस वक्त जबकि दोपहर के बारह बज चुके होते हैं, और मरीजों का ताँता टूट जाता है। पिछले आठ दस वर्ष से वह मेरे फेमली-डाक्टर हैं, और इस नाते या उनके मधुर वार्तालाप के स्वभाव के कारण कह लीजिए, जब भी मैं दुकान पर कुछ सोफता पाता हूँ तो उनके पास पहुँच जाता हूँ, मेरी दुकान नजदीक ही है। उस दिन बात कुछ ऐसी हुई कि 'कामार पुस्तकालय' के मि० पाँचपोर भी वहाँ आ गये और बात का सिलसिला तरह-तरह की पेचीदा बीमारियों से हटकर शिक्षा पर आ गया। लेकिन, थोड़ी देर बाद मि० मावलंकर वहां आ उपस्थित हुए और पाँचपोर चले गए तो विषय बिलकुल ही बदल गया। यद्यपि डा० तलवलकर की बात इतनी सरल होती थी कि हम लोग उनको ही सुनते थे, पर उस दिन मावलंकर के आने पर ऐसा लगा कि प्रभावित करने की शक्ति उनमें कम नहीं है। मि० मावलंकर आधुनिक विचारधारा को पसन्द करते थे, फिर भी उनमें धर्म के प्रति बड़ी आस्था थी और सम्भवत इसीलिए कि प्राचीन संस्कृत साहित्य का उनका अध्ययन गहरा था। डा० तलवलकर से वह अक्सर यह कहते नहीं चूकते थे कि, आपका विज्ञान चाहे कितनी ही उन्नति कर ले, पर हमारी धार्मिक आस्थाओं में कोई क्रांतिकारी परिवर्तन आने वाला नहीं है। डा० तलवलकर अन्तिम रोगी का नुस्खा लिख रहे थे, इसलिए चुप रहे। लेकिन मावलंकर की बात सुनकर उन्होंने अपने रोगी की ओर एक बार गर्दन उठा कर देखा। जब रोगी नुस्खा लेकर दुकान के भीतरी कक्ष में कम्पाउण्डर की विंडो के पास चला गया, तो डाक्टर ने किंचित् मुस्करा कर उसकी ओर देखा। मावलंकर की ओर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

देखते-देखते उनकी आँखों में एक रहस्य जैसे छुप गया था, पर मुस्कान ज्यों-की-त्यों थी और उनमें से डाक्टर के स्वर फूट निकले, "देखिये जोशी जी, जो रोगी मुझसे नुस्खा लिखा कर ले गया है, इसके बारे में हमारे मावलंकर साहब की बात सही बैठ सकती है, लेकिन···"

"यह कौन है ?" मैंने बीच में ही डाक्टर को टोक कर पूछा, "जान पड़ता है, जैसे मैंने इसे कहीं देखा है।"

"हो सकता है। आपकी दूकान के पीछे जो पुरानी चाल है"—

"वही जिसमें कुछ मजदूर रहते हैं।"

"हाँ हाँ। यह औरत उसी में रहती है। असल में यह स्वयं बीमार नहीं है। बीमार तो इसका पति है। और यह बेचारी उसी की दवा लेने आती है। आप जानते ही होंगे वह गाइतोंडे जो एक बार आपकी दुकान के सामने मोटर से टकरा गया था"—

"क्या उसी की पत्नी है ?" मैंने उत्सुकता से पूछा—"लेकिन मोटर दुर्घटना के बाद तो वह ठीक भी हो गया था। बहुत ही सरल प्रकृति का व्यक्ति है।"

मि० मावलंकर भी इस गाइतोंडे दम्पति को जानते थे और यह बात अच्छी तरह मेरी समझ में आ गयी क्योंकि मि० मावलंकर ने धार्मिक आस्थाओं वाली बात छेड़ दी।

डाक्टर बोले—"इस बेचारी का पति टाइफाइड में बीमार है, और उसका एक फेफड़ा भी काफी खराब हो चुका है। ब्लड प्रैशर कभी-कभी एकदम गिर जाता है।"

"तब तो इस बेचारी के यहाँ खाने का भी संकट होगा।" मेरी उत्सुकता को पीड़ा दबा रही थी, "वह 'इंदु' मिल में तकुवे पर काम करता था न !"

"हाँ !" डाक्टर बोले—"इसी नाते तो यह हैल्थस्कीम में मेरा रोगी है। मिल वालों ने इतनी सहानुभूति तो दिखाई है कि इसे एक महीने की छुट्टी सवेतन मिल गई है। इसकी पत्नी को भी रात पाली में काम दे दिया है।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"यह तो ठीक है", मावलंकर बोले, 'लेकिन उसकी जो करुण कथा है, वह आप जानते ही हैं ? सुनिये, यह बिचारी बहुत ही भोली औरत है।" मावलंकर का स्वर एकदम धीमा था और मेज पर कुछ आगे को झुक आये थे। मैंने देखा कि गाइतोंडे की पत्नी जना, तब दवा लेकर उनके पीछे से गुजर रही थी। एक निगाह में मैंने देखा उसका सूखा साँवला चेहरा, और गहरी नीली साड़ी लिपटी हुई उसकी सूखी लकड़ी देह। नीली साड़ी गहरे रंग की होते हुए भी मैली दिखती थी। पीछे सिर के निकट उसमें पेबन्द लगे हुए थे। पाँव नंगे, जिनकी विवाइयाँ फट रही थीं। सचमुच ऐसा लगा जैसे उसका पति नहीं; बल्कि वह ही किसी संक्रामक रोग से ग्रसित हो।

मावलंकर ने अपना क्रम जारी रखते हुए कहा—"रात तो बेचारी खड़ी-खड़ी तकुवे पर काम करती है और दिन भर पति की सेवा-शुश्रुषा में लगी रहती है। भगवान की इतनी ही दया क्या कम है कि अभी यह निःसंतान है।"

"मुझे लगता है जल्दी ही माँ बनने वाली है।" मैंने कहा।

"हाँ", डाक्टर ने मेरी बात का समर्थन किया।

"यह और भी कोढ़ में खाज जैसी बात है। अपने छज्जे पर जब मैं कभी आ जाता हूँ तो सामने इनके कमरे पर दृष्टि पड़ जाती है। कभी देखता हूँ, पति को खाट पर थोड़ा सहारा देकर बैठा देती है और सरकारी केन्द्रों से मिलने वाले पाउडर के दूध को घोल कर उसे पिलाती है। बाजरा या ज्वार, और वह भी कभी-कभी नहीं मिलता—यही इनका भोजन है, और डाक्टर मैं जानता हूँ कि आपकी दवाओं पर एक रोगी को कितना फल और दूध पीना चाहिए। बताइए यह सब कहाँ से ला सकती है ?" मावलंकर का स्वर कुछ गीला हो गया था और मैं उनकी बातें सुनकर द्रवित हो आया था। तभी कम्पाउण्डर ने आकर धीरे से मुझसे कहा—"चलिये इंजेक्शन लगा दूं।"

मैं उसकी बात सुनकर हँस पड़ा। मैंने कहा—"माफ कीजिये, मेरा कोर्स अब पूरा हो गया।" डाक्टर भी हँस पड़े, पर मावलंकर खुल कर नहीं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हँस सके। कम्पाउण्डर के भीतर जाते ही उन्होंने अपनी बात जारी रखी। बोले—"आपकी पत्नी ही क्या, चाल की सभी स्त्रियाँ इसकी सूरत देखती हैं तो जैसे एक दुःख की छाया उन सबको दबोच लेती है। जिस दिन ज्वर के वेग से पीड़ित होकर यह आपके पास आया था, वास्तव में इसके ज्वर को सात दिन हो चुके थे। इसकी पत्नी हमारे यहाँ से तुलसी दल ले जाती थी, और काढ़ा करके गाइतोंडे को पिलाती थी, लेकिन बुखार नहीं हटा, या यों कहिये कि पेट के लिए बराबर कशमकश करते रहने की वजह से बुखार से वह हार गया। जब वह आपके पास दवा लेने आया था तब उसकी पत्नी चौथे माले पर रहने वाले पं० रामजोशी के पास गई थी।"

"क्या वही रामजोशी जो ज्योतिषी हैं ?"—मैंने पूछा।

—"हाँ", मावलंकर ने कहा—"रामजोशी का गणित गलत नहीं होता। मैंने भी कई बार उसे आजमाया है और उन्होंने इसे बतलाया था कि आने वाले सप्ताह में गणेशपूजा के दिनों में यदि तू कार्तिकस्वामी की तारकासुर को मारने वाली मुद्रा में मूर्ति बनवा सके और उसका पूरी श्रद्धा के साथ पूजन कर सके, तो तेरे पति पर आया हुआ संकट निश्चय ही टल सकता है।"

"क्या ?"

"सुनिये बताता हूँ। रात पाली में काम करने के बाद, यह जो बारह चौदह आने पैसे लाती थी उसी में से अधिकांश को इसने बचाया और जोड़ा अपना पेट काटकर जो कुछ बन पड़ा वह पति के लिए बराबर कर रही है और वह कार्तिकस्वामी का पूजन भी घंटों बैठकर करती रहती है।"

डाक्टर जोर से हँस पड़े—"आप समझते हैं कि इस मूर्ति पूजा से गाइतोंडे के फेफड़े ठीक हो जाएँगे ?" मैं भी किंचित् मुस्कराया, लेकिन मावलंकर और गम्भीर हो गये। बोले—"डाक्टर, तुम नहीं जानते, पुरुषार्थ से प्रारब्ध बदला जा सकता है।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"लेकिन बैठे रहकर मूर्ति पूजा करना क्या पुरुषार्थ है ?"

"हाँ, यह भी पुरुषार्थ का एक रूप है। यह ऐसा पुरुषार्थ है, जिससे आत्मबल की शक्ति शनैः-शनैः आनन्दित हो जाती है और बड़े से बड़े संकट टालने की शक्ति मनुष्य में आ जाती है।"

मावलंकर अपनी बात पूरी नहीं कर पाये थे कि टेलीफोन की घंटी बजी। डा० तलवलकर ने सुना और उत्तर दिया—"क्या अभी आना होगा ?" दूसरी ओर से फिर कुछ कहा गया और इस बार डाक्टर ने "अच्छा दस मिनट में पहुँच जाऊँगा।" कहकर टेलीफोन रख दिया और तब वह हम दोनों से बोले कि "अभी सेठ मंगलदास के यहाँ जाना है। अर्जेण्ट केस है—कम्पाउण्डर बैग तैयार करो।" कुछ दिन बाद गाइतोंडे की स्थिति बहुत खराब हो गई ! रोग ने "मृत की छाया" की संज्ञा ली थी और मैं देख रहा था कि डाक्टर तलवलकर जितनी दवायें बदलते हैं, रोग शांत होने की बजाय और उग्र होता जा रहा है। जना ने रात पाली में जाना बन्द कर दिया था और पड़ोसियों की सहानुभूति से ही उसकी जीवन नौका का पाल अभी हवा ले रहा था।

उस दिन जब मैं डा० तलवलकर के पास से आया तो गाइतोंडे की बात चल पड़ी और मैंने कहा कि जान पड़ता है, वह अपने आने वाले बालक का मुँह नहीं देख पायगा।

डाक्टर चुप रहे और मैंने उनके चेहरे पर निराशा की कालिमा को इतनी ही जल्दी आते-जाते देखा जैसे कि बादल की छाया आकर चली जाती है।

डाक्टर ने कहा—"हो सकता है।" और हुआ भी ऐसा ही। मैं जब घर लौटा तो गाइतोंडे की पत्नी के करुण विलाप को सुनकर मेरा हृदय भी फट चला। वह एकदम असहाय रह गई थी। लेकिन गाइतोंडे के चल बसने के बाद भी मैंने देखा कि वह कार्तिकस्वामी की मूर्ति का पूजन उसी प्रकार अविचल श्रद्धा से करती रही। मैं जब उसकी ओर देखता तो मुझे मावलंकर की बात याद आ जाती।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गणेश-पूजन के ६ दिन बीत चुके थे और अगले दिन "विसर्जन" था। जना बड़े उत्साह से विसर्जन की तैयारियों में लगी हुई थी। ग्राउण्ड फ्लोर में रहने वाले बाबू भाई से उसने रेड़ी माँगी और अपनी मूर्ति को सजाकर चाल के और पड़ोसियों के साथ वह गणेश-विसर्जन के लम्बे जलूस में शामिल होने के लिए निकल पड़ी। उसकी मुद्रा पर उस क्षण उत्साह सा था। मंजीरे बजाते हुए वह भी और जलूस वालों के साथ "गणपति बापा मौरिया" "गणपति बापा मौरिया" चिल्लाते हुए आगे बढ़ रही थी। जान पड़ता था जैसे वह उछल-उछल कर नृत्य करने वाले बन्धुओं के साथ अभी नृत्य में शामिल हो जाएगी। चाल से थोड़ा हटकर मैं चौराहे के पास आ खड़ा हुआ। सहस्रों नर-नारियों का उल्लास सड़क पर नाच रहा था। पार करके न जाने कहाँ से मि० मावलंकर आ पहुँचे। मेरी बगल में हाथ डालते हुए बोले "आओ हम डाक्टर साहब के पास चलें।"

मैंने कहा—"अभी तो चार ही बजे होंगे। डाक्टर क्या आ गये होंगे?"

"हाँ-हाँ, भाई, उन्हें आज जल्दी आना था, आओ भी।" और तब हम दोनों भी भीड़ में बह चले और बात की बात में डाक्टर की दुकान पर पहुँच गये। मुस्करा कर उन्होंने हमारा स्वागत किया और पूछने लगे—"आज इस वक्त कैसे?"

"यों ही जरा छुट्टी का दिन है, सोचा जलूस का उछाह ही देख लें। लेकिन, डाक्टर साहब जरा दुकान से बाहर आइये। आपको मैं कुछ दिखाऊँगा।"

आश्चर्य मिश्रित मुस्कान अब डाक्टर के चेहरे पर थी और मन से वह बाहर भीड़ में आना नहीं चाहते थे, लेकिन उस दिन की तरह ही मैंने देखा, मावलंकर ने आज भी अपने प्रभाव से उन्हें अछूता नहीं छोड़ा। डाक्टर को देखकर पटरी पर आसपास खड़े लोगों ने आगे बढ़ने का रास्ता दे दिया और तभी मावलंकर ने इंगित कर गाइतोंडे की पत्नी जना को दिखाया। उसके माथे पर लाल सिंदूर का चौड़ा-चौड़ा बिन्दा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लगा हुआ था और रेड़ी पर कार्तिकस्वामी की मूर्ति के आगे मंजीरे बजा-बजा कर "गणपति बापा मौरिया" कहकर धीरे-धीरे उछल रही थी। पंक्ति-बद्ध महाराष्ट्रियन युवकों के "लेजिम" की लय उसके पैरों में उतर आई थी। मावलंकर बोले—"डाक्टर, यह हमारी धार्मिक आस्था ही है, जो हमें मरण में भी जीवन देती है। आप चाहे विज्ञान के भूत से डरकर इसको मानें या न मानें।" मुझे किंचित् हँसी आई, और यह मावलंकर की विजय पर होने वाले आह्लाद को व्यक्त करती थी।

"हूँ। हो सकता है", डाक्टर ने दबे स्वर में कहकर सिर हिला दिया।

अब गाइतोंडे की पत्नी जना उछाह भरे जनसमूह से घिरी हुई ठीक हम लोगों के सामने आ चुकी थी। मेरे नेत्रों में तब धुंध-सा छा गया। लगा जैसे उस भूमि को जना ने ही ढँक दिया हो और "गणपति बापा मौरिया" की आवाज से सब विश्व भर गया है। मावलंकर और जलूस देखने के लिए अब रुके नहीं रहे। डाक्टर की बगल में हाथ डाल कर कहा—"आइये, अब दुकान में बैठेंगे।" भीड़ उसी प्रकार फिर छँट गई। दुकान की ओर लौटते-लौटते डाक्टर मुझसे बोले, "मैं अभी आपको कैलशियम सैन्डोज़ की शीशी दूँगा। यह आप मेरी ओर से जना को दे दीजिये, वह अब गाइतोंडे के बालक की माँ बनने वाली है।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री कमलेश्वर

कमलेश्वर जी का जन्म ६ जनवरी सन् १९३२ ई० को मैनपुरी में हुआ। उनके पिता का नाम स्व० जगदम्बाप्रसाद है। उन्होंने प्रयाग विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम०ए० किया है। आजकल वे दिल्ली से प्रकाशित होने वाली मासिक पत्रिका 'नई कहानियाँ' के सम्पादक हैं।

अब तक कमलेश्वर बाबू के 'राजा निरबंसिया', 'कस्बे का आदमी' तथा 'खोई हुई दिशाएँ'—ये तीन कथा-संग्रह, 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ', 'डाक बँगला', 'लौटे हुए मुसाफिर'—ये तीन उपन्यास तथा 'अधूरी आवाज' और 'रेगिस्तान'—नामक दो नाटक प्रकाशित हो चुके हैं। आपको ये सभी कृतियाँ हिन्दी जगत् में बहुचर्चित रही हैं। नई पीढ़ी के जिन कथाकारों ने हिन्दी-कहानी के विकास को एक नई दिशा और प्रेरणा दी है, उनमें आप अग्रणी माने जाते है।

कमलेश्वर जी विचारों और सिद्धान्तों के बड़े दृढ़ मेधावी और एक प्रतिभाशाली लेखक हैं। भारतीय वेशभूषा में प्रकृति से शीलवान कमलेश्वर जी का व्यक्तित्व प्रभावशाली है।

अत्यन्त संवेदनशील मन की गति बड़ी विचित्र होती है। 'कस्बे का आदमी' कहानी का नायक ऊपर से देखने में एक चलता-पुरजा जीव प्रतीत होता है। अवसर अनुकूल देखकर उसे वैद्य बनने में देर नहीं लगती। पर जब इस धंधे का अपने टोले मुहल्ले पर भी कोई प्रभाव नहीं पड़ता, तो वह प्याऊ पर पानी पिलाने की वृत्ति अपनाने में भी संकोच नहीं करता। जिस कुर्सी पर वह बैठता, वह यद्यपि टूटी रहती। पर समन्वय वह उससे भी स्थापित कर लेता है। कभी-कभी यदि उस कुर्सी की टीन की संधि में उनकी अपनी देह की खाल फँस जाती, तो कुर्सी के साथ-साथ वह कुर्सी देने वाले हलवाई को भी गालियाँ सुनाये बिना न मानता।

कहानी-संकेत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कालान्तर में व्यावसायिक लेन-देन में रुपये के स्थान पर वह एक तोता मात्र प्राप्त कर संतोष कर लेता है। इस तोते को वह मूक रूप से इतना स्नेह करता है कि इस विषय में कभी किसी से कहता कुछ नहीं, पर एक खिलाड़ी बालक जब उसके पंख उखाड़कर अपना मुकुट बना लेता है, तो इसी एक सामान्य घटना से उसका दिल टूट जाता है। यों तो वह कुछ दिन पहले से बीमार रहता है, तोते को कुछ तो नहीं होता, पर इस घटना के दूसरे ही दिन उसका अपना प्राण-पंछी उड़ जाता है। एक विशिष्ट चरित्र के मनोवैज्ञानिक चित्रण की दृष्टि से कमलेश्वर जी की यह एक उत्कृष्ट कहानी है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कस्बे का आदमी

सुबह पाँच बजे गाड़ी मिली। उसने एक कम्पार्टमैंट में अपना बिस्तर लगा दिया। समय पर गाड़ी ने झाँसी छोड़ा और ६ बजते-बजते डिब्बे में सुबह की रोशनी और ठंडक भरने लगी। हवा ने उसे कुछ गुदगुदाया। बाहर के दृश्य साफ हो रहे थे, जैसे कोई चित्रित कलाकृति पर से धीरे-धीरे ट्रेसिंग पेपर हटाता जा रहा हो। उसे यह सब बहुत भला-सा लगा उसने अपनी चादर टाँगों पर डाल ली। पैर सिकोड़कर बैठा ही था कि आवाज सुनाई दी, "पढ़ो पटे सित्ता रम्—सित्ताऽऽरऽम्…"

उसने मुड़कर देखा, तो प्रवचनकर्त्ता की पीठ दिखाई दी। कोई खास जाड़ा तो नहीं था, पर तोते के मालिक रुई का कोट, जिस पर बर्फ़ीनुमा सिलाई पड़ी थी और एक पतली मोहरी का पाजामा पहने नज़र आये। सिर पर टोपी भी थी और सीट के सहारे एक मोटा-सा सोटा भी टिका था। पर न तो उनकी शक्ल ही दिखाई दे रही थी और न तोता। फिर वही आवाज गूँज उठी, "पढ़ो पटे सित्तारम् सित्तारम्…"

सभी लोगों की आँखें उधर ही ताकने लग गयीं। आखिर उससे न रहा गया। वह उठकर उन्हें देखने के लिए खिड़की की ओर बढ़ा। वहाँ तोता भी था और उसका पिंजरा भी और उनके हाथ में आटे की लोई भी, जिससे वे फुर्ती से गोलियाँ बनाने जा रहे थे और पक्षी को पुचकार-पुचकार कर खिलाते जा रहे थे। पर तोता पूरा तोताचश्म ही था। उनकी बार-बार की मिन्नत के बावजूद उसका कण्ठ नहीं फूटा। गोलियाँ तो वह निगलता जा रहा था, पर ईश्वर का नाम उसकी जबान से नहीं फूट रहा था। लौटते में एक नजर उसने उन पर और डाली, तो लगा, जैसे चेहरा पहचाना हुआ है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वह अपनी सीट पर आकर बैठ गया। दिमाग पर बहुत जोर डाला पर याद नहीं आया। तभी उन्होंने तोते की ओर से दृष्टि हटाकर शिवराज की ओर देखा, अँगूठा और तर्जनी निरन्तर एक रफ्तार से अब भी गोली को शक्ल प्रदान कर रहे थे। माथे पर लहरें डालते हुए और आँखों को गोल कर कुछ अजीब निरीह-सा मुँह बनाकर वे शिवराज को सम्बोधित करते हुए बोले, "शिब्ब···शिवराज है न तू ?"

और अपना नाम उनके मुँह से सुनते ही उसे सब याद आ गया। ये तो छोटे महाराज हैं।

वे जाति के वैश्य थे, पर कर्म के कारण महाराज पुकारे जाने लगे थे। म्यूनिसपिलटी की दुकान के पास वाली इमली के नीचे बैठकर वे पानी पिलाया करते थे। कस्बे की सबसे रौनकदार जगह वही थी। वहीं कुएँ पर छोटे अपनी टाँगें तोड़े, जाँघ तक धोती सरकाये, जनेऊ डाले, चुटिया फहराये, नंगे बदन टीन की टूटी कुर्सी पर जमे रहते। गाँव वाले पानी पीकर एक-आध पैसा उनके पैरों के बीच उसी कुर्सी पर रखकर चल देते। पैसा पाकर वह सामर्थ्य-भर आशीर्वाद देते। जब एक कूल्हा दर्द करने लगता, तो दूसरी तरफ जोर डालने के लिए थोड़ा-सा कसमसाते और इसमें अगर कहीं कुर्सी ने खाल दाब ली, तो तीन-चार मिनट लगातार कुर्सी को गालियाँ देते रहते। लगे हाथों ननकू हलवाई को भी कोसते, जिसने प्याऊ के लिए यह कुर्सी दी थी।

तब छोटे महाराज की उमर कोई खास नहीं थी, यही ३५-३६ के करीब रही होगी। छोटे महाराज के बाप-दादा सोने-चाँदी का काम करते थे। काफी पुराना घर था, दुकान थी। पर जब बाप मरे, तो छोटे की उमर बहुत कम थी। माँ पहले ही स्वर्ग सिधार चुकी थीं। बाप के मरने के बाद दूर के रिश्ते की एक चाची आकर सब देख-भाल करने लगीं। फिर बहुत बड़ी-सी चोरी हुई और छोटे का घर तबाह हो गया। चाची को तीरथ की सूझी तो छोटे को साथ लेकर चल दीं। खर्चे की जरूरत पड़ने पर एक मुख्तार से जब-जब रुपये मँगवाती रहीं। छोटे साथ थे, सो रसीद भेजते रहें। आखिर जब तीरथ से वापस आये, तब पाँच-छै बरस

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उसी मकान में और रहना हुआ। फिर मुख्तार ने मूल और ब्याज के बदले एक दिन मकान कुर्क करा लिया, गवाही में छोटे के हाथ की रसीदें पेश कर दीं और औने-पौने में मकान झाड़ दिया। तब से उनकी चाची ने जनाने अस्पताल में नौकरी कर ली और छोटे बिस्कुटों का ठेला लगाने लगे और घूम-घूमकर बाजार की सड़कों पर चीखने लगे—'एक पैसे में पचास···पचास बिस्कुट इनाम···जितना लगाओगे, उतना पाओगे···'

ठेले में मैदा के छोटे-छोटे बिस्कुटों का ढेर लगा रहता। एक कोने पर एक बड़ी-सी फिरकनी रखी रहती, जिस पर नम्बर के खाने बने रहते, और उस पर एक सुई नाचती रहती। जब कोई पैसा लगाकर घुमाने वाला न मिलता, तो खड़े-खड़े स्वयं घुमाते रहते; जितना नंबर आता, उतने बिस्कुट गिनते और फिर ढेर में डालकर अनाज की तरह रोरते रहते। कभी करारे-करारे बीस-पचीस छाँट लेते, सुई घुमाते अंटी से एक पैसा निकाल कर पैसा रखने वाले फूल के कटोरे में झन्न से मारते और जितना नम्बर आता, उतने गिनकर, बाकी ढेर के सुपुर्द कर जलपान कर लेते।

लेकिन इस तरह कैसे पेट पलता। फिर एक होम्योपैथिक डाक्टर की दुकान को रोज सुबह खोलने तथा झाड़ने-पोंछने का काम ले लिया। दो-चार घरों का पानी बाँध लिया। तड़के उठकर चार-चार डोल खींचकर डाल आते और डाक्टर की दुकान की सफाई आदि करके कोने में पड़े मोढ़े पर इज्जत से दोपहर तक बैठे रहते। डाक्टर साहब की अनुपस्थिति में मरीजों के हाल-चाल पूछ लेते। कुछ देसी दवाइयों के नुस्खे बताते और जर्मन दवाइयों की अहमियत समझाते।

तभी से छोटे अपने को बहुत-कुछ, एक छोटा-मोटा वैद्य समझने लगे थे। मरीज की दशा देखते ही रोग का ऐलान कर देते। तमाम रोगों के इलाज पर उन्होंने दखल जमा लिया था। जब मोतियाबिन्द हो जाने के कारण डाक्टर साहब को दुकान बन्द कर देनी पड़ी, तो छोटे अपनी कोठरी में ही एक छोटा-सा औषधालय खोलने का मंसूबा बाँधने लगे। रतनलाल अत्तार के यहाँ से आठ-दस आने की जड़ी-बूटियाँ भी बँधवा लाये, जिन्हें घोट-पीस और कपड़छन करके सफेद शीशियों में भरा और

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ताक में सजा दिया। फसली बुखार, हरे पीले दस्त, नाक-कान-सिर-दर्द की हुक्मी दवाइयाँ बाँटने का ऐलान भी कर दिया। पर गली के परिवारों का सहयोग न मिलने के कारण उन्होंने इस नेक इरादे को छोड़ दिया। सारी हकीमी दवाइयों को थोड़ा-थोड़ा करके चूरन की पूड़ियों में मिला कर उन्होंने आखिर अपने पैसे सीधे कर लिए।

इस तरह के न जाने कितने घरेलू धंधे उन्होंने चलाये। जन्म से वैश्य होते हुए भी प्रकृति से परोपकारी होने के कारण उन्हें ब्राह्मणत्व भी प्राप्त करना ही था। इसीलिए जब गली-टोले के लड़कों ने उन्हें प्याऊ पर बैठते देखा और चमकदार काली पीठ पर जनेऊ दिखाई पड़ा, तो वंशगत भावनाओं से अनजान, कर्मगत संस्कारों के आधार पर उन्हें महराज पुकारने लगे। तभी ये छोटेलाल छोटे महराज हो गये।

जिस इमली के नीचे वह बैठते थे, उस पर दैव की कृपा से महूक ने छत्ता धर लिया, तो एक दिन अंधियारे पाख में जाकर स्टेशन के पास से एक कंजर पकड़ लाये। छत्ता बटाई पर तै हो गया। पर छोटे महराज शहद का क्या करते। चलते वक्त उसे कस दिया कि आधे दाम कल आ जायें। पर महीना भर टल गया। झोंपड़ी पर तगादा करने पहुँचे। नगद पैसे तो मिले नहीं, अच्छी-खासी डाँट लगाकर पैसों के बदले में तोता छाँट लिया। कंजर ने मिन्नत की कि तीनों तोते पेशगी दामों के हैं, इस बार जाएगा, तो उनके लिए भी पकड़ लाएगा। पर छोटे न माने, दो-चार गालियाँ सुना दीं, तैश में बोले, "मेरे पैसे क्या हराम के थे, वह भी तो पेशगी में से ही हैं, ला निकाल जल्दी इस टुइयाँ को।"

और तभी से यह तोता उनके पास है, जिसे जान की तरह चिपकाये रहते।

शिवराज ने प्रसन्नता से उन्हें देखा। 'पालांगे महाराज' कहकर बोला, "इधर निकल आयें महाराज, बहुत जगह है।"

जब वह पास आकर बैठ गये तो उसने पुछा, "झाँसी किसके यहाँ गये थे ?"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu